श्रीकृष्णकाव्यामृतम्

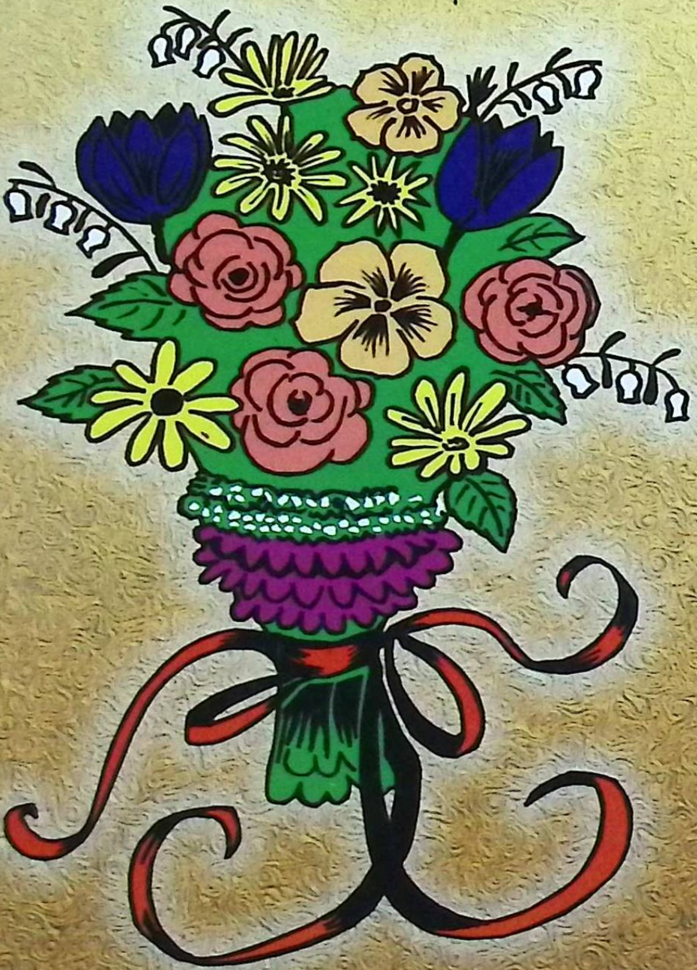

डॉ० सेमवालः

M.S. P. SHARMA
"Ashraya"
B-50 Sector 23
NOIDA (U.P)
201301

श्रीकृष्णकाव्यामृतम्

श्रीकृष्णकाव्यामृतम्

रचियता

कविरत्नम् डा० श्रीकृष्ण सेमवालः

Bhawan's Sri Sankaracharya Sanskrit Mahavidyalaya
Bharatiya Vidya
495

मौजीराम स्मृति न्यास

ए-4, रिंग रोड़, साउथ एक्स्टेंशन, भाग-1,

नई दिल्ली - 110049

Published by :

महादेवी ज्ञानकेन्द्र

A-4, Ring Road, South Extension Part-1
New Delhi-110049, INDIA

Phone : (91-11) 4636010, 30, 22
Fax : (91-11) 4636011,
E-Mail : neetabooks@vsnl.in

© All Rights Reserved by the Publishers

First Edition 2002 — 1000 Copies

Bhawan's Sri Sankaracharya Sanskrit Mahavidyalaya
U95

PRICE : 395.00

Printed in India by Gopsons Papers Ltd., Noida

प्रकाशकीय वक्तव्य

विश्व के महान् प्राङ्गण में अनेक संस्कृतियाँ उत्पन्न हुई, पल्लवित हुई, पुष्पित हुई और समय के प्रवाह में वे या तो विलुप्त हो गई या विकृत हो गई या पूर्ण रूप से परिवर्तित हो गई।

परन्तु भारतीय संस्कृति आज भी यथास्थिति विद्यमान है क्योंकि उसे संस्कृत भाषा रूपी एक महान् वटवृक्ष का आश्रय मिला है। जिसकी छत्रछाया में यह संस्कृति सुरक्षित है। इस लिए किसी विद्वान् ने उचित ही कहा है **संस्कृतिः संस्कृताश्रया**। मेरा परिवार भारतीय संस्कृति का परमपोषक धर्मप्राण परिवार रहा है, इसलिए मातृकुक्षि से ही भारतीय संस्कृति की शिक्षा दीक्षा मुझे प्राप्त हुई है। जिसके फलस्वरूप मुझे संस्कृत के प्रति प्रारम्भ से ही अतिशय अनुराग रहा। यद्यपि मुझे संस्कृत पढ़ने का अवसर नहीं मिला, परन्तु संस्कृत के प्रति श्रद्धा भाव निरन्तर रहा। मेरी मान्यता है कि संस्कृत भाषा ही एक ऐसी भाषा है जो भारत को आज भी कन्याकुमारी से हिमालय तक जोड़े हुए है। इसी भाषा के कारण सारे भारत की भावना, परम्परा तथा आचार पद्धति समान हैं। हमारी सभी भारतीय भाषाएँ एवं बोलियाँ भी इस भाषा से निकली हैं। जिस प्रकार से हिमालय से निकली गंगादि पवित्र नदियाँ भारत के विभिन्न भागों से बहती हुई भारत को हरा–भरा एवं धन्य–धान्य से सम्पन्न बनाती है उसी प्रकार हिमालय सदृश विशाल शब्द भण्डार से परिपूर्ण संस्कृत भाषा भी विभिन्न विभागों में बोली जाने वाली भाषाओं की जीवनदायिनी शब्द सम्पत्ति को प्रदान करती हुई उसे समृद्ध बनाती है। संस्कृत के इस गौरवमय स्वरूप को ध्यान में रखकर मैं संस्कृत के समस्त क्रियाकलापों से निरन्तर जुड़ा रहता हूँ। दिल्ली में ही नहीं जहाँ कहीं भी संस्कृत सम्बन्धी क्रिया कलाप

होते हैं, मैं उनमें अपनी सहभागिता करने के लिए सतत प्रयत्नशील रहता हूँ और मैने अपने प्रकाशन सम्बन्धी व्यवसाय में भी संस्कृत को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। मैने संस्कृत के ग्रन्थों के प्रकाशन में लाभ हानि की सोच छोड़कर संस्कृत को लोकप्रिय बनाने के लिए अनेक अमूल्य ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं साथ की भारतीय संस्कृति को जन–जन तक पहुँचाने की पावन भावना को ध्यान रखते हुए संस्कृत के स्तोत्र साहित्य को भी प्रकाशित किया है। संस्कृत के इस संसार में निरन्तर विचरण करते हुए मेरा साक्षात्कार अन्य संस्कृत के विद्वानों एवं संस्कृत प्रचारकों की भांति श्री श्रीकृष्ण सेमवाल से हुआ। जो संस्कृत भाषा के प्रचार–प्रसार में निरन्तर एक समर्पित कार्यकर्ता के रूप में व्यस्त रहते हैं मैने उन्हें देखा कि न उन्हें खाने की परवाह है न पहनने की। केवल परवाह है तो अपने उत्तरदायित्व को निष्ठापूवर्क निभाने की। जहाँ वे एक और निरन्तर संस्कृत के प्रचार–प्रसार में क्रियाशील है वहीं वे अपनी लेखनी के माध्यम से संस्कृत को वर्तमान में समस्त जन तक पहुँचाने की भावना से साहित्य साधना में भी लीन रहते हैं उन्होने संस्कृत के सभी पक्षों को लेकर काव्य साधन की है। मैंने जब इनकी काव्य रचनाओं को देखा तो मेरे मन में इन काव्य रचनाओं को एक संग्रह के रूप में प्रकाशित करने का विचार आया तो मैने श्री सेमवाल के समक्ष इस प्रस्ताव को रखा जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया परन्तु व्यस्तता के कारण यह प्रकाशन विलम्ब से हो रहा है। जिसका मुझे भी खेद है। मेरा विश्वास है कि संस्कृत के सभी पक्षों से संकलित 'श्रीकृष्णकाव्यामृतम्' सभी प्रकार के पाठकों को रुचिकर लगेगा।

राधेश्याम गुप्ता

आत्म निवेदन

विश्व की समस्त पुरातन संस्कृतियाँ समय के झंझावातों से विचलित होकर आज या तो विलुप्त सी हो गई है या अत्यन्त जीर्ण शीर्ण होती हुई मृत प्राय: सी दिखाई देती है परन्तु हिमालय के प्रबल जल स्रोत के कारण जिस प्रकार भारतीय गंगादि पावन नदियाँ आज भी अपने परिपूर्ण रूप में सतत प्रवहमान होती हुई भारत को सर्वतोभावेन, समृद्ध एवं पवित्र कर रही है उसी प्रकार वेद, पुराण एवं उपनिषद् आदि सम्पूर्ण शास्त्र रूपी स्रोतस्विनी संस्कृत भाषा भी भारतीय संस्कृति, भारतीय परम्परा एवं भारत के अस्तित्व को अक्षुण्ण बनाए हुए अतीत से वर्तमान तक भारत को जोड़े हुए है। आज संस्कृत भाषा में निहित ज्ञान-विज्ञान एवं जीवन दर्शन से प्रभावित होता हुआ विश्व का प्रबुद्ध मानव संस्कृत की ओर देख रहा है उसकी समृद्ध परम्पराओं को जानने के लिए उत्सुक होता हुआ भारत की ओर आकृष्ट हो रहा है।

जहाँ एक ओर संस्कृत की समकालीन विश्व-भाषाएँ लुप्त हो गई है वहीं दूसरी ओर संस्कृत भाषा आज भी विश्व में अपने वैभव सम्पन्न अस्तित्व को यथास्थिति बनाए हुए है। जिसका मुख्य कारण संस्कृत में सतत प्रवहमान रचनाधर्मिता है। प्रारम्भ से आज तक कोई भी ऐसा युग नहीं आया जिसमें संस्कृत भाषा में साहित्य नहीं लिखा गया हो। संस्कृत के कवियों ने, लेखकों ने समय के साथ चलते हुए तत्कालीन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए संस्कृत को समाज से निरन्तर को जोड़ने के लिए तदनुरूप साहित्य को समय-समय पर लिखकर देववाणी की श्री वृद्धि की है। आज भी यदि सर्वेक्षण किया जाये, तो अन्य भारतीय भाषाओं की अपेक्षा संस्कृत भाषा में सर्वाधिक साहित्य लिखा जा रहा है। संस्कृत की इस महनीय परम्परा को ध्यान में रखते हुए मुझ अकिञ्चन ने भी संस्कृत को समाज से निरन्तर जोड़ने की भावना से तत्कालीन सामाजिक परिवेश के अनुरूप अपनी रचनाधर्मिता को आयाम देते हुए जहाँ एक ओर प्रियदर्शिनीयम्, भीमशतकम्, संघे शक्ति: कलौ युगे एवं हिमाद्रिपुत्रामिनन्दनम् काव्यों की रचना की है वहीं दूसरी ओर मैंने आध्यात्मिक चिन्तन

की भावभूमि भक्ति का आश्रय लेकर माँ जगदम्बा, रामभक्त हनुमान् एवं आशुतोष भगवान् शिव की आराधना में भक्तिपरक 'भक्तिरसामृतम्' एवं 'विन्सरस्तोत्ररत्नावलिः' नामक काव्यों की रचना की है। दीर्घकाल से शासन में प्रशासनिक कार्यों में अनेक प्रिय एवं अप्रिय अनुभवों से गुजरते हुए अपनी दर्द भरी व्यथा को व्यक्त करने के लिए मैंने अन्योक्तियों का सहारा लिया, जिसके फलस्वरूप पाठकों के समक्ष मैं 'वाग्वैभवम्' नामक काव्य प्रस्तुत कर पाया। जिसका प्रत्येक पद्य मेरी पीड़ाओं का प्रत्यक्षदर्शी है। किसी भी साहित्य की पूर्णता उसके सभी पक्षों को लेकर ही होती है महाकवि भर्तृहरि में अपने 'शतकत्रयम्' में नीति श्रृंगार एवं वैराग्य को माध्यम बनाकर जीवन के सत्य को समाज के सामने प्रस्तुत किया है, मैंने भी अन्योक्ति, भक्ति के साथ-साथ अनुरक्ति को भी सम्मिलित करना आवश्यक समझते हुए अनुरक्तिपीयूषम्' नाम से एक काव्य रचना की है। जिसमें प्रेम के सभी पक्षों का विशद वर्णन करके संस्कृत साहित्य को एक परिपूर्ण प्रेम काव्य प्रदान किया है।

संस्कृत शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए दिल्ली सरकार ने सन् 1975 में एक पाठ्य पुस्तक रहित संस्कृत शिक्षण योजना प्रारम्भ की थी। उस परियोजना में कक्षा के समस्त परिवेश में केवल मात्र संस्कृत माध्यम से ही व्यवहार करना परमावश्यक था। अन्य भाषाओं का प्रयोग करना पूर्ण रूप से वर्जित था। इस कार्य के लिए दस शिक्षकों में मुझे भी चुना गया था। कक्षाओं के लिए निर्धारित पाठ्यक्रमादि बनाया गया। उसमें व्याकरण पढ़ाने की जब बात आई तो 'रामो राजमणिः' के इस श्लोक के आधार पर विषय-वस्तुपरक स्वाभाविक व्याकरण के पाठ बनाने थे। जिससे छात्र व्याकरण तो पढ़े परन्तु उसे यह बोध न हो सके कि मुझे प्रारम्भ में ही पूर्व परम्पराओं के अनुसार व्याकरण की ओर धकेला जा रहा है तदनुसार उस चुनौती भरे कार्य को स्वीकार करते हुए मैंने सभी प्रमुख व्याकरण बिन्दुओं को एक ही छन्द में व्याकरण के विषय-वस्तुपरक श्लोकात्मक पाठों की रचना कर डाली, जो उस समय अत्यन्त लोकप्रिय हुई थी। बच्चों

ने बड़े मनोयोग से उन्हें हृदयंगम किया था। जिसे 'व्यावहारिक संस्कृतम्' नाम से पुस्तक रूप में प्रकाशित किया गया। इनके साथ ही अनेक लघु कविताएं भी समय-समय पर मैंने लिखी हैं। इन सभी रचनाओं का संग्रह "श्रीकृष्ण काव्यामृतम्" नाम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। आशा है कि पाठक-जन इस संग्रह को अपना-स्नेह प्रदान करेंगे।

इन काव्य रचनाओं में भक्तिपरक काव्य 'भक्तिरसामृतम्' का हिन्दी भाषा में भावानुवाद श्रीमती सुधा शर्मा, का. प्राचार्या, ब्रह्मर्षि रामप्रपन्नाचार्य संस्कृत वेद वेदांग महाविद्यालय, राजघाट, नई दिल्ली ने किया एवं 'विन्सरस्तोत्ररत्नावलिः' का हिन्दी अनुवाद डॉ. जीतराम भट्ट उप सम्पादक/उप सचिव (प्रकाशन) दिल्ली संस्कृत अकादमी एवं हिमाद्रिपुत्रामिनन्दनम् का हिन्दी अनुवाद श्री रमेशचन्द्र शास्त्री, पूर्व आचार्य श्रीमद् दयानन्द गुरुकुल संस्कृत महाविद्यालय, खेड़ा खुर्द ने लगभग 22 वर्ष पूर्व किया था अन्य भागों के अनुवाद में अनेक मित्रों ने सहयोग प्रदान किया है एतदर्थ मैं इन सभी महानुभावों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। साथ ही इस ग्रन्थावलि के प्रकाशन का गुरुतर भार 'मौजीराम स्मृति न्यास' के उदार एवं सहृदय अध्यक्ष श्री राधेश्याम गुप्ता ने स्वीकार कर मेरे ऊपर महती कृपा की है उनके प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

मेरे इस रचना संसार में मेरे परिवार के सदस्य मेरी धर्मपत्नी श्रीमती बिन्दु सेमवाल मेरे सुपुत्र आयुष्मान् प्रिय जयवर्द्धन एवं सव्यसाची तथा आयुष्मती पुत्री कु. पुण्यरोचना का सहयोग एवं आत्मीयभाव अविस्मरणीय है, साथ ही मेरे समस्त कार्यालयीय सहयोगियों का स्नेह भी इस कार्य में मेरा सतत पाथेय रहा है। उनके प्रति भी अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

कार्यालयीय जीवन की व्यस्तता में इन रचनाओं में यदि भाषागत, भावगत एवं प्रूफ संशोधन की कोई त्रुटि रह गई हो तो विज्ञजन मुझे क्षमा करें।

आदर सहित

आपका

श्रीकृष्ण सेमवाल

वसन्त पञ्चमी
दिनांक : 17-2-2002

विषय-सूची

1. भक्तिरसामृतम् ---------------- 1-108

2. विन्सरस्तोत्रम्रलावलिः ------- 109-140

3. वाग्वैभवम्---------------- 141-202

4. अनुरक्तिपीयूषम् ------------ 203-236

5. संघे शक्तिः कलौ युगे------- 237-272

6. भीमशतकम्--------------- 273-302

7. प्रियदर्शिनीयम् ------------- 303-369

8. हिमाद्रिपुत्राभिनन्दनकाव्यम्----- 370-407

9. परिशिष्टम् ---------------- 408-420

भक्तिरसामृतम्

1. ईश-प्रार्थना

2. सरस्वती-वन्दना

3. हनुमत्सुप्रभातम्

4. वर्णात्मकभगवतीसुप्रभातम्

5. कामना

6. सर्वमङ्गलाशतकम्

7. कात्यायनीस्तवः

8. ज्वाल्पादेवी भुविभगवती भासतां मे सुमाता

ईश-प्रार्थना

(1)

समे सम्भूय संयामः।
प्रभोः गीतानि गायामः॥

महान्तं सृष्टिकर्त्तारं,
मुनीनां चिन्तनाधारम्।
गुणानां सागरं वन्द्यं
विभुं शरणं समायामः॥

हम सब मिलकर प्रभु की शरण में जाते हैं एवं उनका गुणानुवाद करते हैं। महान् सृष्टि के सृजन करने वाले, ऋषियों के चिन्तन के आधारस्वरूप, गुणों के सागर, वन्दनीय, प्रभु की शरण में हम जाते हैं।

(2)

समे सम्भूय संयामः।
प्रभोः गीतानि गायामः॥

प्रभो मे राष्ट्रसेवायाम्,
परित्राणे च दीनानाम्।
व्यतीयाज्जीवनं सर्वम्,
भवेत्पूर्णस्तु मे कामः॥

हम सब मिलकर प्रभु की शरण में जाते हैं। एवं उनका गुणानुवाद करते हैं। हे भगवन्! मेरा सम्पूर्ण जीवन राष्ट्रसेवा तथा दीनों के दुःख दूर करने में व्यतीत हो। मेरी सभी मनोकामनाएँ पूर्ण हों।

(3)

समे सम्भूय संयामः।
प्रभोः गीतानि गायामः॥

अरीणां दुष्टदैत्यानाम्,
जनानां हितविघातानाम्।
विनाशार्थं प्रदेयो नः,
प्रभो परमो बलग्रामः॥

हम सब मिलकर प्रभु की शरण में जाते हैं एवं उनका गुणानुवाद करते हैं। हे भगवन्! शत्रुओं, दुष्ट दैत्यों एवं जन-सामान्य के हित का नाश करने वालों के विनाश हेतु हमें परमबल दीजिए।

(4)

समे सम्भूय संयामः।
प्रभोः गीतानि गायामः॥

वयं चपला अबोधाः स्मः,
त्वदीया बालकाः भगवन्!
सुमार्गं प्राप्तुमिच्छामः,
तव स्नेहेन जीवामः॥

हम सब मिलकर प्रभु की शरण में जाते हैं एवं उनका गुणानुवाद करते हैं। हे भगवन्! हम चंचल एवं अज्ञानी आपके बालक सन्मार्ग को पाना चाहते हैं तथा आपके स्नेह से ही हम जीवन जी रहे हैं।

प्रभोः सम्भूय संयामः।
प्रभोः गीतानि गायामः॥

हे प्रभो हम सब मिलकर आपका गुणगान करते हुये आपकी शरण में जाते हैं।

सरस्वती-वन्दना

(1)

वीणानिनादिनि देवि मातः शारदे शुभदे शुभे,
सौख्यप्रदायिनि बुद्धिदात्रि स्नेहदे सुखदे प्रभे।
हे ज्ञानदे वरदे प्रिये विद्याविभाविभुवल्लभे,
साहित्यवारिधिमज्जने मतिदे शिवे मतिदे हि मे॥

वीणावादन करने वाली, कल्याण प्रदान करने वाली, मङ्गल रूपवाली, बुद्धि-स्नेह-सुख एवं सम्पत्ति को देने वाली, ज्ञान एवं इच्छित फल देने वाली, विद्यारूपी वैभव की अधिष्ठात्री, साहित्यरूपी सागर में अवगाहन करने वाली, कल्याणि हे देवि माँ सरस्वति! मुझे सद्बुद्धि दो।

(2)

अज्ञाननाशिनि भव्यभाषाभाषिणि प्रबलेऽबले,
विद्याविलासिनि शुभ्रवस्त्रे शास्त्रसारसुसारिणि।
कर्त्तव्यकर्मविभाविनि ध्रुवधर्मकर्मविबोधिनि,
मातःसरस्वति पाहि मां शरणागतं शरणप्रदे॥

अज्ञान के नाश को करने वाली, दिव्य भाषा को बोलने वाली अत्यन्त बलबाली, विद्यारूपी विलास वाली, शुभ्रवस्त्रों को धारण करने वाली, शास्त्रों के तत्वों को जानने वाली, कर्तव्यरूपी कर्म के उद्बोधन करने वाली, एवं सभी प्राणियों को शरण देने वाली माँ सरस्वति! मुझ शरणागत की रक्षा करो।

(3)

धर्मार्थचिन्तनसंरते कविताकलाकलितेश्वरि,
संगीतगीतिसुगायिनि प्रतिभाप्रदानपरायणे।
हंसासने सुविराजिते सकलाश्रये जनमोददे,
मातः सरस्वति पाहि मां शरणागतं शरणप्रदे॥

धर्मार्थ-चिन्तन में संलग्न, कवितारूपी कला को प्रकट करने वालों में मूर्धन्य, सम्यक्रूपेण गीत-संगीत को प्रस्तुत करने वाली प्रतिभा प्रदान परायण, हंसासन पर सुप्रतिष्ठित, प्राणिमात्र को हर्ष प्रदान करने वाली, संपूर्ण जगत् की आश्रयभूता माँ मुझ शरणागत की रक्षा करो।

(4)

संसारबन्धनमुक्तिदे युक्तिप्रदे मुक्तिप्रदे,
हे हे दयामयि शक्तिदे भक्तप्रिये भक्तिप्रदे।
मायाममत्वविनाशिनि प्रज्ञापरे सन्मार्गदे,
मोहान्धकारनिमज्जितं मां पाहि हे सद्बुद्धिदे॥

भवबन्धन से मुक्ति देने वाली, युक्ति, मुक्ति, शक्ति एवं भक्ति को देनेवाली, माया एवं ममता का नाश करने वाली, उत्कृष्ट ज्ञानवाली सन्मार्ग को प्रदान करने वाली, एवं उत्कृष्ण बुद्धि को देने वाली, भक्तों की प्रिय दयामयि हे माँ सरस्वति! मोहरूपी अन्धकार में निमग्न मेरी रक्षा करो।

हनुमत्सुप्रभातम्

(1)

प्रणम्य देवं जगदेकनाथं,
लिखामि भक्त्या भुवि यस्य गीतम्।
स सर्वदा सौख्यकरः कपीन्द्रः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

विश्व के एकमात्र स्वामी परब्रह्म परमात्मा को प्रणाम करते हुये पृथ्वी पर मैं भक्तिपूर्वक जिनका गुणानुवाद कर रहा हूँ ऐसे सुखदायक श्री हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(2)

समस्त विश्वस्य विकासकर्तुः,
प्रभोर्गुणानां पदपङ्कजानाम्।
अनन्यभक्तः प्रियरामदूतः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

संपूर्ण संसार के विकास को करने वाले, प्रभु के गुणों तथा चरणारविन्दों के अनन्यभक्त श्रीराम के प्रियदूत श्री हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(3)

प्रयान्ति बाधाः मनुजस्य सर्वाः,
पवित्रपुण्यस्मरणेन यस्य।
स माननीयो हनुमान् मदीयः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

जिनके पवित्र पुण्य स्मरण मात्र से मनुष्य की सभी बाधायें दूर हो जाती हैं, ऐसे माननीय मेरे प्रिय श्री हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(4)

गुरोः प्रतिष्ठापरिरक्षणेऽयं,
रतः सदाचारपरम्परायाम्।
निशाचराचारविनाशदक्षः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

गुरु की प्रतिष्ठा की रक्षा में एवं सदाचार के मार्ग के अवलम्बन में निरत, राक्षसी आचार–व्यवहार के उन्मूलन में दक्ष श्री हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(5)

विभिन्नकष्टैः परिपीडितोऽपि,
समर्थितो न्यायपथश्च येन।
स रामभक्तो गुरुकार्यशक्तः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

विविध कष्टों से पीड़ित होने पर भी जिसने न्यायपथ का ही आश्रय लिया है, ऐसे श्री रामभक्त, बड़े से बड़े कार्य को करने में समर्थ श्री हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(6)

विनम्रनम्रो मृदुलस्वभावो,
जितेन्द्रियोऽयं गुणरत्नराशिः।
प्रियाञ्जनेयः प्रियरामदूतः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

अत्यन्त विनम्र, मृदु स्वभाव वाले, जितेन्द्रिय, गुणरूपी रत्नों की खान अञ्जना के प्रियपुत्र श्रीराम के प्रियदूत श्री हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(7)

जगद्धितार्थं प्रभुकार्यपूर्त्यै,
शिवांशभूतो वसुधावतीर्णः।
कपिस्वरूपः प्रियवायुसूनुः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

संसार के कल्याण एवं प्रभु श्री रामचन्द्र जी के कार्य सम्पादन-हेतु भगवान् शंकर के अंश रूप में पृथ्वी पर अवतरित कपिस्वरूप वायुपुत्र श्री हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(8)

प्रियाञ्जनागर्भसमुद्भवो यो,
विराजते केसरिणः सुपुत्रः।
स सर्वदा सर्वविधः सुयोग्यः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

अञ्जना के गर्भ से उत्पन्न जो केसरीनन्दन के रूप में इस पृथ्वी पर विराजमान हैं, ऐसे सभी प्रकार से सुयोग्य हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(9)

कुतूहलेनैव सुबाल्यकाले,
दिवाकरस्यास्य नु भक्षकोऽयम्।
धरातमस्काण्डकरः कपीन्द्रः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

बाल्यकाल में कुतूहलवश सूर्य के भक्षण करने से पृथ्वी को घनघोर अंधकारमय बनाने वाले कपीन्द्र श्री हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(10)

घनान्धकारे परिवीक्ष्य विश्वं,
दिवौकसश्चापि भयेन चैनम्।
स्तुवन्ति भक्त्या कपिरेष लोके,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

संसार को चारों ओर से घोर अन्धकार में देखकर भयभीत हुए देवताओं ने भी जिनकी भक्तिपूर्वक स्तुति की। ऐसे कपिस्वरूप श्री हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(11)

निवेदनेनैव विमोचितोऽसा-
वनेन सूर्यः स्वमुखारविन्दात्।
मनोविनोदी स महाप्रतापी,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

देवताओं की प्रार्थना करने पर ही जिसने अपने मुखारविन्द से सूर्य को छोड़ दिया था ऐसा मनोविनोद करने वाले महाप्रतापी हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(12)

परिस्थितिज्ञः परमप्रवीणः,
पवित्रमित्रानुचरो विचित्रः।
अतीवचित्रः कपिरत्र तत्र,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

परिस्थिति को समझने में अतिचतुर, पवित्र-मित्रों का विचित्र सेवक, अत्यन्त आश्चर्यकारी हनुमान् मेरे प्रभात को मंगलमय करें।

(13)

सुपात्रपात्रातिपवित्रपङ्क्त्याः,
परम्परापालनपालकोऽयम् ।
प्रियातिपूज्यः पवनस्य पुत्रः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

सुपात्रों की परम्परा की अग्रिम पंक्ति में प्रतिष्ठित, मर्यादाओं का निर्वाह करने वाले, प्रिय जनों में भी पूजनीय पवनपुत्र हनुमान् जी मेरे प्रभात को मंगलमय करें।

(14)

धियानिबद्धः प्रतिपन्नबुद्धिः,
प्रबुद्धचित्तः प्रतिबद्धभावः।
अतीवसूक्ष्मेक्षणवान्कपीशः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

एकाग्र बुद्धि वाले, प्रतिभा सम्पन्न, सावधान चित्त वाले, समर्पित भावना से काम करने वाले, बारीकी से कार्य को देखने व समझने वाले हनुमान् जी मेरे प्रभात को मंगलमय करें।

(15)

नृपस्य सुग्रीववरस्य मन्त्री,
धियापि वाण्यापि च कर्मणापि।
विनीतभावो हनुमान् कपीन्द्रः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

बुद्धि वाणी और कर्म से राजा सुग्रीव का निष्ठावान् मन्त्री, नम्र स्वभाव- वाले हनुमान् जी मेरे प्रभात को मंगलमय करें।

(16)

स्वकीयराज्ञो भयनाशनाय,
द्विजस्य रूपे वनवासिनौ तौ।
गतो हि द्रष्टुं कपिरत्र योऽसौ,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

जो अपने राजा सुग्रीव के भय को दूर करने के लिये ब्राह्मण का रूप धारण कर वनवासियों के वेशधारी श्रीराम और लक्ष्मण से मिलने गये। ऐसे कपिस्वरूप श्री हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(17)

स्थितिश्च जातिर्विनयेन येन,
तयोस्तदानीं कपिनात्र पृष्टा।
स एव बुद्धेः परमं निधानं,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

इस अवसर पर श्री हनुमान् जी ने अत्यन्त विनम्रभाव से श्रीराम एवं लक्ष्मण से उनकी स्थिति एवं जाति के बारे में पूछा। ऐसे बुद्धि के परमनिधान कपीश्वर मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(18)

अयं प्रभू राम इतीव मत्वा,
मुदं गतोऽयं कपिरेष तत्र।
स एव सर्वत्र समानशीलः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

"यह प्रभु श्री राम हैं" ऐसा जानकर जो वानराधीश अत्यन्त प्रसन्न हुए। सर्वत्र समान स्वभाव वाले ऐसे श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(19)

सुयोजितानेन शुभेन साकं,
नृपस्य सुग्रीववरस्य मैत्री।
प्रियः सखाऽयं स हि वायुपुत्रः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

जिन मङ्गलकारी हनुमान् जी ने राजा सुग्रीव की मित्रता प्रभु श्री राम जी के साथ करवायी। ऐसे पवनसुत श्री राम जी के प्रिय सखा हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(20)

व्यथां समाकर्ण्य च मानुषीं तां,
कपिस्तदा कोसलनन्दनस्य।
समर्पितात्मा सदयः स तस्मै,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

कोसलनन्दन श्रीरामचन्द्र जी की उस मानुषी पीड़ा को सुनकर, दयार्द्र हो प्रभु की कार्यसिद्धि हेतु जिसने प्रभु श्री राम के चरणों में आत्मसपर्पण कर दिया है। ऐसे श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(21)

विदेहजान्वेषणबद्धभावो,
गतो नदीग्रामवनादिकेषु।
स एव रामार्पितजीवनोऽयं,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

माँ सीता की खोज में दृढ़ संकल्प जो हनुमान् कार्य-सिद्धि के लिए नदी, ग्राम, वन इत्यादि में निकल पड़ा हो, ऐसे श्रीराम के चरणों में ही समर्पित जीवन वाले श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(22)

गभीरविस्तीर्णविशालसिन्धुः,
विलंघितो येन विना श्रमेण।
स एव शक्तः प्रियरामभक्तः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

अथाह विशाल समुद्र को बिना किसी कष्ट के सरलतापूर्वक लांघने वाले, परमसमर्थ श्रीराम के प्रियभक्त हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(23)

विदेहजान्वेषणतत्परो यो,
गतः कपीशो रमणीयलंकाम्।
स एव धीरो बलबुद्धियुक्तः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

विदेहराजपुत्री सीता जी की खोज करते हुये जो कपीश सुन्दर लंका में प्रविष्ट हो गये। ऐसे बुद्धिमान्, धैर्यवान् एवं बलवान् श्री हनुमान् मेरे प्रभात को नित्य ही मंगलमय करें।

(24)

विभिन्नबाधापरिबाधितोऽपि,
विना भयेन प्रभुकार्यसिद्ध्यै।
गतः कपीशो रिपुदुर्गलंकां,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

विविध बाधाओं से आक्रान्त होने पर भी प्रभु श्रीराम के कार्य की सिद्धि हेतु जो वानराधीश निर्भीक होते हुए शत्रु के दुर्ग में प्रविष्ट हो गये। ऐसे श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(25)

विदेहपुत्र्याः परितापशान्त्यै,
प्रतीकरूपां प्रभुमुद्रिकां यः।
संगृह्य लंकां प्रति संगतः सः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

जो श्री हनुमान् प्रतीक स्वरूप प्रभु श्री राम की राम-नाम से अंकित अंगूठी को लेकर विदेह पुत्री माँ सीता के कष्ट की शांति हेतु लंका में गये। ऐसे श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(26)

विशालरूपोऽपि लघुस्वरूपे,
गतः समीपं जनकात्मजायाः।
विनम्रभावी स विभोः सखाऽयं,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

विराट स्वरूप होने पर भी लघुरूप में जनक-नन्दिनी माँ सीता के समीप जाने वाले प्रभुसखा, विनीत श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(27)

अपूर्वसंकल्पसमर्पितोऽसौ,
प्रणम्य सीतामरिदुर्गबद्धाम्।
विनम्रवाचा शमदः कपिस्तां,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

रिपु के दुर्ग लंका में कैद की हुयी सीता जी को प्रणाम करके उन्हें विनीतवाणी से सान्त्वना देने वाले अपूर्व संकल्प के प्रति समर्पित श्री हनुमान् जी मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(28)

अशोकशोकाकुलकाननेऽत्र,
क्षुधाप्रशान्त्यै फलभक्षको यः।
प्रताडितो राक्षससैनिकैः सः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

अपनी क्षुधाशान्ति के लिये ध्वस्त की गई अशोक वाटिका में फलभक्षक जिन हनुमान् जी को राक्षस–सैनिकों ने प्रताड़ित किया। वे मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(29)

कृतञ्च येनाकुलितं समस्तं,
निहत्य लंकापतिपुत्रमत्र।
स वानरो वीरवरो वरेण्यः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

लंकाधिपति रावण के पुत्र को मारकर समस्त राक्षसकुल को व्यघित करने वाले महाप्रतापी श्रेष्ठ कपीश श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(30)

सभास्थले कोपविशेषवक्रः,
प्रताडितो रावण एष येन।
स साहसी सर्वसमर्थशाली,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

क्रोधान्ध रावण को जिन्होंने उसकी राजसभा में ही अपनी वाक्पटुता से प्रताड़ित किया, ऐसे सर्वसामर्थ्यशाली, परमसाहसी श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(31)

स्वपुच्छदाहस्य निदेशकाले,
न भीतिमाप्तः सदसि ध्रुवं यः।
स धीरवीरः प्रियवायुसूनुः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

राजसभा में अपनी पूंछ को जलाये जाने के रावण के आदेश को सुनने पर भी जो लेशमात्र भयभीत नहीं हुये। ऐसे धीर, वीर वायु के प्रिय पुत्र श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(32)

प्रदीप्तपुच्छे सति यः प्रयातः,
सुवर्णलंकादहनाय शीघ्रम्।
स भीमरूपो रिपुदुर्गहन्ता,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

पूंछ के जलते ही जो शीघ्रतापूर्वक सुवर्णलंका को जलाने के लिये चले गये। ऐसे भयंकर रूप वाले तथा शत्रु के दुर्ग लंका को नष्ट करने वाले श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(33)

अत्रानिलेन त्वनलस्य योगः,
प्रियानुरागेण कृतोऽस्य यस्य।
स वह्निबन्धुः पवनस्य पुत्रः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

लंका-दहन के समय जिस वायु ने अग्नि का सप्रेम सहयोग दिया, ऐसे अग्निमित्र, पवनपुत्र श्री हनुमान् प्रतिदिन मेरे प्रभात को मंगलमय करें।

(34)

विभीषणस्थानमनेन हित्वा,
कृतञ्च लङ्कादहनं समस्तम्।
स एव कालोऽखिलराक्षसानां,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

विभीषण के घर को छोड़कर जिन्होंने संपूर्ण लंका को जला दिया, ऐसे समस्त राक्षसकुल के लिये कालस्वरूप श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(35)

पवित्रसंदेशमसौ जनन्याः,
द्रुतं समादाय ततः कपीन्द्रः।
विभोः सकाशं समनुप्रयातः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

जो वानराधीश लंका से माँ सीता का पवित्र संदेश लेकर शीघ्र ही प्रभु श्री राम के सम्मुख उपस्थित हुये। ऐसे श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(36)

शुभाशिषा कोसलनन्दनेन,
कृतज्ञता यं प्रति दर्शितात्र।
अतीवधन्यः स हि रामदूतः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

मंगलमय आशीर्वाद परक प्रभु श्री राम के कृतज्ञता ज्ञापन से जिन्होंने अपने को अति धन्य माना। ऐसे रामदूत श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(37)

महारणे रावणसैन्यमुख्यैः,
छलेन बद्धा निजनागपाशैः।
चमूः प्रभोः येन विमोचिता सः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

भयंकर युद्ध में रावण की सेना के प्रमुख योद्धाओं द्वारा अपने नागपाश से छलपूर्वक बांधी गई प्रभु की सेना को छुड़वाने वाले श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(38)

महाभटानामतिघोरघोरे,
प्रचण्डयुद्धेऽप्रतिमोभटोऽयम् ।
महाबली शक्तिधनः कपीशः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

परमवीर योद्धाओं के भयंकर युद्ध में अद्वितीय योद्धा, शक्तिशाली, महाबली श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(39)

रणाङ्गणे यः कवचेन तुल्यः,
सदैव रामेण सह स्थितोऽत्र।
स एव निष्ठापरकः कपीन्द्रः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

रणक्षेत्र में जो प्रभु श्री राम के साथ निरन्तर कवच के रूप में रहे। ऐसे परमनिष्ठावान् श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(40)

महाहवेऽत्राहतलक्ष्मणस्य,
व्यथामपाकर्तुमसौ प्रवृत्तः।
परोपकारी हनुमान् दयालुः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

महायुद्ध में घायल हुये लक्ष्मण की पीड़ा को दूर करने में संलग्न परोपकारी एवं दयालु श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(41)

कनिष्ठबन्धोः प्रियजीवनार्थं,
प्रभोः समक्षीकृत आशु येन।
सुषेणवैद्योऽपि तदैव सोऽयं,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

प्रभु श्रीराम के कनिष्ठबन्धु के प्रिय जीवन की रक्षा के लिये जिन्होंने शीघ्र ही सुषेण वैद्य को प्रभु के सम्मुख उपस्थित कर दिया, ऐसे श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(42)

अहो समुत्पाट्य नगो विशालः,
समर्पितस्स्वामिपदेषु येन।
स एव भक्त्याः परमप्रतीकः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

जिन्होंने संजीवनी औषधि वाले विशाल पर्वत को उखाड़ कर अपने स्वामी श्रीराम के चरणों में अर्पित कर दिया। भक्ति के परमप्रतीक ऐसे श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(43)

हृतो निशायामहिरावणेन,
छलेन यः सानुजरामचन्द्रः।
ततोऽप्ययं मुक्तिप्रदः कपीन्द्रः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

अहिरावण द्वारा रात्रि में छलपूर्वक अनुज सहित श्रीराम को हरण करके पाताल में ले जाये जाने पर वहां से भी लक्ष्मण सहित प्रभु श्रीराम को मुक्त करवाने वाले श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(44)

रणाङ्गणे येन कपीश्वरेण,
विपक्षसेना परिमर्दितात्र।
स आञ्जनेयः प्रभुकार्यलग्नः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

महायुद्ध में शत्रु की सेना को कुचलने वाले, प्रभु के कार्य में संलग्न अञ्जना-पुत्र श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(45)

रणे गतोऽयं ननु यत्र यत्र,
रिपुर्गतस्तत्र भयेन दूरम्।
भयङ्करशशत्रुवधे प्रवीणः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

महाबली हनुमान् युद्ध में जिस-जिस ओर भी गये, उस-उस ओर से शत्रु भयभीत हो दूर चले गये। ऐसे भयंकर शत्रुनाशक श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(46)

प्रतापतापानलदग्धसेना,
रणाङ्गणाद् धावति यस्य भीत्या।
महाप्रतापी हनुमान् स एव,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

जिनके प्रताप के ताप की अग्नि से जली हुयी शत्रुसेना युद्ध स्थल से भयभीत हो भाग जाती है, ऐसे महाप्रतापी श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(47)

विभाति छायेव समस्तयुद्धे,
प्रभोः सकाशं रघुनन्दनस्य।
कपीश्वरो यः स च मित्रवर्यः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

संपूर्ण युद्ध में रघुनन्दन प्रभु श्रीराम के साथ छायावत् सुशोभित रहने वाले प्रभु के परममित्र कपीश्वर मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(48)

अजस्रमत्यन्तविनीतभावैः,
पवित्रवाचा च मुदा हृदापि।
प्रभोर्गुणान्गायति यः कपिः सः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

निरन्तर अतिविनम्र भाव से, पवित्रवाणी एवं प्रसन्नचित्त से स्वामी का गुणानुवाद करने वाले श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(49)

मुखेऽपि रामो हृदयेऽपि रामो,
विभाति कार्येष्वपि यस्य रामः।
कपीश्वरो राममयः स एव,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

जिनके मुख में, हृदय में एवं सभी कृत्यों में श्रीराम ही राम विराजमान हैं, ऐसे राममय कपीश्वर श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(50)

अनारतं नृत्यति यस्य भक्त्या,
प्रभोश्चरित्रं रसनाग्रभागे।
स रामपादाब्जगुणानुरक्तः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

जिनकी जिह्वा के अग्रभाग में निरन्तर प्रभु का चरित भक्तिपूर्वक नर्तन करता है, ऐसे श्रीराम के चरणारविन्दों के गुणों में अनुरक्त श्री हनुमान् मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

(51)

करोमि भक्त्या कविसेमवालः,
स्तुतिं कपीशस्य शुभस्य यस्य।
प्रभोस्सखाऽयं पवनात्मजः सः,
करोतु नित्यं मम सुप्रभातम्॥

मैं श्रीकृष्ण सेमवाल कल्याणकारी जिन श्री हनुमान् की भक्तिपूर्वक स्तुति कर रहा हूँ, ऐसे प्रभु श्री राम के मित्र पवनसुत मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करें।

"वर्णात्मकभगवतीसुप्रभातम्"

(1)

अत्युत्तमामृतमयी मधुरामरा या,
दिव्यार्कमण्डलनिभार्णवमध्यसंस्था।
पीयूषपूर्णलहरी जगदम्बिका सा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

जो माँ अमृतमयी, परमोत्तमस्वरूपिणी, मधुर एवं अमरत्वमयी, जगज्जननी देवी देदीप्यमान सूर्य मण्डल में तेजपुंज के मध्य स्थित है, वह संसार में मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(2)

आदित्यपूजितपदा परमादिशक्तिः,
व्योम्निस्थिता सुरगणार्घसमर्चिता या।
आद्यक्षरापि सकलापि सनातनी सा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

सूर्यादि ग्रहों द्वारा पूजितचरणों वाली, सुरवृन्द द्वारा प्रदत्त अर्घ्य से पूजित, सनातनी, चराचर समस्त जगत्स्वरूपिणी, द्युलोक-निवासिनी, ओंकाररूपिणी परमादिशक्ति भगवती संसार में मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(3)

इन्दीवराननपरा कलिकल्मषघ्नी,
यास्तीष्टदा भुवनभीतिहरा प्रसिद्धा।
सा चेन्द्रनीलसमरूपधरा भवानी,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

कमलाननस्वरूपिणी, भवभयहारिणी, कलिकल्मषनाशिनी, अभीष्ट-फलप्रदायिनी, इन्द्रनीलमणितुल्यरूपधारिणी, लोकप्रसिद्ध माँ भवानी संसार में मेरे प्रभात को सदा मंगलमय करे।

(4)

ईर्ष्यादिदोषरहिता समदृष्टियुक्ता,
सर्वात्मना सकलमानवमन्त्रपूता।
मायाममत्वमहिमापगतस्पृहेयं,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

ईष्यादि दोषों से परे समदृष्टि सम्पन्न, सर्वात्मभावयुत, ऋषि-मुनियों द्वारा मन्त्र शक्ति से जागृत, माया-ममता-महिमा आदि से निस्पृह माँ जगदीश्वरी संसार में मेरे प्रभात को सदा मंगलमय करे।

(5)

उद्यत्सहस्रकिरणात्मकसूर्यतुल्या,
यस्याः प्रभा किरति सर्वविधं प्रकाशम्।
तस्याः पवित्रचरणाम्बुजधूलिरेषा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

सहस्रकिरणों वाले देदीप्यमान सूर्य के सदृश जिसकी कान्ति सर्वविध प्रकाश को फैलाती है। ऐसी परमेश्वरी माँ के चरणारविन्दों की यह रेणु इस संसार में मेरे प्रभात को सदा मंगलमय करे।

(6)

ऊर्जस्विनी भगवती रिपुदर्पहन्त्री,
तेजोमयी सुरगणाश्रयदायिनी या।
चन्द्रोज्ज्वला परमदीप्तिमतीश्वरी सा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

ऊर्जस्विनी, रिपुदर्पविनाशिनी, देवगणों की आश्रयस्थली, चन्द्रोज्ज्वलस्वरूपिणी, परमदीप्तिमती, तेजोमयी माँ भगवती इस संसार में मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(7)

ऋद्धिप्रदा शुभमतिः सरलस्वभावा,
सन्तोषतोषपरितोषपरा परा या।
विद्युन्निभा कमलकोमलकोमलांगी,
सेयं करोतु सततं मम सुप्रभातम्॥

ऋद्धिप्रदायिनी मंगलमति, सरलस्वभाववाली परमसंतोष से परिपूर्ण, विद्युत्वत् कान्ति सम्पन्न, कमल तुल्य कोमल देहधारिणी, माँ जगदम्बा संसार में मेरे प्रभात को सदा मंगलमय करे।

(8)

लृस्तन्त्रशास्त्रगदिताऽखिलदेवमाता,
श्रीतन्त्रदर्शनकृता लिखितेति माया।
माहेश्वरे ऋलृकि या कथिताऽस्ति सैषा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

लृतन्त्र में समस्त देवताओं की माता, श्रीतन्त्र में 'माया' नाम से अभिहित तथा पाणिनीय माहेश्वर सूत्रों में ऋलृक् स्वरूपा माँ शारदा संसार में मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करे।

(9)

एकाक्षरैकगतिरप्रतिमप्रभावा,
यैकात्मनात्र परिपश्यति विश्वरूपा।
सैकात्मिका भगवती जननी मदीया,
नित्यं प्रयच्छतु च मे प्रियसुप्रभातम्॥

एकाक्षरमयी, एकमात्र गतिरूप, अद्वितीय प्रभाव सम्पन्न, विराट-स्वरूप, एकात्मभाव से इस संसार को देखने वाली, एकात्मिका-रूपिणी, मेरी माँ भगवती मेरे प्रभात को प्रतिदिन प्रिय एवं मंगलमय करे।

(10)

ऐन्द्रीतिशक्तिरतुलातुलनीयकान्तिः,
श्रीचक्ररूपरमणीयतरा परा या।
मान्यातिमान्यजनपूजितपादपद्मा,
पद्मप्रिया दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

ऐन्द्रीशक्तिरूपिणी, अतुलनीय कान्तिमयी, सम्माननीय मनुष्यों द्वारा पूजित चरणों वाली, परममनोहर श्रीचक्रस्वरूपिणी, पद्मप्रिया लक्ष्मीस्वरूपिणी माँ भगवती संसार में मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करे।

(11)

ओंकारमन्त्रपरिमन्त्रितमातृशक्तिः,
विश्वेश्वरी भुवनपालनबद्धभक्तिः।
भक्तप्रिया विमलभक्तिमती भवानी,
भक्तेश्वरी दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

ओंकारमन्त्र से परिमन्त्रित, मातृशक्ति, विश्वेश्वरी, निर्मलभक्ति-वाली, विश्वपालन में अनुरक्त, भक्तों की प्रिय भक्तेश्वरी माँ भवानी संसार में मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(12)

औदार्यपूर्णहृदया ममतामयी या,
या चौषधिः विविधरोगयुतस्य जन्तोः।
ओंकारबिन्दुविभवा भवरोगहन्त्री,
सेयं करोतु सततं मम सुप्रभातम्॥

औदार्य पूर्णहृदय की स्वामिनी, ममतामयी, ओंकारबिन्दुरूपी ऐश्वर्य से परिपूर्ण, विविध रोगों से ग्रस्त मानवों के लिये औषधिभूत, भवरोग विनाशिनी माँ भगवती मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करे।

(13)

अङ्के तवैव विजये सकला मनुष्याः,
क्रीडन्ति यान्ति परिभान्ति सदा मुदा हि।
पूज्या स्वपुत्रपरिपालनबद्धचित्ता,
सेयं करोतु सततं मम सुप्रभातम्॥

हे माँ विजये! संपूर्ण मनुष्य तुम्हारी गोद (शरण) में आकर ही प्रसन्नतापूर्वक क्रीड़ा करते हैं, भ्रमण करते हैं, सुशोभित होते हैं। अपनी सन्तान के पालन–पोषण में दृढचित्तस्वरूपिणी वह पूज्य माँ जगदम्बा मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करे।

(14)

अश्चेत्ययं पदविशेषविधायकोऽपि,
यस्याः कृपामयपवित्रनिरीक्षणेन।
विश्वं पुनाति परिपालयतीति नित्यं,
तस्याः कृपा दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

जिन माँ भगवती के कृपामय पवित्र निरीक्षण से "अ" के रूप में पद विशेष के बोधक भगवान् विष्णु इस संसार को पवित्र करते हैं और पालन करते हैं, उस जगदम्बा की कृपा संसार में मुझे सुप्रभात प्रदान करे।

(15)

कल्याणकर्मनिरता कुमुदालया या,
कर्पूरगौरवदना कमनीयकान्तिः।
सा कौशिकी विविधपुष्पयुता पुराणी,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

कल्याणकर्मपरायण, कमलवासिनी, कपूरसदृशगौरमुखी, कमनीय-कांतिवाली, बहुविधकुसुमों से सुशोभित सनातनी माँ कौशिकी संसार में मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(16)

खट्वाङ्गचापपरिघादिकशस्त्रसंघं,
संधारयत्यरिविनाशनिमित्ततो या।
सा रुद्ररूपमतिभीतिकरं वहन्ती,
रुद्राण्यहो दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

जो माँ भगवती शत्रुसंहार हेतु खड्ग, धनुष एवं परिघादि शस्त्रों के समूह को धारण करती है ऐसी अत्यन्त भयोत्पादक रौद्ररूपधारिणी माँ रुद्राणी मुझे सुप्रभात प्रदान करे।

(17)

गन्धर्वकिन्नरगणादिकसिद्धसंघैः,
श्रद्धामयैः परमभावविभावभावैः।
या सेव्यते प्रतिदिनं जगदम्बिका सा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

जिस जगज्जननी की गन्धर्व, किन्नर, सिद्धादि गणों द्वारा परम-श्रद्धामय भावों से प्रतिदिन पूजा की जाती है ऐसी जगदम्बिका विश्व में मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करे।

(18)

घण्टारवैर्विविधमंगलगीतपाठैः,
हर्षातिरेकहृदया प्रतिबोधिता या।
सा मंगला च गिरिजा धनदा मृडानी,
नित्यं करोतु सततं मम सुप्रभातम्॥

घण्टानाद एवं विविध मांगलिक स्तुति-गीत-पाठों द्वारा उद्‌बोधित, हर्षितहृदयवाली, मंगलमयी, धनधान्यदायिनी, पर्वतराजपुत्री, मृडानी, माँ भगवती प्रतिदिन मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(19)

डिञ्चेति सूत्रमपि ते प्रकटीकरोति,
वर्णात्मकं विविधरूपमहो विचित्रम्।
शास्त्रात्मिका भगवती किल सा त्वमत्र,
नित्यं प्रयच्छ भुवि मे प्रियसुप्रभातम्॥

हे माँ भगवति! ''डिञ्च'' सूत्र भी आपके विविध वर्णात्मक विचित्र रूप को प्रकट करता है। ऐसी शास्त्र स्वरूपमयी माँ भगवती इस लोक में निरन्तर मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(20)

चन्द्रानना द्युतिमती कमलासनस्था,
दिव्याम्बरा कनकभूषणभूषितांगी।
दिव्येश्वरी सुखकरी धनदातृलक्ष्मीः,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

चन्द्रमुखी, कान्तिमयी, कमलवासिनी, दिव्यवस्त्रधारिणी, सुख-दायिनी, स्वर्णाभूषणों से शोभायमान, धनदायिनी, लक्ष्मीस्वरूपा दिव्येश्वरी, माँ भगवती संसार में मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

५९५ BVBSSMV

(21)

छत्रेश्वरी नृपतिलक्ष्मधरा मृडानी,
माणिक्यमौक्तिकमयैः मुकुटैर्युता या।
सा माधुरी मधुरिमा मधुरस्वभावा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

छत्रेश्वरी, मोतियों एवं मणियों से जटित मुकुट से परम शोभायमान, मधुरस्वभाववाली, माधुरी, मधुरिमा एवं मृडानी माँ जगदम्बा संसार में मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(22)

जह्नोः सुता जनकजा ज्वरनाशिनी या,
ज्वालामुखी निखिलमानवजन्मदात्री।
सा जन्ममृत्युरहिता जननी मदीया,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

जाह्नवी, जनकनन्दिनी, ज्वरनाशिनी, ज्वालामुखी, प्राणिमात्र की जन्मदात्री, जन्म मृत्यु से परे मेरी माँ जगदीश्वरी इस संसार में मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(23)

झञ्झानिरोधनिरता झणघोषमुग्धा,
हुँकारतो रिपुविनाशपरा पुराणी।
माधुर्यभावभरिता जगदीश्वरीयं,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

झंझावात को रोकने में सक्षम, हुंकारमात्र से ही शत्रुविनाशकारिणी, मार्धुर्यभावसंयुक्त, झण घोष से प्रसन्न होने वाली, पुरातनी, माँ जगदम्बिका संसार में मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करे।

(24)

ञं बोधयित्रि! सुकलापरिबोधनाय,
ञं वृश्चिकाय नम इत्यपि बोधनाय।
तन्त्रेऽम्बिकार्चनविधौ परियुज्यतेऽत्र,
तन्त्रात्मिके त्वमयि मे कुरु सुप्रभातम्॥

जिस माँ भगवती को जागृत करने के लिए तन्त्रात्मकपूजा-पद्धति में 'ञं बोधयित्री' एवं ञं वृश्चिकाय नमः आदि बीजाक्षरों का प्रयोग किया जाता है। ऐसी वह परमेश्वरी माँ भगवती मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(25)

टंकारमात्रकरणे जगदम्बिकायाः,
किन्नो विकम्पितवती भवति क्षमेयम्।
सा सा महत्तरगुणा शिवशक्तिरूपा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

जिस देवी माँ भगवती की टंकारमयी ध्वनि करने मात्र से समस्तपृथ्वी कम्पायमान हो जाती है। ऐसी शिवशक्तिस्वरूपिणी, सर्वगुणसम्पन्नजगज्जननी माँ भगवती संसार में मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(26)

ठंकारनादजनितध्वनितो भवान्याः,
भीता भवन्ति भुवने भवरोगशोकाः।
सेयं भयंकरकरापि च भीतिहन्त्री,
भव्यं करोतु सततं मम सुप्रभातम्॥

जिस माँ भवानी के ठंकारनाद से उत्पन्न हुयी ध्वनि से संसार के रोग एवं शोक भयभीत हो जाते हैं। ऐसी भयंकर स्वरूप वाली होने पर भी भवभयहारिणी माँ भगवती मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(27)

डिण्डीध्वनेः सहनशक्तिपरापरा या,
या डाकिनी डमरुनादनिनादिनी या।
या डामरी जटिलतन्त्रपरा शुभा या,
सेयं सदा दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

डिण्डी-ध्वनि सहने करने वाली एकमात्र शक्ति से युक्त, डमरूनादनिनादिनी, डाकिनी एवं डामरी आदि जटिल तन्त्रमयी कल्याणी माँ भगवती सदैव विश्व में मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(28)

ढक्कानिनादनिरतः प्रलयान्तकारी,
कोपारुणः प्रकुरुते तु शिवोऽपि नित्यम्।
देव्या यया सह च ताण्डवनृत्यमत्र,
सा ताण्डवी दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

ढक्कानिनादनिरत, प्रलयान्तकारी, कोपारुण महादेव जिस देवी मां भगवती के साथ नित्य ताण्डव नृत्य करते हैं, ऐसी ताण्डवी देवी माँ भगवती विश्व में मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(29)

णंकारवर्णशुभहैमवतीति यास्ति,
नक्षत्ररूपरमणीयतरा सदैव।
वर्णात्मिका सकलसौख्यकराम्बिका सा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

णंकार वर्ण के रूप में विख्यात, कल्याणी, हेमवती, नक्षत्रवत् रमणीया, समस्त सुख सम्पत्ति प्रदायिका, वर्णात्मकरूपधरा माँ अम्बिका विश्व में मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(30)

तन्त्रैस्त्वदीयचरणाम्बुजपानलुब्धाः,
भक्त्यार्चयन्ति सततं परदेवतां याम्।
सा सर्वमंगलकरी त्रिपुरेश्वरीयं,
नित्यं करोतु सततं मम सुप्रभातम्॥

तुम्हारे चरणामृत के पिपासु भक्तिपूर्वक विविध तन्त्रों से जिस पराशक्ति तुम्हारी पूजा करते हैं, ऐसी सर्वमंगलकारिणी, त्रिपुरस्वामिनी, माँ भगवती इस लोक में मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करे।

(31)

थे थे तथेति बहुभिः ध्वनिभिस्त्वदीयं,
गायन्ति गीतमनिशं तव पादभृंगाः।
सा त्वं गुणत्रयनिधिर्मणिपूरपूज्या,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

'थे, थे, त, थे, ति' इस प्रकार की अनेकविध ध्वनियों से तुम्हारे चरणारविन्द में गुंजन करने वाले भ्रमररूपी तुम्हारे भक्त निरन्तर तुम्हारी ही स्तुति करते हैं। ऐसी त्रिगुणात्मिका, मणिपूरपूज्या, माँ भगवती इस लोक में मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(32)

दिव्याम्बरैर्विमलदिव्यविभूषणैर्या,
दिव्यस्तवैस्सकलदिव्यजनास्स्तुवन्ति ।
दिव्यात्मिका परमदिव्यसुरूपिणी सा,
दिव्येश्वरी दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

समस्त श्रेष्ठ जन दिव्य वस्त्रों, देदीप्यमान आभूषणों एवं उत्कृष्ट स्तोत्रों द्वारा जिस माँ भगवती की निरन्तर स्तुति करते हैं। ऐसी दिव्यात्मिका, परमदिव्यरूपा देवी माँ संसार में मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(33)

धन्यास्त एव भुवने मनुजा विभान्ति,
ये प्रत्यहं चरणधूलिधरा जनन्याः।
सैवाधुना मलयपर्वतवासिनीयम्,
सिद्धिप्रदा दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

वे ही मनुष्य इस संसार में भाग्यशाली हैं, जो माँ जगदम्बा की चरणरज को प्रतिदिन धारण करते हैं। ऐसी मलयाचलवासिनी, सिद्धिदायिनी देवी माँ इस जगत् में मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(34)

नानाविधाः कुटिलकर्मकराः कृतघ्नाः,
यस्याः पवित्रशरणं सहसैव गत्वा।
ते सम्प्रयान्ति भवबन्धनतो विमुक्तिं,
सा मुक्तिदा दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

नाना प्रकार के कुटिल कर्मों में लिप्त, कृतघ्न मनुष्य जिनकी पुनीत शरण में जाकर तुरन्त भवबन्धन से मुक्त हो जाते हैं। ऐसी मुक्तिप्रदायिनी माँ भगवती इस लोक में मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(35)

पद्मप्रिया परमपूज्ययशस्विनी या,
पापं विनाशयति पुण्यचयञ्च दत्वा।
पुष्णाति पाति परिरक्षति विश्वमेतत्,
सा पुण्यदा दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

जो देवी माँ पद्मप्रिया, परमपूज्या, पुण्यों को प्रदान कर पापों का नाश करती है। और इस विश्व का पालन, पोषण एवं रक्षण करती है। ऐसी पुण्यदायिनी यंशस्विनी माँ भवानी इस लोक में मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(36)

फल्गूस्थिता च फलदा फलिनी पुरन्ध्री,
या पावनी च फणिभाषितभाष्यरूपा।
लोकप्रिया त्रिपुरसुन्दरसुन्दरी सा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

फल्गू (नदी) निवासिनी, फलिनी, फलदायिनी, पावनी, त्रिपुर-सुन्दरी, इन्द्राणीस्वरूपा, पतंजलि द्वारा भाषित महाभाष्यस्वरूपा, लोकप्रिया, माँ जगदम्बिका इस लोक में मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करे।

(37)

बालार्कमण्डलनिभा बहुविक्रमाढ्या,
बुद्धिप्रिया बहुमता बहुभाषिणी या।
वाचाप्यगोचरमयी वचनेश्वरी सा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

उदीयमान सौरमण्डल सदृश आभामयी, बहुविध पराक्रमशालिनी, बहुभाषिणी, वाणी से भी अवर्णनीय, बुद्धिप्रिया, बहुजनमान्या माँ सरस्वती इस लोक मे मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(38)

भव्याकृतिर्विभवभावविभावदात्री,
भूतेश्वरी भगवती भवदुःखहन्त्री।
भूतिप्रदा भयहरा भुवनप्रकर्त्री,
भूयात् त्वदीयकृपया मम सुप्रभातम्॥

परम-तेजोमयी, भूतेश्वरी, भवभयहारिणी, विश्वतापहारिणी, इहलौकिक ऐश्वर्यप्रदायिनी माँ भगवती की कृपा से मेरा प्रभात मंगलमय हो।

(39)

मोहान्धमन्दमतयो मनुजा धरित्र्यां,
मांगल्यमुत्तमचरित्रमिदञ्च यस्याः।
स्तुत्वैव शान्तिमतुलां सुखदां लभन्ते,
सा शान्तिदा दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

मोहान्ध मूढ़मति मनुष्य जिस देवी के मांगलिक एवं उत्तम-चरित की स्तुति मात्र से पृथ्वी पर अनुपम सुखद एवं शान्ति को प्राप्त करते हैं ऐसी शांतिदायिनी माँ जगदम्बा इस लोक में मेरे प्रभात को प्रतिदिन मंगलमय करे।

(40)

यस्याः पदाब्जमनिशं त्रिदशाः समस्ताः,
भक्त्या स्तुवन्ति विविधैः स्तवनैरजस्रम्।
सा सा स्वकीयकरुणार्द्रकृपाकटाक्षैः,
काली करोतु सततं मम सुप्रभातम्॥

समस्त देवता जिनके पादारविन्दों की निरन्तर भक्तिपूर्वक विविध स्तोत्रों से स्तुति करते हैं ऐसी माँ काली अपनी करुणामयी कृपादृष्टि से मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(41)

रौद्राकृतिः महिषराक्षसमर्दिनी या,
राज्यप्रदा मधुमती मिथिलाञ्चलीया।
रम्भापि या रसवती रमणी रमा सा,
राजेश्वरी दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

महिषासुरमर्दिनी, रौद्ररूपवाली, राज्यप्रदायिनी, मिथिलाञ्चल निवासिनी, रसवती, रमणी, राजेश्वरी, मधुमती, रम्भा एवं रमा-स्वरूपिणी माँ भगवती मेरे प्रभात को इस लोक में प्रतिदिन मंगलमय करे।

(42)

लक्ष्मीस्त्वमेव भुवने विभवैर्विभासि,
लम्बोदरी सुललना ललिता त्वमेव।
लोकप्रियापि लवणापि मनोहरा त्वं,
त्वं मे प्रयच्छ सततं भुवि सुप्रभातम्॥

हे माँ भगवति लक्ष्मी के रूप में तुम ही इस लोक में अनेकविधवैभवों से सुशोभित होती हो। तुम ही लम्बोदरी, सुललना, ललिता, लोकप्रिया, मनोहरस्वरूपिणी एवं लवणभूता भी हो। ऐसी माँ भगवती तुम इस लोक में मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करो।

(43)

वज्रात्मिकापि वरदापि च वैष्णवी या,
व्यासप्रियापि विमलाकृतिरद्भुता या।
विश्वम्भरापि वनितापि च वासवी सा,
विश्वेश्वरी दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

जो माँ जगदम्बिका वज्रमयी, वरदायिनी, वैष्णवी, अद्भुत, विमलस्वरूपिणी, वासवी, विश्वेश्वरी, व्यासप्रिया, विश्वम्भरा एवं वनिता स्वरूपा है वह माँ भगवती इस लोक में मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(44)

शाकम्भरीति शरणागतिरात्मशक्तिः,
या शारदापि शिवशक्तिसमानरूपा।
शुभ्रानना च शरदभ्रनिभा विभा सा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

जो जगज्जननी माँ शाकम्भरीरूपा, शरणागत की आत्मशक्तिस्वरूपा, शारदा, शिव शक्तितुल्यरूपा, शुभ्रानना एवं शरत्कालीनमेघवत् कांति-युक्ता है, वह माँ भगवती इस लोक में मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(45)

षट्शास्त्रमर्मनिरताः कवयो बुधाश्च,
यामर्चयन्ति नितरां कविताप्रसूनैः।
सेयं सदा विपुलबुद्धिविलासदात्री,
देवी करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

षट् शास्त्रों के मर्मज्ञ, ज्ञानी ध्यानी जिस भगवती की कवितामयी कुसुमांजलि से अत्यधिक अर्चना करते हैं। ऐसी विपुलबुद्धिविलास-दायिनी माँ सरस्वती इस लोक में मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(46)

सप्तर्षिमण्डलगता सगुणातिसूक्ष्मा,
सर्वेश्वरी सुरगिरा सकलेष्टदापि।
या भाति भूतलमणिर्भुवनेश्वरी सा,
नित्यं करोतु सुखदं मम सुप्रभातम्॥

जो भुवनेश्वरी सप्तर्षिमण्डल में विद्यमान है, अतिसूक्ष्म है, त्रिगुणात्मिकारूपा है, जगदम्बा है, देवगिरा है, सर्वाभीष्टदायिका है, जो इस धरती पर रत्नस्वरूप में सुशोभित है, वह सुखदायिनी माँ भगवती मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(47)

हंसस्थिता स्थिरगतिश्च हिरण्यवर्णा,
हैमाम्बरा हिमनिभा च हिमालयस्था।
या पार्वतीति गिरिराजसुता हिमानी,
सा सा शिवा दिशतु मे भुवि सुप्रभातम्॥

जो माँ जगदीश्वरी पर्वतराज हिमालय पुत्री है, हिमालयवासिनी पार्वती है, हंसारूढा है, स्थिरगतिवाली है, हिरण्यमयी है, स्वर्णाम्वरमयी है, और हिमरूपा है वही माँ शिवानी मेरे प्रभात को मंगलमय करे।

(48)

क्षेमं तनोति वितनोति यशोऽम्बिका या,
खेदं हिनस्ति मनुजस्य ददाति सौख्यम्।
सा सौख्यदा भुवनमण्डलमण्डितात्र,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

जो माँ जगदम्बा प्राणिमात्र का कल्याण करती है, कीर्ति का विस्तार करती है दुःख दूर कर सुख देती है। समस्त विश्व की भूषण स्वरूप सौख्यदा माँ भवानी संसार में मेरे प्रभात को सदा मंगलमय करे।

(49)

त्रस्तस्य या शरणदा सदयाश्रया या,
या भामिनी व्यथितमानवमोदिनी या।
या पालनी ननु भुवो जगदीश्वरी सा,
नित्यं करोतु भुवने मम सुप्रभातम्॥

जो लोकेश्वरी माँ दीन दुःखियों की दयामयी शरण स्थली है अशांत मानवों को प्रसन्न करने वाली है भामिनी रूप है जो दिव्यरूप वाली है, जो इस जगत् का पालन करने वाली जगदीश्वरी है। वह माँ भगवती इस लोक में मेरे प्रभात को निरन्तर मंगलमय करे।

(50)

ज्ञातिस्त्वमेव जननि स्थितिरेव मे त्वम्,
बुद्धिस्त्वमेव मम चासि गतिस्त्वमेव।
त्वं मे धनं जगति सर्वविधं बलञ्च,
त्वं मे प्रयच्छ वरदे भुवि सुप्रभातम्॥

हे माँ! तुम ही मेरी जाति, स्थिति, बुद्धि एवं गति हो, तुम ही इस संसार में मेरा सर्वविधबल एवं धन हो। अतः हे वरदायिनि माँ भगवति! मुझे इस लोक में सुप्रभात प्रदान करो।

(51)

मातस्त्वदीयपदपङ्कजभक्तिपूर्णः,
श्रद्धाप्रसूननिचयैस्तवकिङ्करोऽयम् ।
त्वामर्चयत्यतितरामतिनम्रभावैः,
भावाञ्जलौ कृतपदः कविसेमवालः ॥

हे माँ! तुम्हारे चरणाम्बुजों (चरणकमलों) में पूर्ण भक्ति रखने वाला यह कवि श्री कृष्ण सेमवाल अतिविनम्रतापूर्वक (श्रद्धा), भावरूपी अंजलि में स्तुतिपरकपदरूपी श्रद्धासुमनों को रखकर उन्हें तुम्हारे चरणों में अर्पित करता हुआ तुम्हारी वन्दना करता है।

कामना

(1)

विश्वाद्यां विश्ववन्द्यां त्रिभुवनजननीं तापसन्तापहन्त्रीं,
धर्माख्यां धर्मरूपां धृतिमतिमहितां मन्दतानाशकर्त्रीम्।
सर्वोत्कृष्टां सुमान्यां सकलसुखकरीं सर्वसम्पत्प्रदात्रीं,
ध्यायेऽहं ध्यानगम्यां त्रिपुरविजयिनीमम्बिकां विश्वधात्रीम्॥

विश्ववन्द्या, विश्व की ऐश्वर्य रूपा, त्रिभुवनजननी, ताप एवं सन्ताप की नाशिनी, धर्मस्वरूपिणी, बुद्धिदायिनी, धैर्यशालिनी, औदासीन्यविनाशनी, सर्वोत्तमा, सुमान्या, समस्तसुख एवं सम्पत्ति की प्रदात्री, त्रिपुरविजयिनी ध्यानगम्या, माँ जगदम्बिका का मैं विनम्रता पूर्वक ध्यान करता हूँ।

(2)

मातस्स्मरामि विमलं चरितं त्वदीयं,
दीनोऽथवातिमलिनो धनिकश्च तत्तः ।
त्वां श्रद्धया स्मरति चेद्भुवि योऽपि कोऽपि,
तत्सन्निधौ त्वमयि किं न हि सम्प्रयासि॥

हे माँ जगदम्बिके! इस धरती पर जो कोई भी दीन दुःखी, निर्धन अथवा धनवान् आपको श्रद्धापूर्वक स्मरण करता है क्या आप उसके पास नहीं जाती? अर्थात् अवश्य उसे आप दर्शन देती है। अतः हे माँ! मैं आपके ऐसे ही निर्मल चरित्र का ध्यान करता हूँ।

(3)

अद्याप्यहं तव पदार्पणचित्तवृत्तिः,
संसारतापतपनैः परितप्यमानः।
भावातिभावभविको भुवि भावुकस्त्वां,
पुत्रस्तवैव जननि त्वरया स्मरामि॥

हे जननि! सांसारिक कष्टों से जूझता हुआ, अत्यन्त भावुक आपके चरणकमलों में दृढ़भक्तिवाला इस धरती पर आपका ही पुत्र मैं आज आपका शीघ्रता से स्मरण करता हूँ।

(4)

आकारयामि जननीं जगदम्बिकां त्वां,
भक्त्या विशुद्धहृदयेन निजे कुटीरे।
स्वीकृत्य देवि विनयं सदयं मदीयं,
पुत्रं स्वकीयमनिशं परिरक्ष चैनम्॥

हे माँ जगदम्बे! मैं निर्मल हृदय से भक्ति पूर्वक आपको अपनी कुटिया में आमन्त्रित करता हूँ। हे देवि माँ! मेरे निवेदन को दयापूर्वक स्वीकार करके अपने इस पुत्र की निरन्तर रक्षा करो।

(5)

आगच्छ यच्छ परिरक्ष सुपृच्छ मातः,
दीनं तवैव कृपया भुवि जीवमानम्।
त्वत्पादपद्मपतितेन रजः कणेन,
यास्यन्ति सर्वविपदः विलयं मदीयाः॥

हे माँ! इस पृथ्वी में आपकी कृपा से जीने वाले मुझ दीन की कुटिया में पधारकर मुझे आशीर्वाद देकर कुशल क्षेम पूछ मेरी रक्षा करो; मुझे पूर्ण विश्वास है कि तुम्हारी चरणों से निर्गत धूल की कणों से निश्चय ही मेरी समस्त विपत्तियाँ दूर हो जायेंगी।

(6)

संसारशोकशमनोत्कटभैषजीयं,
पादामृतं तव निपीय निपीय मातः।
सन्तोषतोषपरितोषपरः समस्तः,
सौख्यं गमिष्यति मदीयजनो जगत्याम्॥

हे माँ भगवति! सांसारिक शोक को शांत करने में औषधिस्वरूप आपके चरणामृत को बारम्बार पीकर परम संतुष्ट हुये मेरे पारिवारिक जन अपार सुख को प्राप्त करेंगे।

(7)

मातस्तवागमनकालपले तदानीं,
हर्षाश्रुभिः जननि जह्नुसुताजलेन।
प्रक्षालनं चरणपङ्कजयोस्तवात्र,
सद्यः करिष्यति मदीयसमस्तलोकः॥

हे जननि! आपके आगमन के समय मेरी गृहस्थी हर्षातिरेक के कारण आये आंसुओं एवं गंगाजल से आपके चरणकमलों को शीघ्र धोयेगी।

(8)

मन्त्रैस्तथास्तुतिभरैस्स्तवनैरनेकै-,
रन्तस्तलस्फुरितभावविभावभावैः ।
रम्यैः प्रियैः रसभरैः निजलोकगीतैः,
ते स्वागतं परिजनैस्तु विधास्यतेऽत्र॥

हे जगज्जननि! मेरा परिवार अन्तःकरण से स्फुरित भाव-विभावादि से परिपूर्ण अनेक मन्त्रों, स्तुतियों एवं स्तोत्रों तथा रमणीय व प्रिय सरस लोकगीतों से आपका स्वागत करेगा।

(9)

लक्षात्मकं दिवसनाथनिभं सुदीप्तं,
रात्रीश्वराननसमञ्च तथैव शीतम्।
मातः समुज्ज्वलमिदं तव भव्यरूपं,
संवीक्ष्य ते चरणयोः प्रणतिः मदीयैः॥

हे माँ जगदीश्वरि! लक्षसंख्यक सूर्यों के तेज पुंज के तुल्य देदीप्यमान एवं चन्द्रवत् शीतल आपके इस उज्ज्वल एवं भव्य रूप को देखकर मेरा परिवार आपके श्री चरणों में श्रद्धापूर्वक प्रणाम करेगा।

(10)

विश्वेश्वरीं भगवतीं शिरसा प्रणम्य,
पीत्वा तदीयचरणामृतमद्भुतञ्च।
आधाय तच्चरणधूलिकणं स्वभाले,
धन्या भविष्यति तदा किल मे गृहस्थी॥

हे माँ भगवति! मेरी गृहस्थी विश्व की स्वामिनी आपको नतमस्तक होकर प्रणाम करके तुम्हारे अद्भुत चरणामृत को पीकर तथा आपके चरणरज के कणों को अपने मस्तक पर धारण कर निश्चित रूप से धन्य होगी।

(11)

प्राप्ते मदीयसदने जननि त्वदीयं,
द्वारोपचारमखिलं त्वरितं विधाय।
नम्रैः समस्तपरिवारजनैस्तु साकं,
पूजागृहं प्रति गमिष्यसि तत्क्षणन्त्वम्॥

हे माँ जगदम्बे! मेरी कुटिया में आपके पधारते ही हमारे द्वारा शीघ्र ही द्वारोपचार पूजन करने के पश्चात् आप मेरे विनम्र परिवार के साथ पूजागृह को प्रस्थान करेंगी।

(12)

आसन्दिकां जननि देवतरोः सुकाष्ठैः,
दिव्यैस्तथैव परिशुद्धविशुद्धरूपैः।
निर्माप्य ते समुपवेशनहेतवेऽत्र,
यास्यामि मोदमखिलं किमहं न मातः॥

हे जननि! आपके बैठने के लिये देवतरु की दिव्य लकड़ी से परमस्वच्छ चौकी बनाकर क्या मैं सम्पूर्ण आनन्द को नहीं प्राप्त करूँगा? अर्थात् अपार प्रसन्नता को प्राप्त होऊंगा।

(13)

गंगाजलैः सुविमलैश्च दुकूलकूलैः,
प्रक्षाल्य तां सपदि चारुतरां विशिष्टाम्।
सम्प्रोञ्छनं त्वपि तथैव विधाय मातः,
संस्थापयिष्यति जनस्तु त्वदर्थमेताम्॥

हे माँ जगदीश्वरि! निर्मल गंगाजल से उस विशिष्ट मनोहर चौकी को धोने एवं पोछने के पश्चात् आपका सेवक आपके बैठने के लिये इस चौकी को यथास्थान रखेगा।

(14)

कौशेयवस्त्रपरिभूषितभूषितेऽस्मिन्,
शुभ्रातिशुभ्रलसितासनकाष्ठपीठे ।
प्रार्थिष्यते सविनयं परमादरेण,
त्वां सद्य एव जननीमुपवेशनाय॥

हे माँ जगदम्बे! तदनन्तर मैं रेशमी वस्त्र से अत्यन्त सुशोभित स्वच्छातिस्वच्छ काष्ठपीठ के आसन पर विराजमान होने के लिये आपसे विनयपूर्वक सादर प्रार्थना करूँगा।

(15)

नानासुगन्धिपरिमिश्रितसिन्धुतोयै-,
रुष्णोदकैर्जननि ते चरणारविन्दम्।
अत्यन्तसात्त्विकविचारहृदा तदात्र,
प्रक्षालयिष्यति जनः पुनरेष भक्तः॥

हे माँ! मैं अत्यन्त सात्त्विक विचार एवं परिपूर्णहृदय से नाना प्रकार की सुगन्धियों से युक्त समुद्र के जल से एवं उष्णोदक के द्वारा तेरे चरणारविन्दों को बार-बार प्रक्षालित करूँगा।

(16)

दूर्वातिलाक्षतसुचन्दनपुष्पदर्भैः,
मातः सुसर्षपयवादियुतैः विशुद्धैः।
एतैः प्रपूरितजलैः परिपूर्णमर्घ्यं
किन्नो ग्रहीष्यसि मदर्पितमेतदत्र॥

हे माँ! इस अवसर पर दूर्वा, तिल, अक्षत, चन्दन, पुष्प, कुश एवं सरसों आदि से युक्त स्वच्छ जल से मेरे द्वारा पवित्रभाव से समर्पित इस परिपूर्ण अर्ध्य को क्या आप स्वीकार नहीं करोगी? अर्थात् स्वीकार करोगी।

(17)

मातः समानपरिमाणपणेन भक्त्या,
क्षौद्रेण तोयदधिगोरसशर्कराभिः।
निर्माप्य सुन्दरतमं मधुपर्कमेनं,
त्वामर्पयिष्यति जनो महनीयभावैः॥

हे जगज्जननि! तदनन्तर निश्चित रूप से समानभागवाले मधु, दूध, दही, गोरस एवं शक्कर से निर्मित मधुर मधुपर्क को यह भक्त भक्तिपूर्वक आपको सादर समर्पित करेगा।

(18)

कर्पूरकेसरलवङ्गसुगन्धगन्धैः,
संवासितेन सलिलेन विनिर्मितं यत्।
तुभ्यं मयाचमनमुत्तममद्भुतन्तत्,
ह्यर्पिष्यते जननि सादरमत्र भक्त्या॥

हे देवि माँ! इसके अनन्तर कपूर, केसर, लौंग आदि सुगन्धित पदार्थों से सुवासित जल से निर्मित अद्‌भुत एवं उत्तम आचमन आपको आपका चरण सेवक सादर भक्तिपूर्वक समर्पित करेगा।

(19)

दिव्यौषधैः जननि दिव्यसुगन्धिभिश्च,
गंगोदकैः सकलसप्तसमुद्रतौयैः।
श्रद्धाभरेण मनसा च विनम्रभावैः,
स्नानं विधास्यति जनस्तव भक्त एषः॥

हे माँ भगवति! आपका यह सेवक श्रद्धापूर्ण मन से विनम्रतापूर्वक दिव्यौषधियों एवं सुगन्धित गंगाजल के साथ ही सभी सातों समुद्रों के जल से आपका स्नानात्मक अभिषेक करेगा।

(20)

क्षौद्रेण दुग्धदधितोयसितादिभिश्च,
सन्निर्मितेन मधुरेण मनोहरेण।
पञ्चामृतेन जगदम्ब विधास्यते वै,
स्नानं पवित्रमयि ते त्वरितं तदैव॥

हे माँ जगदम्बे! तुम्हारा यह सेवक तत्पश्चात् शीघ्र ही मधु, दुग्ध, दधि, शर्करा, जल इत्यादि से निर्मित मधुर पंचामृत से आपका पवित्र अभिषेकात्मक स्नान करेगा।

(21)

मातस्त्वदीयसुत एष तवार्चने ते,
नानासुगन्धमयपुष्पसुवासितेन ।
तैलेन कज्जलकलाकमनीयकेशान्,
संलिप्य मोदमतुलन्तु गमिष्यतीति॥

हे माँ परमेश्वरि! आपकी अर्चना के लिये आपका यह पुत्र विविध सुगन्धमय पुष्पों से सुवासित तेल को आपके अत्यधिक काले केशों में लगाकर अद्वितीय प्रसन्नता को प्राप्त करेगा।

(22)

श्रीखण्डचन्दनसुकुङ्कुमकेसरैश्च,
नानाप्रकारविविधौषधसंयुतैश्च ।
द्रव्यैः विशेषविधिना विहितेन तां त्वा-,
मुद्वर्तनेन किमहं न हि भूषयिष्ये॥

हे माँ! श्रीखण्ड, चन्दन, कुङ्कुम, केसरादि विविध औषधि-युक्त द्रव्यों से विशिष्ट विधिपूर्वक तैयार किये उबटन से मैं आपका पुत्र क्या आपको विशिष्ट विधिपूर्वक भूषित नहीं करूँगा? अर्थात् अवश्य करूँगा।

(23)

लोकेश्वरि त्वमयि पावनपावनासु,
सर्वोत्तमापि ननु सम्प्रति भक्तितोऽयम्।
मायाममत्वनिरतो मनुजस्तथापि,
स्नानं विशुद्धसलिलेन विधास्यतीति॥

हे माँ लोकेश्वरि! आपके परमपावन एवं सर्वोत्कृष्ट होने पर भी मायामोहपरायण यह सांसारिक मनुष्य तो भी स्वच्छ जल से निश्चय ही आपका स्नानात्मक अभिषेक करेगा।

(24)

संकल्पभावमखिलं परिबोधनार्थं,
यद् ब्रह्मणा विरचितं जनताहिताय।
यज्ञोपवीतमतुलञ्च सुवर्णतुल्यं,
तुभ्यं तदैव किमयं न हि दास्यतीति॥

हे माँ जगदम्बे! जन-कल्याण एवं समस्त संकल्पभावों के उद्‌बोधनार्थ ब्रह्मा जी द्वारा विरचित सुर्वणसदृश एवं अतुलनीय इस यज्ञोपवीत को मैं क्या आपको अर्पित नहीं करूँगा? अर्थात् अवश्यमेव करूँगा।

(25)

नानाविधानि विमलानि सुकोमलानि,
दिव्यानि सुन्दरतमानि मनोहराणि,
वस्त्राणि मातृचरणेषु मयाम्ब पूज्ये,
सद्यः पवित्रहृदयेन समर्पयिष्ये॥

हे पूजनीय माँ! मैं इस प्रकार स्वच्छ, सुकोमल, मनोहर, सुन्दरतम एवं देदीप्यमान नाना प्रकार के वस्त्रों को शीघ्र ही पवित्र- हृदय से मैं आपके श्री चरणों में अर्पित करूँगा।

(26)

केयूरकुण्डलमनोहरचारुहारैः,
मञ्जीरकाञ्चिकमनीयसुमौक्तिकैश्च।
एवंविधैः बहुविधैः प्रियभूषणैस्ते,
स्नेहादहं जननि देहमलंकरिष्ये॥

हे माँ! तत्पश्चात् केयूर, कुण्डल, मनोहरकण्ठहार, पायल, करधनी आदि उत्तम मोतियों वाले विविध प्रकार के प्रिय आभूषणों से प्रेमपूर्वक मैं आपको अलंकृत करूँगा।

(27)

कस्तूरिकागरुसुगन्धसुरम्यगन्धैः,
भाले तवातिविमले तिलकं विधाय।
प्रीतः प्रसन्नहृदयस्तव भक्त एष,
प्रेम्णा करिष्यति विनम्रनतिं तदैव॥

हे माँ भगवति! अत्यन्त निर्मल आपके मस्तक पर कस्तूरी, अगरु आदि सुगन्धित द्रव्यों से मिश्रित तिलक लगाकर प्रसन्नचित्त आपका यह भक्त प्रेमपूर्वक विनीतभाव से आपको प्रमाणाञ्जलि अर्पित करेगा।

(28)

मातः करिष्यति सुतः करबद्ध एष,
स्वच्छाक्षतैः स्फटिकसन्निभशुभ्रशुभ्रैः।
रक्ताक्षतैः तव सुपूजनमत्र चापि,
श्रद्धास्पदेन मनसा जगदम्ब शीघ्रम्॥

हे माँ जगदम्बे! आपको करबद्ध प्रणाम करता हुआ यह आपका पुत्र स्फटिकमणिसदृश, परमोज्ज्वल, स्वच्छ एवं रक्त अक्षतों से शीघ्र ही श्रद्धाभाव से आपका पूजन करेगा।

(29)

मातः जपाकुसुमतुल्यमतीवरम्यं,
सिन्दूरमेतदरुणाभसुभासभासम् ।
सीमन्त एव तव सादरमर्चनार्थं,
दासोऽहमत्र शमनाय समर्पयिष्ये॥

हे माँ भवगति! आपका चरणसेवक मैं आदरपूर्वक अर्चना के निमित्त जपाकुसुमसदृश अत्यन्त रमणीय एवं देदीप्यमान अरुणिम सिन्दूर को मांग भरने के लिये आपके श्री चरणों में भेंट करूँगा।

(30)

श्रीवासगुग्गुलसितामधुगोघृतानां,
कर्पूरचन्दनसिताभ्रवनस्पतीनाम्।
सम्मिश्रणेन रचितञ्च सुधूपमेनं,
किं घ्रापयिष्यति सुतो न हि तेऽर्चनायाम्॥

हे माँ जगज्जननि! आपकी पूजन पद्धति में सुगन्धित गुग्गल, शर्करा, मधु गोधृत, कपूर, चन्दन आदि देदीप्यमान वनस्पतियों के मिश्रण से तैयार इस सुवासित धूप को क्या मैं आपके समक्ष प्रज्ज्वलित नहीं करूँगा? अर्थात् अवश्य करूँगा।

(31)

मातः सहस्ररविरश्मिविभानिभाभिः,
गोसर्पिषा जननि मिश्रितवर्तिकाभिः।
संराजितं ज्वलितमुत्तमदीपमेनं,
त्वत्सम्मुखे प्रतिदिनं किल दर्शयिष्ये॥

हे माँ भगवति! मैं आपका सेवक सहस्रों सूर्यों की रश्मि की शोभा वाली, गोधृत के मिश्रण से बनायी गई वर्तिकाओं से सुशोभित, प्रज्वलित इस उत्तम दीपक को प्रतिदिन आपके सम्मुख प्रदर्शित करूँगा।

(32)

गोधूमसूपदधिदुग्धघृतैर्युतानि,
सुस्वादुपायसपराणि सुतण्डुलानि।
शाकानि तानि मधुराणि च लोकमातः,
सद्व्यञ्जनानि किमहं न समर्पयिष्ये॥

विश्वजननि हे माँ! गेहूँ, सूप, दुग्ध दधि एवं घृत से युक्त विविध व्यंजन, स्वादिष्ट खीर एवं सुस्वादु शाक-सब्जियों को क्या मैं आपको अर्पण नहीं करूँगा? अर्थात् अवश्य करूँगा।

(33)

निष्ठामयेन हृदयेन पवित्रभावैः,
सन्निर्मितं जननि भोजनमर्पयित्वा।
गंगामृताचमनमुत्तममेष दासः,
भक्त्यार्पयिष्यति तवैव तदा त्वदर्थम्॥

हे माँ! पवित्र सात्त्विक भाव एवं निष्ठामय हृदय से बनाये गये भोजन को आपके श्री चरणों में अर्पित करने के पश्चात् आपका यह दास आचमन हेतु उत्तम गंगाजल को भक्तिपूर्वक अर्पित करेगा।

(34)

उष्णोदकैः भुवनमण्डलमण्डले हे,
प्रक्षालनं तव विधाय मुखादिकानाम्।
आनन्दमोदमुदितो जगदम्ब भव्ये,
प्रेम्णा करिष्यति नतिं तव भक्त एषः॥

संसार की सर्वोत्कृष्ट भूषण हे माँ! भोजनानन्तर उष्णजल से आपके हस्तमुखादि का प्रक्षालन कर अतिशय प्रसन्नता को प्राप्त होता हुआ आपका यह भक्त प्रेमपूर्वक आपको प्रणाम करेगा।

(35)

द्राक्षाफलानि कदलीदलदाडिमानि,
खर्जूरजम्बुसुरसालफलादिकानि ।
लोकोपचारचरितस्तवपुत्रकोऽयं,
तुभ्यं प्रदास्यति च सर्वफलप्रदात्र्यै॥

हे सर्वफलप्रदायिनि माँ! लोकाचार का पालन करने वाला आपका यह पुत्र द्राक्षाफल, कदलीदल, दाडिम, खर्जूर, जामुन, आम्रादि फल आपके श्री चरणों में अर्पित करेगा।

(36)

एलालवङ्गखदिरादिकगौरगौरं,
कंकोलपूर्णपरिमिश्रितमुत्तमन्त्वाम् ।
ताम्बूलमेतदपि मानवमूल्यकर्त्रि,
भक्त्यार्पयिष्यति जनः क्रमुकादियुक्तम्॥

मानवमूल्यकर्त्रि हे माँ! तदनन्तर आपका यह भक्त इलायची, लौंग, सुपारी आदि विविध सुगन्धित द्रव्यों से मिश्रित स्वादिष्ट ताम्बूल आपको श्रद्धापूर्वक अर्पित करेगा।

(37)

द्रव्यात्मके विभवदे धनदे धरित्र्यां,
हे देवि ते चरणयोः विनयेन तत्र।
श्रद्धापरां तव कृपासमलंकृतां तां,
त्वामर्पयिष्यति जनः प्रियदक्षिणां स्वाम्॥

भववैभवदायिनि! द्रव्यस्वरूपिणि! धनप्रदात्रि, हे माँ! तत्पश्चात् आपकी कृपा से समलंकृत आपका यह भक्त श्रद्धास्वरूपिणी अपनी प्रिय दक्षिणा को आपके श्री चरणों में सविनय अर्पित करेगा।

(38)

मातः त्वदीयकृपया परिरक्षितोऽयं,
नत्वा पुनः पुनरपि तव पादयोः वै।
आनन्दपूर्णहृदयः स्तुतिगीतपाठैः
त्वामर्चयिष्यति जनः पुनरेव भक्त्या॥

हे माँ! आपकी कृपा से रक्षित, आनन्दपूर्ण हृदय वाला यह भक्त आपके श्री चरणों में बारम्बार नमन कर पुनः भक्तिपूर्वक स्तुतिगीतपाठादि से आपकी विनम्र भाव से पूजा करेगा।

(39)

सर्वोज्ज्वले सकलविश्वविकासयित्रि,
भव्ये प्रभाविभववैभवभासकर्त्रि।
नीराजनेन जन एष तदापि मातः,
त्वां पूजयिष्यति सुदीप्तसहस्रदीपैः॥

हे सर्वोज्जवले! समस्त विश्व की विकासकारिणि एवं भव्य-स्वरूपिणि! प्रभा के अत्यधिक वैभव की विशिष्टता को प्रकट करने वाली हे माँ! इसके अनन्तर यह भक्त हजारों प्रज्ज्वलित दीपकों वाली आरती से आपकी आरती उतारेगा।

(40)

मातः विशालकमनीयपवित्रपात्रे,
नानाप्रकाररमणीयसुदीप्तदीपान्।
आधाय ते च किमयं न हि सप्तवारं,
आरार्तिकं जननि तत्र करिष्यतीति॥

हे जननि! विशाल कान्तिमय पवित्र पात्र में विविध मनोहर प्रज्ज्वलित दीपों को रखकर यह सेवक अपने घर में सात बार आपकी आरती उतारेगा।

(41)

तीर्थानि यानि निखिलानि समस्तलोके,
त्वय्येव यान्ति परिभान्ति च संविशन्ति।
मातः विचिन्त्य हृदयेऽत्र परिक्रमान्ते,
भूयः पुनः पुनरहं परितः करिष्ये॥

हे माँ! इस लोक में जितने भी तीर्थ हैं। वे सब आपसे उत्पन्न है, आपमें सुशोभित है, तथा आप ही में लीन हो जाते हैं। अतः इस भावना को हृदय में रखते हुए बारम्बार में आपकी चारों और परिक्रमा करूँगा।

(42)

पूजावसानसमये जगदम्बिकेऽयं,
त्वत्तः करिष्यति निवेदनमत्र भक्त्या।
अज्ञानतो ननु मयाप्यभिमानतोऽपि,
तत्क्षम्यतामशुभमाचरितं यदत्र॥

जगज्जननि हे माँ! पूजा की समाप्ति के पश्चात् यह भक्त आपसे श्रद्धापूर्वक निवेदन करेगा कि इस अवसर पर अज्ञान अथवा अभिमान के कारण मेरे द्वारा जो भी अशोभनीय आचरण हुआ हो, उसे क्षमा करना।

(43)

मातः विनम्रविनयं तव सन्निधौ मे,
सांसारिकस्य सपदि प्रभविष्यतीति।
संसारदुःखगहने परिमज्जितं मां,
रक्षस्व हे जननि पुत्रमिमं सदैव॥

हे माँ भगवति! मुझ सांसारिक का आपके समक्ष तुरन्त सविनय निवेदन होगा कि संसार के गहन दुःख में डूबे हुये मुझ इस पुत्र की निरन्तर रक्षा करना।

(44)

धन्या वयं परिजना निखिलाश्च धन्याः,
धन्या मदीयधरणी सदनञ्च धन्यम्।
मातस्तवागमनतोऽत्र भविष्यतीति,
धन्यं मदीयसकलं भुवनं यदैतत्॥

हे परमेश्वरि माँ! मेरे घर पर आपके आगमन से हम समस्त पारिवारिक लोग, मेरी धरती, मेरा घर यहाँ तक कि मेरा यह समस्त भूमण्डल भी कृतकृत्य हो जायेगा।

(45)

हे देवि ते मम गृहे समुपागतेऽस्मिन्,
स्वीकृत्य सुन्दरमतीवपवित्रमेतत्।
आतिथ्यमस्य मधुरं किमकिञ्चनस्य,
मोदान्विता न हि भविष्यति मे गृहस्थी॥

हे माँ! मेरे घर पर आपके आने से एवं मुझ तुच्छ के अत्यन्त पवित्र एवं मधुर आतिथ्य को स्वीकार कर मेरी गृहस्थी क्या आनन्दविभोर नहीं होगी। अर्थात् अवश्य होगी।

(46)

यद्यप्यहं नहि समुत्सुकतां भजिष्ये,
प्रस्थानतस्स्वसदनात्सदये तथापि।
लोकोपचारविधिना विनिवेदयिष्ये,
भक्त्याऽहमेव गमनाय च सन्निधौ ते॥

हे सर्वेश्वरि माँ! अपने घर से आपके प्रस्थान की इच्छा न होने पर भी मैं आपके सम्मुख भक्तिपूर्वक लोकोपचारविधि से आपको यहाँ से प्रस्थान करने के लिए नम्रतापूर्वक निवेदन करूँगा।

(47)

हे देवि गच्छ परमेश्वरि पाहि मां त्वं,
स्वस्थानमद्भुतमनोरममुत्तमन्तत्।
दृष्ट्या सदा मधुरयात्र सुरक्षणीयः,
पुत्रस्तवैष जननीति निवेदयिष्ये॥

"हे देवि माँ! आप अपने उस अद्भुत, मनोरम उत्तम धाम की ओर प्रस्थान कीजिए। हे जगदम्ब! मेरी रक्षा कीजिए। हे माँ! आपका यह पुत्र मधुर दृष्टि से पूर्णरूप से रक्षणीय है।" तदनन्तर इस प्रकार से मैं निवेदन करूँगा।

(48)

आयाति जीवनमिदं परियाति चापि,
संयास्यति द्रुतमहो परियास्यतीति।
जानात्ययं न हि जनः परमत्र लोके,
किं कर्म स प्रकुरुते निजजीवनेऽस्मिन्॥

यह जीवन आता है, और चला जाता है। शीघ्र ही पुनः आयेगा एवं चला जायेगा। अहो कष्ट की बात यह है कि यह मनुष्य इस संसार में रहकर यह नहीं जान पाता कि अपने इस जीवन में वह क्या कर्म कर रहा है।

(49)

त्वं शाश्वती जननि हे परमामरापि,
त्वञ्चैव विश्वनिलयस्य सुकुञ्जिकापि।
जानासि सर्वजनकर्म सदैव हि त्वं,
त्वं देहि मे सुकृतये सुमतिं तदैव॥

हे जगदीश्वरि माँ! आप नित्य हैं। परमेश्वरी भी आप ही हैं। इस संसार की कुंजी भी आप हैं। आप समस्त प्राणियों के सत्कर्मो को सदा ही जानती हैं। इसलिये हे माँ! सद्कर्म हेतु मुझे सद्बुद्धि देना।

(50)

घोरे महाकलियुगे जगदम्ब भव्ये,
भ्रष्टाश्चरित्रहनने पटवः कृतघ्नाः।
आचारपूतचरितं परितापयन्ति,
मिथ्याकथाप्रकथनैः किमुनात्र कष्टम्॥

हे भव्यस्वरूपिणि जगदम्बिके! इस घोर महाकलियुग में भ्रष्ट, चरित्रहनन में निपुण, कृतघ्न, असत्यवादी मनुष्य झूठी कहानियों को गढ़कर पवित्राचरण वाले व्यक्ति को दुःखी करते हैं। इससे बढ़कर क्या कष्ट हो सकता है।

(51)

सत्यं वदामि सदये तव सम्मुखेऽहं,
सत्येन शुद्धहृदयेन च निष्ठयापि।
स्वच्छं पवित्रमतुलं प्रकरोमि कार्यं,
तत्रापि कुत्सितजनाः परिपीडयन्ति॥

हे दयामयि माँ! आपके समक्ष सत्य कहता हूँ कि सत्यनिष्ठ एवं पवित्र हृदय से स्वच्छ, पवित्र अत्यधिक कार्य करने पर भी दुराचारी मनुष्य निरन्तर पीड़ा पहुंचाते रहते हैं। इससे अधिक क्या निवेदन कर सकता हूँ।

सर्वमङ्गलाशतकम्

(1)

कुलपरम्परया जगदम्बिके,
चरणभक्तिपरस्तव किङ्करः।
तव गिराञ्च तवैव समाश्रयं,
समधिगत्य करोति तव स्तुतिम्॥

हे माँ जगदम्बिके! अपनी कुल परम्परा से आपके चरणकमलों में दृढ़ भक्ति वाला आपका सेवक आपके द्वारा प्रदत्त वाणी एवं आपका ही आश्रय लेकर आपकी स्तुति करता है।

(2)

भवति नैव विधिर्गदितुं क्षमः,
तव कथां निखिलां हि यदाम्बिके।
कथमयं व्यथितोऽपि च पामरः,
पुनरहो कथयिष्यति ते कथाम्॥

हे माँ जगज्जननि! जब ब्रह्मा ही आपके सम्पूर्ण चरित्र को व्यक्त में समर्थ नहीं है तब यह दुःखी निरीह प्राणी आपके चरित्र का वर्णन कैसे कर पायेगा।

(3)

अयि तवाङ्घ्रिसमर्चनतत्परः,
प्रकुरुतेऽयमिमां यदि धृष्टताम्।
सुतमिमं परिचिन्त्य कृतागसं,
न हि करिष्यसि किन्नु शिवे क्षमाम्॥

हे माँ! आपके चरणकमलों की पूजा में संलग्न आपका यह भक्त यदि ऐसी धृष्टता करता है तो हे मंगलमयि! माँ! इसे उदण्ड पुत्र समझकर क्या आप क्षमा नहीं करोगी?

(4)

अयि कलाकलनाकलिताम्बिके,
कलयति त्वपि नैव धरां विधिः।
तव कृपार्द्रपरम्परया विना,
मम किमत्र दशा तु भविष्यति॥

समस्त कलाओं की चमत्कृति से युक्त हे माँ! आपकी निरन्तर कृपा दृष्टि के बिना जब विधाता तक भू लोक की संरचना करने में सक्षम नहीं है तो मुझ सदृश व्यक्ति की क्या दशा होगी।

(5)

निखिलविश्वनियन्त्रणमन्त्रणां,
त्वदधिगत्य सदैव सुरेश्वरि।
प्रकुरुते जगतः परिपालनं,
मधुरिपुः स हि चक्रधरो हरिः॥

हे माँ सुरेश्वरि! मधुसूदन चक्रधारी विष्णु जी भी समस्त विश्व को सुव्यवस्थित रूप से चलाने के लिये निरन्तर आपसे परामर्श प्राप्त करके जगत् का पालन करते हैं।

(6)

यदि शिवः कुरुते तु शिवं शिवे,
यदि हरो हरणं कुरुतेऽमरे।
अयि दयामयि देवि कृपापरे,
स हि कृपामवलम्ब्य करोति ते॥

हे दयामयि कृपामयि माँ जगदम्बे! यदि भगवान् शिव विश्व का कल्याण करते हैं, अथवा संहार करते हैं तो वे आपकी ही कृपा का आश्रय लेकर करते हैं।

(7)

पलघटीप्रहराश्च दिनादयः,
जननि येऽपि भवन्ति भुवः क्रमाः।
अयि तवाश्रयमेव निधाय ते,
परिचलन्ति निरन्तरमेव वै॥

हे माँ! पल, घड़ी, प्रहर, दिनादि जितने भी पृथ्वी के क्रम हैं? वे सब आपका ही आश्रय लेकर निरन्तर चलते हैं।

(8)

गगनमण्डलमण्डनभास्करः,
तपति यद् भुवने भुवनेश्वरि।
विधुरपि प्रददाति सुधांशुतां,
तव कृपाफलमेव विभाति तत्॥

हे लोकेश्वरि माँ भगवति! इस भू लोक में आकाश का भूषण देदीप्यमान भास्कर जो संसार को प्रकाश देता है, तथा चन्द्रमा भी जो शीतलता प्रदान करता है, वह सब आपकी कृपा का ही फल दिखाई देता है।

(9)

त्रिपथगा यमुना च सरस्वती,
सुरसरित्सदृशाः सरितस्समाः।
सलिलसंवलिताः प्रवहन्ति याः,
किमपि तत्र तवैव कृपा शुभा॥

हे जननि! प्रभूत जल से परिपूर्ण गंगा, यमुना, सरस्वती एवं मंदाकिनी सदृश जो भी नदियां बहती है, वहाँ भी किसी न किसी रूप में आपकी ही कल्याणकारी कृपा है।

(10)

विमलतामलतामृदुतापि या,
जननि शीतलतापि महोष्णता।
लवणता कटुताधिकतात्र या,
प्रतिविभाति जले तव रूपता॥

हे जननि! जल में जो निर्मलता, स्वच्छता, मृदुता, शीतलता, उष्णता, लवणता एवं कटुता आदि प्रतीत होती है वह सब आपका ही प्रतिबिम्ब प्रतीत होता है।

(11)

गिरिगुहावनवीथिझरापरा,
सकलसागरराशिमहत्तरा ।
विविधधान्यधनादिपरा धरा,
लसति ते कृपया परया परा॥

हे देवि माँ! आपकी कृपा से ही गिरि, गुफा, जंगल, मार्ग, झरने अथाह जल राशि वाले समस्त समुद्र तथा विविध धन धान्यादि से परिपूर्ण धरती शोभायमान है।

(12)

भवति चेदनले भुवि या शिवे,
दहनशक्तिरतीव भयावहा।
तदपि ते कृपया प्रतिभाति मे,
जननि हे सकलार्तिहरे प्रिये॥

हे मंगलकारिणि माँ! संसार में अतिभयंकर दाहक शक्ति वाली जो अग्नि दिखाई देती है। हे विपदविनाशिनि माँ! उसमें भी मुझे आपकी ही कृपा प्रतीत होती है।

(13)

नभसि या जगतः परिपालिके,
विपुलताञ्च तथैव महोच्चताम्।
अयि विलोकयतेऽत्र जनोऽनिशं,
तव विशेषविभाकृतिरेव सा॥

हे जगत्पालनकर्त्रि माँ! आकाश में जो विपुलता एवं विशालता दिखाई देती है, इसमें भी यह भक्त आपके विशेष वैभव के प्रतिबिम्ब को ही निरन्तर देखता है।

(14)

द्रुततरोऽपि च मन्दसुगन्धितः,
प्रलयरूपधरः पवनोऽथवा।
जगति योऽस्ति समस्तशरीरगः,
त्वमसि तत्र सदैव विराजिता॥

हे माँ भगवति! इस संसार में जो भी तीव्रतरगामी अथवा मंद एवं सुगन्धित अथवा प्रलयरूपधारी वायु और साथ ही समस्त शरीरों में विद्यमान प्राणादि वायु हैं, उन सबमें आप ही विराजमान हैं।

(15)

किमपि तत्त्वमुपैति महोज्ज्वले,
जगति चेत् प्रतिकूलफलं प्रति।
भवति तत्तव वक्रदृशैव किं,
नहि नहीति भवत्यनिशं शिवे॥

हे परम तेजस्विनि माँ! संसार में यदि कोई भी तत्त्व प्रतिकूलत्व को प्राप्त होता है, तो हे देवि माँ! वह भी क्या तुम्हारी वक्रदृष्टि से ही नहीं होता है? अर्थात् होता है।

(16)

यदि जलं भुवने त्वनलायते,
गिरिवरोऽप्यवनौ च कणायते।
जननि यद् भुवनन्तु जलायते,
तदपि तत्र कृपा तव दृश्यते॥

हे जननि! इस धरती पर जल जो अनलत्व को प्राप्त होता है, बड़े-बड़े पर्वत कणत्व को प्राप्त होते हैं, और संसार जलत्व को प्राप्त होता है, वह भी सब आपकी कृपा से ही संभव होता है।

(17)

तव निमेषनिमीलनमात्रतो,
ललितलास्यकले ललितेऽमले।
अहह याति जडत्वमनारतं,
जगति चेतनतापि महोत्तमा॥

ललितकलाओं की संरचना करने वाली हे आदर्श माँ! आपके पलक झपकने मात्र से ही संसार में परम उत्तम चेतनता भी निरन्तर जड़त्व को प्राप्त हो जाती है।

(18)

वदति मूकजनोऽद्रिशिखामपि,
व्रजति पङ्गुजनो नितरामुमे।
कवयते कवितां कृपयैव ते,
मलिनमंदमतिर्मनुजोऽपि सः ॥

हे परमेश्वरि माँ! आपकी कृपा से ही गूंगा व्यक्ति वाचाल हो जाता है, लंगड़ा मनुष्य पर्वतशिखर पर चलने में सक्षम हो जाता है, एवं मंद बुद्धि वाला तुच्छ मनुष्य भी काव्य रचना करने लगता है।

(19)

निखिलभूमितलातलसंकुला,
जननि सृष्टिरियं विविधा विधेः।
भ्रमति तिष्ठति याति चलाचला,
भवति सापि तवैव कृपान्विता॥

हे जननि! विधाता की वैविध्यपूर्ण समस्त तलातल संकुल चराचर यह धरती जो घूमती है, स्थिर रहती है, एवं विलीन हो जाती है वह भी आपकी कृपा का ही फल है।

(20)

त्वमसि सर्वसुखैकनिधिः शिवे,
त्वमसि पूर्णमयी गिरिजे जये।
त्वमसि विश्वविकासपरापरे,
त्वमसि मे जननी ममतामयी॥

हे मंगलकारिणि माँ! आप सम्पूर्णसुखों की भण्डार हो, हे जये! गिरिजे! आप पूर्णस्वरूपा हो, हे भगवति! आप विश्व के विकास में संलग्न हो, परन्तु आप सब कुछ होते हुए भी मेरे लिये केवल मेरी स्नेहमयी माँ हो।

(21)

त्वमसि विश्वविधानविधायिनी,
त्वमसि धर्मधुरन्धरधारिणी।
त्वमसि पाल्यसुपालनपालिनी,
त्वमसि पापपरायणपारिणी॥

हे भगवति माँ! आप संसार के विधान की विधात्री हो, आप श्रेष्ठ धार्मिक पुरुषों को आश्रय देने वाली हो, आप ही चराचर जगत्-की पालन करने वाली हो, तथा पापियों का उद्धार करने वाली भी आप ही हो।

(22)

त्वमसि भावविभावविभाविनी,
त्वमसि वागमृतामृतदायिनी।
त्वमसि सौम्यशरीरविधायिनी,
त्वमसि पुण्यविचारविकासिनी॥

हे देवि माँ! आप भावरूपी वैभव की प्रकाशिका हो, आप वाणीरूपी अमृत को सार्थक करने वाली हो, तथा आप ही सुन्दर शरीर की निर्मात्री एवं पवित्र विचारों का विकास करने वाली हो।

(23)

त्वमसि शुम्भनिशुम्भविनाशिनी,
त्वमसि रक्तविनाशविधायिनी।
महिषगर्वविमर्दनकारिणी,
त्वमसि सानुजचण्डविघातिनी॥

हे माँ! आप शुम्भ निशुम्भ एवं रक्तबीजादि असुरों का नाश करने वाली हो एवं महिषासुर के अहंकार का मर्दन करने वाली हो, एवं चण्ड और मुण्ड का वध करने वाली भी आप ही हो।

(24)

त्वमसि शक्तिरतीव भयावहा,
त्वमसि भक्तिरतीव सुखावहा।
त्वमसि युक्तिरतीव सुयोगदा,
त्वमसि मुक्तिरतीव शमप्रदा॥

हे जगदम्बे! आप ही अत्यन्त भयदायिनी शक्ति हो, आप ही परमसुखदायिनी भक्ति हो, आप ही कार्य सिद्धिकारिणी युक्ति हो, और आप ही संसार में अपार शांतिदायिनी मुक्ति भी हो।

(25)

त्वमसि जीवनगीतिसुगायिका,
त्वमसि जीवननीतिविधायिका।
त्वमसि जीवनभीतिविनाशिका,
त्वमसि जीवनरीतिसुचालिका॥

हे माँ! आप जीवन के गीतों की सुन्दर गायिका हो, आप ही जीवन-नीति की विधायिका हो, आप ही जीवन में आने वाले भयों का नाश करने वाली हो और जीवनरीति की सुन्दर सञ्चालिका भी आप ही हो।

(26)

त्वमसि बुद्धिविलासविलासिनी,
त्वमसि मानवमन्त्रविकासिनी।
त्वमसि दानवतन्त्रविनाशिनी,
त्वमसि विश्वसुशासनशासिनी॥

हे वाग्देवि माँ! आप बुद्धि के चमत्कार को चमत्कृत करने वाली हो, आप ही मानव चिन्तन का विकास करने वाली हो, आप ही दानवतन्त्र का नाश करने वाली हो, और संसार पर सम्पक् रूप से शासन करने वाली भी आप ही हो।

(27)

त्वमसि सर्वसुपुत्रयशस्विनी,
त्वमसि मानववंशमनस्विनी।
त्वमसि काव्यकलासु वचस्विनी,
त्वमसि मे जननी सुपयस्विनी॥

हे जननि! आप सुपुत्रों की कीर्ति का विस्तार करने वाली हो, मानव वंश के लिए मनस्विनी भी आप ही हो, आप ही काव्यकलाओं में वाग्वैभव प्रदान करने वाली हो, और अमृततुल्य दूध देने वाली मेरी माँ भी आप ही हो।

(28)

त्वमसि साधुजनस्य हितैषिणी,
त्वमसि दीनजनस्य च पालिनी।
त्वमसि धार्मिकपूरुषरक्षिणी,
त्वमसि मे जननी परमाम्बिके॥

हे परमाम्बिके! आप सज्जनों की हितैषिणी हो, दीनदु:खियों की हितकारिणी हो, धर्मसन्मत मार्ग पर चलने वालों की रक्षा करने वाली हो और मेरे लिये आप मेरी माँ हो।

(29)

त्वमसि काव्यविधिः परिधिर्भुवो,
नवनिधिः त्वमसि प्रविधिस्त्वसि।
त्वमसि भाग्यविधिः जनसौविधिः,
त्वमधितिष्ठसि सर्वविधिं भुवि॥

हे अम्बे! आप काव्य विधान की विधात्री हो, आप पृथ्वी की परिधि हो, आप ही नवनिधि हो, एवं संसार का विशिष्ट विधान भी आप ही हो। हे माँ! आप ही भाग्यविधि हो, संसार की समस्त सुविधा भी आप ही हो, धरती पर आप ही सर्वविध विराजमान हो।

(30)

सरलधीः निजपुत्रवराय ते,
कुटिलधीः कुटिलाय जनाय ते।
विमलधीः प्रियभक्तजनाय ते,
प्रतिविभाति सदैव तवाम्बिके॥

हे जगदम्बे! आप अपने सुपुत्रों के लिये सरल दिखाई देती हो, दुष्टों के लिये कुटिल दिखाई देती हो, अपने प्रिय भक्तों के लिये आप सदा ही निर्मल दिखाई देती हो।

(31)

जनकजा विजयापि जयाजया,
त्वमसि सर्वविधैव परापरा।
त्वमसि दक्षसुतापि च शाम्भवी,
त्वमसि विष्णुजिता किल वैष्णवी॥

हे देवि माँ! आप ही जनकजा हो, विजया हो, जया हो, अजया हो, आप ही सर्वविद्या परा-अपरा हो, आप ही हरप्रिया पार्वती हो तथा विष्णुजिता वैष्णवी भी आप ही हो।

(32)

त्वमसि काव्यमयी कवये यदि,
त्वमसि रागमयी ननु रागिणे।
परमहो तु मदर्थमनारतं,
त्वमसि सज्जननी करुणामयी॥

हे जगदम्बिके! कवि के लिये यदि आप काव्यरूपिणी हो, तो गायक के लिये रागस्वरूपिणी हो, किन्तु मेरे लिये तो आप निरन्तर करुणामयी एवं ममतामयी माँ ही हो।

(33)

त्वमसि शैलसुता च शिवप्रिया,
त्वमसि सिन्धुसुता च हरिप्रिया।
त्वमसि देवगिरा द्रुहिणप्रिया,
त्वमसि मे जननी भुवनप्रिया॥

हे अम्बे! आप ही शिवप्रिया पार्वती हो, आप ही हरिप्रिया लक्ष्मी हो, आप ही ब्रह्मप्रिया सरस्वती हो, परन्तु मेरे लिए आप लोकप्रिया मेरी ममतामयी माँ हो।

(34)

अयमहो तव मन्दसुतः परं,
ननु न वेत्ति तवाद्भुतगौरवम्।
नियम एष तवैव सदा शिवे,
भवति दीपतले हि तमोऽधिकम्॥

हे माँ! किंतु आपका यह मंदमति पुत्र निश्चित रूप से आपके अद्भुत माहात्म्य को नहीं जानता है। क्योंकि हे माँ! तुम्हारा सदा ही यह नियम रहा है कि दीपक के तले ही अधिक अंधकार होता है।

(35)

अयि महोत्सवरूपधरेऽजिते,
शिशुरयं चपलो विमलोऽमितः।
अविगणय्य तवाद्भुतगौरवं,
प्रकुरुते शठतां जडतामपि॥

विशालोत्सवरूपधारिणि अजिते हे माँ! निर्मल बुद्धि वाला अत्यन्त चंचल यह बालक आपके आश्चर्यजनक गौरव को न जानकर धूर्तता एवं मूर्खता करता रहता है।

(36)

उदयितुं गदितुं पठितुं रमे,
तव महोज्ज्वलरूपमिदं प्रियम्।
धरति योगिजनोऽपि पुनः पुनः,
बहुविधं किल जन्म धरातले॥

हे माँ! इस विराट उज्ज्वल एवं प्रिय रूप को प्रकट करने के लिये, वर्णन करने के लिये एवं पढ़ने व समझने के लिये ऋषि-मुनि भी धरती पर विविध रूपों में बार-बार जन्म लेते हैं।

(37)

यतिवरैस्स्तुतिभिर्मधुरं शिवे,
बहुविधं विमलं चरितञ्च ते।
विलिखितं, गदितुं पठितं, प्रियं,
सकलमन्त्रमहोदधिपारगैः ॥

हे माँ शिवे! समस्त मन्त्र महासागर में पारंगत मुनियों द्वारा स्तुतियों से नानारूपधारी मधुर एवं निर्मल आपका प्रिय चरित लिखा गया है, तथा पढ़ा गया है।

(38)

किमणिमादिसमस्तसुसिद्धयः,
त्वयि भवन्ति च यान्ति विशन्ति ते।
विविधमार्गगताः सरितो यथा,
जननि सर्वविधा न महार्णवे॥

हे जननि! जिस प्रकार अलग-अलग मार्गों से प्रवाहित होने वाली नदियाँ महासागर में विलीन हो जाती हैं उसी प्रकार क्या अणिमादि सारी सुसिद्धियाँ आप ही में नहीं अभिव्यक्त होती हैं, क्या आपकी ही ओर नहीं जाती हैं, और क्या आप में ही विलीन नहीं हो जाती हैं?

(39)

तव चरित्रमिदं गदितुं शिवे,
किमिह नैव कृतं धरणीतले।
कतिजनैर्गलितं स्ववपुस्त्वपि,
कठिनतापसकर्मरतैः सदा॥

हे माँ शिवे! इस धरातल पर योगियों ने आपके इस चरित्र को समझने के लिये क्या नहीं किया! कठोर तापस नियमों का पालन करने में संलग्न कितने ही योगियों ने अपने शरीर तक को गला दिया।

(40)

तव सुदर्शनलाभसमीहया,
चरणनिर्गततोयसुवाञ्छया ।
प्रकुरुते ह्यनुरागरसेप्सया,
मुनिरहो किमु नैव निजेच्छया॥

हे माँ! आपके दर्शनलाभ की अभिलाषा से, चरणामृतपान की इच्छा से, आपके स्नेह प्राप्ति की कामना से मुनि-जन अपनी इच्छा से क्या-क्या नहीं करते।

(41)

कदाचित् कान्तारे गिरिगहनगर्भेष्वपि शिवे,
कदाचिद् गंगाया विमलपुलिने चापि गिरिजे।
कदाचिन्मातस्ते निलयनिकटेऽप्येव निखिला,
भ्रमन्तो दृश्यन्ते तव चरणभक्तिं प्रतिपराः॥

हे माँ शिवे! आपके चरणों की भक्ति में परायण भक्तजन कभी जंगल में, कभी पर्वत की गहन गुफाओं में, तो कभी हे गिरिजे! गंगा के निर्मल तट पर, तो कभी हे माँ! आपके मंदिर के निकट घूमते हुये दिखाई देते हैं।

(42)

अहो मातः कश्चित्तवचरणसेवासुनिरतः,
चलन् खादन् तिष्ठन् जपति तव नामैव नितराम्।
तथैवान्यः कश्चिज्जननि जनताया जयकरे,
त्वदीयं वैशिष्ट्यं भजति भवदुःखौघशमनि॥

सांसारिक कष्टों को दूर करने वाली हे माँ! आपके चरण-वन्दन में लीन कोई भक्त चलते, फिरते, खाते, बैठते, निरन्तर आपके नाम को ही जपता है। जनजयकारिणि हे जननि! तो उसी तरह दूसरा कोई अन्य भक्त आपके वैशिष्टय का निरन्तर भजन करता रहता है।

(43)

जनः कश्चिल्लोके बहुविधिपवित्रं सुविमलं,
परिज्ञातुं रूपं जननि तव सौम्यं प्रियकरम्।
निजं भव्यं गेहं सुतमपि शुभां चारुचरितां,
प्रियां पत्नीं त्यक्त्वा भ्रमति भवदुःखौघविकलः॥

हे जननि! कोई सांसारिक-दुःखों से अशान्त मनुष्य संसार में परम पवित्र, निर्मल, प्रिय एवं सौम्य आपके स्वरूप को जानने के लिये अपने भव्य भवन, पुत्र तथा मनोहर एवं सुन्दर चरित्र वाली प्रियपत्नी तक को त्याग कर घूमता रहता है।

(44)

समृद्धं रम्यं ते चरितममलं चारुचरिते,
जगत्यां हे मातः विविधविधगानैः सुमधुरैः।
परानन्दे मग्ना भगवति कियन्तश्च मनुजा,
अजस्रं गायन्तो ललितवचनैर्भक्तनिवहाः॥

हे माँ भगवति! हे चारुचरिते! कितनी ही भक्त मण्डलियाँ आपके मनोहर, समृद्ध एवं निर्मल चरित को सुमधुर एवं ललित वचनों से युक्त विभिन्न प्रकार के गीतों द्वारा निरन्तर गाती हुयी परमानन्द में लीन हो जाती हैं।

(45)

जगद्रक्षादक्षे परहितरते पुण्यचरिते,
भजन्ति त्वां केचिद् यमनियमदीक्षापरतराः।
विभिन्नैर्मन्त्रैर्वा कतिपयजनास्तन्त्रविधिना,
समर्चां कुर्वन्ति प्रमुदितहृदा ते यतिवराः॥

संसार की रक्षा में दक्ष, लोककल्याण में संलग्न, पुण्यचरित हे माँ! यमनिमयादि की दीक्षा में पारंगत कुछ भक्त विविध मन्त्रों द्वारा आपका भजन करते हैं, तो अन्य श्रेष्ठ-यति प्रसन्नचित्तपूर्वक तन्त्रोक्तविधि से आपकी अर्चना करते हैं।

(46)

अये मातः कश्चिद् यतिवरवरो भव्यवदनो,
निरुद्ध्य स्वान् प्राणान् श्रवणसुखदे योगविधिना।
सहस्रारे पद्मे समरससुखस्वादरसिके,
त्वदीयं सौन्दर्यं जननि सततं पश्यति मुदा॥

मधुर वचनामृत के द्वारा कानों को परम सुखदेवाली व समरसता के भावों को प्रदान करने वाली हे माँ! कोई परमतेजस्वी, श्रेष्ठ-यति अपने प्राणों को योगविधि द्वारा रोककर सहस्त्रदल कमल-वासिनी आपके सौन्दर्य को आनन्द पूर्वक देखता है।

(47)

प्रसुप्तां स्वां शक्तिं निजहृदिनिवासैकचतुरां,
प्रभिन्दन्तो गूढं कवचमिव षट्चक्रममलम्।
प्रदातुं चैतन्यं कति कति यतीन्द्रा भगवति,
तदा गच्छन्त्येते परमशिवसायुज्यपदवीम्॥

हे माँ भगवति! कोई श्रेष्ठयति अपने हृदय में एक मात्र वास करने वाली चतुर अपनी सुप्तशक्ति को चैतन्य प्रदान करने के लिये कवचवत् दृढ एवं निर्मल षट्चक्र का भेदन करते हुये परम शिव-सायुज्य के उच्च पद को प्राप्त करता है।

(48)

शिवा सुप्ता शक्तिर्विषधरसमा यत्र नितरां,
सुमूलस्थे लिङ्गे द्रुमफलमिवाधोमुखमये।
वकाराद्यैर्युक्ते त्रितयधमनीजन्मनिलये,
प्रिये मूलाधारे जपति तव गीतं यतिवरः॥

शरीर में विराजमान तीनों धमनियों के निवास स्थान में स्थित सर्पाकार एवं वृक्ष के फल के समान अधोमुख तथा वकारादिवर्णों से युक्त मूलस्थलिङ्ग प्रियमूलाधार चक्र में सुप्त कल्याणी शक्ति को जागृत करने के लिए योगी-लोग हे माँ! तेरे गुणों का जाप करते रहते हैं।

(49)

सुषुम्णाया मध्ये भगवति वकारादिसरलैः,
सुयुक्ते सद्वर्णैरनवरतरक्ताम्बुजपरे।
तव स्वाधिष्ठाने प्रियविमलचक्रे तव गुणान्,
भजद्भिर्भक्तैस्तैर्भवविभवता नन्वधिगता॥

रक्तकमल में निवास करने वाली हे माँ भगवति! सुषुम्णा के मध्य वकारादि सरल सुप्रयुक्त सद्वर्णों द्वारा परिपूर्ण आपके अपने निर्मल प्रिय ''अधिष्ठान चक्र'' में निरन्तर आपका गुणानुवाद करते हुये भक्तों ने निश्चय ही संसार के सम्पूर्ण ऐश्वर्य को प्राप्त कर लिया है।

(50)

अये कश्चिद् योगी दशदलयुते मेघसदृशे,
युतैः डाद्यैर्वर्णैर्भगवति सुनीलाम्बुजमये।
तृतीये नाभिस्थे जननि मणिपूराख्यविमले,
जपँस्त्वां तच्चक्रे वचसि लभते वाग्विभवताम्॥

हे देवि माँ! कोई योगी मेघ सदृश दसदलीय सुन्दर नील-कमलमय नाभिस्थ डादिवर्णों से युक्त ''मणिपूर'' नाम वाले तृतीय निर्मल चक्र में आपको जपता हुआ वाग्वैदग्ध्य को प्राप्त करता है।

(51)

अये चित्ते पद्मोपरि विमलबन्धूकसदृशं,
युतं काद्यैर्वर्णैर्ललितललितं सर्वसुखदम्।
प्रियं रम्यं चक्रं विलसति सदानाहतमिदं,
भजन्ति त्वां तस्मिन् जननि मुदिताः सिद्धमुनयः॥

हे जगदम्बे! हृदयकमल के ऊपर निर्मल बन्धूक पुष्प सदृश, कादिवर्णों से युक्त, सर्वजन सुखदायक, अत्यन्त लालित्यपूर्ण, प्रिय एवं सुन्दर यह ''अनाहत चक्र'' निरन्तर चमकता रहता है। हे माँ! इस चक्र में स्थित होते हुए आनन्द विभोर सिद्धि-प्राप्त मुनिजन आपका भजन करते रहते हैं।

(52)

स्वैः सर्वैः दीप्तं परमविमलं धूमसदृशं,
शरद्राकाचन्द्रप्रतिममनिशं कान्तिनिचयम्।
सुधासिन्धोस्तुल्यं सरसिजमिदं शक्तिनिलयं,
विशुद्धाख्यं कण्ठे प्रविलसति रम्यं हितकरम्॥

हे माँ भवगति! समस्त सप्तस्वरों से कांतिमान, परमनिर्मल, धूम सदृश सुधासागर तुल्य, शरद्पूर्णिमा के चन्द्रवत् कांतिपुंज, कल्याणकारी, रमणीय, शक्तिकोष यह "विशुद्ध" चक्र कण्ठदेश में चमकता है।

(53)

ज्वलद्दीपाकारं हिमकरनिभं भ्रूविलसितं,
कलाभ्यां हक्षाभ्यां परिलसितदेहं शिवपदम्।
तडिन्मालातुल्यप्रणवसहितं दीप्तिनिकरं,
तवाज्ञाचक्राब्जं सकलसुखदं राजति शिवे॥

हे माँ शिवे! जलते हुये दीपक के आकार वाला, चन्द्रमा की आभा वाला, भ्रूविलसित, हकार क्षकारादि कलाओं से युक्त शिवत्व से परिपूर्ण स्वरूपधारी, विद्युन्माला की तरह तेजोराशि युक्त, समस्त प्राणियों को सुख देने वाला आपका यह "आज्ञाचक्र" शोभायमान हो रहा है।

(54)

शिवाकारं शान्तं वरदमभयं सौख्यसदनं,
लकाराद्यैर्वर्णैर्विलसति वपुः हर्षनिकरम्।
सुशंखिन्याः युक्तं दशशतदलीयं विधुरिव,
सहस्राम्भोजन्ते यतिवरवरेण्यं विजयते॥

हे माँ! शिवस्वरूप, शान्त, वरदायक, निर्भय, सौख्य-सदन, परमानन्द का सागर, लकारादिवर्णों से, देदीप्यमान स्वरूप वाला, सुशंखिनी से संयुत, पूर्णचन्द्र तुल्य सहस्त्रदलयुक्त, योगियों के लिए वरणीय आपका "सहस्त्रार चक्र" विशेषोत्कर्ष से विराजमान रहे।

(55)

सुधाधारासारे दशशतदलीये सरसिजे,
वसन्तीं त्वां धन्ये सरलहृदये मन्दहसिते।
प्रबोधं कुण्डल्या जननि ननु कृत्वा मुनिजना,
भजन्ति त्वद्‌भक्ताः प्रणतशिरसानन्दलहरीम्॥

सरलहृदय एवं मन्दहसित, धन्यस्वरूपिणि, अमृतवर्षिणि सहस्त्र-दलकमल में निवास करने वाली आनन्ददायिनि हे माँ! आपके भक्त मुनिजन कुण्डलिनी को जागृत कर नतमस्तक होकर आपका भजन एवं स्तवन करते हैं।

(56)

क्वचित्कश्चिन्मातो जगति तव भक्तिं प्रति दृढः,
जले वा पञ्चाग्नौ जननि विपरीततर्तुषु पराम्।
स्थितो भक्त्या भक्तो भवविभवदुःखौघशमिते,
पराम्बे पाहि त्वां जपति परिपाहीति जपति॥

सांसारिक समस्त दुःखों को दूर करने वाली हे माँ! संसार में किसी भी स्थान पर आपके प्रति दृढ़भक्ति वाला कोई भक्त विपरीत ऋतुओं में जल या पंचाग्नि में स्थित निरन्तर आपकी उपासना में तल्लीन होता हुआ हे माँ! मेरी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो, इस प्रकार भक्तिपूर्वक आपके नाम को जपता रहता है।

(57)

क्वचिज्जिह्वाछेदं क्वचिदपि शिरश्छेदनमपि,
विधायाम्बे भव्ये तवचरणभृङ्गो भुवि पुरा।
दृढां स्वां भक्तिं त्वां प्रति जननि भक्तः प्रकटयन्,
निजात्मानं धन्यं कलयति जगत्यां बहुविधम्॥

देदीप्यमान स्वरूप वाली हे जगदम्बे! प्राचीनकाल में इस धरती पर आपके चरणों का सेवक कभी जिह्वा छेदन कर तो कभी सिर-छेदन कर आपके प्रति अपनी दृढ़भक्ति व्यक्त करता हुआ इस संसार में स्वयं को बहुविध धन्य मानता था।

(58)

करोत्यर्चां कश्चिज्जननि हठयोगेन भुवि ते,
श्रियो यन्त्रेणार्चां कलयति च कश्चिद् यतिवरः।
जनः कश्चिद्गीतैर्विविधविधवाद्यैश्च मधुरैः,
सपर्यां ते कृत्वा सपदि परमं गच्छति मुदम्॥

हे जननि! संसार में कोई हठयोग से, तो कोई यतिश्रेष्ठ-श्रीयन्त्र से तो अन्य विविधविध वाद्ययन्त्रों द्वारा मधुर गीतों एवं स्तुतियों से आपकी अर्चना कर परमानन्द को प्राप्त होते हैं।

(59)

महामाये मातो यदि जगति लोको बहुविधां,
क्रियामादाय त्वां भजति निजसौख्यं परिजहत्।
कुधीः कामी क्रोधी परमकृपणो लोभवशगः,
कथं वेत्तुं शक्तस्तवगुणकथां कर्मरहितः॥

हे जननि! संसार में आपके महनीय चरित्र को जानने वाला सज्जन प्राणी अपने समस्त सुखों का परित्याग करते हुये बहुविध क्रियाओं का आश्रय लेकर आपको भजता है। किन्तु दुर्बद्धि, कामी, क्रोधी, लोभाविष्ट, परमकृपण, अकर्मण्य मैं आपके माहात्म्य को कैसे जान सकता हूँ।

(60)

तव स्तन्यं पीत्वा तवचरणयोर्वापि विलुठन्,
त्वदङ्के स्थित्वापि प्रियहृदयवासे तव कृते।
विलोक्य त्वद्रूपं पुनरपि पुनः मातृचरणे,
नहि ज्ञातः मातः किमपि महिमा ते कथमिव॥

हे माँ! आपके अमृत तुल्य दुग्ध का पान कर, आपके चरणों में लौटते हुये, आपकी गोद में बैठकर, आपके प्रिय हृदय में वास करके, आपके स्वरूप को बारम्बार देखकर भी मैं आपकी महिमा को किसी भी प्रकार से कुछ भी नहीं जान पाया।

(61)

किमशरण्यजनं शरणं त्विमं,
शरणदे नहि नेष्यसि सत्वरम्।
यदि तवाश्रय एति न मां रमे,
मरणमेष्यति मे शरणं ध्रुवम्॥

हे शरणदायिनि माँ! आप इस शरणहीन जन को क्या शीघ्र ही अपनी शरण में नहीं लोगी? यदि आपका आश्रय मुझे प्राप्त न हुआ तो मृत्यु ही निश्चित रूप से मेरी शरण होगी।

(62)

यदि कृपार्द्रसुधांशुकणैः स्वकैः,
सुतमिमं न विकासयसि द्रुतम्।
त्वरितमेष दशान्तु गमिष्यति,
कुमुदिनीव निशाधिपतिं विना॥

हे माँ! यदि आप अपने दयार्द्र अमृत कणों से इस पुत्र का शीघ्र ही विकास नहीं करती हैं तो चन्द्रमा के बिना कमलिनी की भांति तुरंत ही तुम्हारा यह पुत्र शोचनीय दशा को प्राप्त हो जायेगा।

(63)

स्वमनुरागरसं निजपुत्रकं,
त्वमयि पास्यसि मां न हि चेच्छिवे।
तव सुतस्य दशास्य तथैष्यति,
जलमृते हि झषस्य यथाम्बिके॥

हे माँ शिवे! यदि अपने अनुरागरूपी रस का पान अपने पुत्र मुझे नहीं कराओगी तो आपके इस पुत्र की वैसी ही दशा होगी जैसे तालाब के जल के सूख जाने पर मीन की होती है।

(64)

तरणितीव्रतमां द्युतिमद्भुतां,
त्वमिह मां व्यथितं मनुजं प्रति।
अयि दयामयि यच्छमनोभरे,
सकलदुःखहरे वसुधाधरे॥

समस्त दुःखों को हरने वाली, पृथिवी को धारण करने वाली एवं हृदय को अपार आनन्द प्रदान करने वाली हे दयामयि माँ! आप इस संसार में मुझ दुःखी व्यक्ति को सूर्य के समान अत्यन्त तीव्र एवं अद्भुत कान्ति प्रदान करो।

(65)

असफलो मनुजः सफलीकृतः,
कलुषितोऽपि जनो विमलीकृतः।
कुटिलधूर्तजनो मृदुलीकृतः,
निजकृपार्द्रहृदा त्वरितं त्वया॥

हे देवि माँ! आपने अपने कृपालु हृदय से शीघ्र ही असफल प्राणी को सफल, कलुषित को स्वच्छ, कुटिल एवं धूर्त मनुष्य को मृदुल बना दिया है।

(66)

सफलतामफलाकृतिरद्भुतां,
सपदि याति न ते किमनुग्रहैः।
विफलतामपि सर्वफलक्रिया,
किमयि याति न ते किल विग्रहैः॥

हे माँ जगदम्बे! क्या आपके अनुग्रह से निष्फल कार्य भी तुरन्त अद्भुत सफलता को प्राप्त नहीं होते! और सफल कार्य भी आपकी कृपा के बिना विफलता को प्राप्त नहीं होते!।

(67)

स्वजननीं परिवीक्ष्य यथा सुतो,
भवति भीतिपरोऽप्यनुशासितः।
अयि तथैव जनोऽपि भवत्यसौ,
भगवतीं परिवीक्ष्य चिदम्बिकाम्॥

हे जगज्जननि! जैसे अनुशासित पुत्र भी अपनी माँ को देखकर भयभीत हो जाता है वैसे ही यह सेवक भी साक्षात् रूप में आपको देखकर भयभीत हो जाता है।

(68)

तव कृपार्द्रकटाक्षनिरीक्षणं,
भवति यं मनुजं प्रति भूतले।
जननि तस्य च यान्ति विपत्तयः,
सपदि दूरमिति स्थिरनिश्चयम्॥

हे जननि! आपकी कृपामयी दृष्टि जिस किसी भी प्राणी पर पड़ती है उसकी समस्त विपत्तियाँ तुरन्त दूर हो जाती हैं। ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

(69)

मुखरता मयि यद्यपि विद्यते,
सकलतापहरे सदयाम्बिके।
अयमहन्तु तथापि भवाम्युमे,
सपदि मूकसमस्तव सम्मुखे॥

समस्त तापों को दूर करने वाली दयामयि हे जगदम्बिके! यद्यपि मैं अत्यन्त वाचाल हूँ किन्तु हे माँ! आपके सामने भय से मैं एकदम गूंगा सा हो जाता हूँ।

(70)

तव विलोक्य महाप्रलयान्तिका-,
मतुलशक्तिमिमां महदद्भुताम्।
अयि तथैव विशन्त्यरयो बिलं,
खगपतिं परिवीक्ष्य यथोरगाः॥

हे माँ! आपकी महाप्रलयकारी एवं आश्चर्यजनक शक्ति को देखकर शत्रु उसी प्रकार बिल में प्रवेश करते हैं जिस प्रकार गरुड़ को देखकर साँप।

(71)

हरति कष्टमशेषजनस्य या,
दिशति या सुमतिं सततं जने।
वितनुते स्वसुतस्य यशोऽनिशं,
जयतु सा जननी जनवल्लभा॥

जो समस्त प्राणियों के कष्टों को दूर करती है। उन्हें सदैव सद्बुद्धि प्रदान करती हैं। जो अपने पुत्र की कीर्ति का विस्तार करती है ऐसी लोकप्रिया जननी की जय हो।

(72)

वितरति प्रथितं व्यथितं सुतं,
सततमत्र च या सुखसन्ततिम्।
विजयतां जननी भुवने हि सा,
सकलसौख्यकरी ममतामयी॥

जो अत्यन्त दुःखी पुत्र को निरन्तर सुख-सन्तति प्रदान करती है। ऐसी सकलसौख्य-प्रदात्री ममतामयी माँ की संसार में विजय हो।

(73)

परविपत्तिविनाशनसक्रिया,
विभवभोगसुखं प्रतिनिष्क्रिया।
प्रणवरूपधरा प्रणतप्रिया,
विजयते जननी जनताजया॥

दूसरों के कष्टों को दूर करने में संलग्न सुख, सम्पत्ति, भोग के प्रति निष्क्रिय, ओंकाररूपमयी विनम्र भक्तों की प्रिय, सर्वज्ञानप्रिय माँ भगवती की जय हो।

(74)

प्रणतपालनपालनतत्परे,
गिरिसुते सुरपूजितपूजिते।
जनवरार्चितचारुपदाम्बुजे,
त्वमयि मां परिपाहि पराम्बिके॥

भद्रजनों के पालन पोषण में तत्पर हे माँ! देवताओं एवं श्रेष्ठ मनुष्यों द्वारा निरन्तर पूजित चरणकमलों वाली हे पराम्बिके माँ भगवति! आप सर्वविध मेरी रक्षा करो।

(75)

असुरनाशविनाशनसंरते,
सुरविकासविकासविकासिते ।
मुनिजनस्य हिते निरते रते,
विजयसे त्वमये विजये जये॥

असुरनाश एवं देवताओं के अभ्युदय तथा ऋषिमुनियों के कल्याण में निरन्तर क्रियाशील विजये! जये! आपकी जय हो, जय हो।

(76)

सकलतापनिकृन्तनकारिणी,
भवविभूतिसमस्तविधायिनी ।
मतिमताञ्च सतां कृतिशंसिनी,
विजयतां जननी जनमोहिनी ॥

संपूर्ण कष्टों को नष्ट करने वाली, संसार की समृद्धि के विधान को करने वाली, बुद्धिमान् एवं सद्पुरुषों के कृतित्व की अनुशंसा करने वाली जनमनमोहिनी माँ जगदम्बा की विजय हो।

(77)

परिधशूलगदासिधरे रमे,
मुकुटराजिविराजितमस्तके ।
अयि मृगेन्द्रसुवाहनसंस्थिते,
त्वमव मां कमलासनभूषिते ॥

शत्रुसंहार हेतु परिघ, शूल, गदा एवं तलवार धारण करने वाली, मणिखचितमुकुट से देदीप्यमान मस्तक वाली, मृगेन्द्र रूपी उत्कृष्ट वाहन पर विराजमान, कमलासान पर सुशोभित हे माँ भगवति! आप मेरी रक्षा करो।

(78)

परमपावनपावनपावनी,
विविधवैभवभावविभाविनी ।
गुणवतां गुणगौरववर्धिनी,
भवतु मे जननी भवभाविनी ॥

परम पावन को भी पुनीत करने वाली, वैभव के विविध स्वरूपों को प्रकट करने वाली, गुणवानों के गुणगौरव को बढ़ाने वाली, संसार को प्रकाशित करने वाली आप मेरी परमादरणीया माँ हो।

(79)

महितमंगलमंगलमंगले,
कमलनिर्मलनिर्मलनिर्मले ।
जन विनोदविनोदविनोदिते,
विजयसे जयदे जयदेऽजिते॥

अनन्तकल्याणदायिनि! जनाह्लादकारिणि! कमल के समान अत्यन्त निर्मल! विजय-प्रदायिनि! अजये हे माँ! आपकी निरन्तर जय हो।

(80)

कनककाञ्चनकाञ्चनकान्तिदे,
जगति शान्तिसुशान्तिसुशान्तिदे।
सुधनदे धनदे धनदे हिते,
विजयसे मतिदे मतिदे शिवे॥

संसार में स्वर्णिमकान्तिप्रदायिनि! अतुलनीयशान्तियिनि! समस्त प्राणियों को अभीष्ट ऐश्वर्य एवं सद्बुद्धिदात्रि हे माँ! आपकी विजय हो।

(81)

जगति कोपवती महती सती,
कवलितं कुरुते सकलं हि या।
जयति सा कलिकल्मषनाशिनी,
कुपितरूपधरा किल कालिका॥

जो माँ संसार में अत्यन्त क्रोधित होकर समस्त ब्रह्माण्ड को अपना ग्रास बना लेती है। कलियुग के पापों को नाश करने वाली, क्रोधस्वरूपिणी उस माँ काली की जय हो।

(82)

विपदि संपतितास्त्रिदशा अपि,
शरणयन्ति तवैव पदाम्बुजे।
त्वमयि तान् ननु रक्षसि हे शिवे,
सहृदयाजननीव निरन्तरम्॥

हे देवि माँ! आपदग्रस्त देवता भी आपके चरणाकमलों में शरण लेते हैं। और आप सहृदय माँ की भांति उनकी रक्षा करती हो।

(83)

प्रमुदितैर्मुदितैः प्रणतैः प्रियैः,
तव सुतैः क्रियते सततं शुभैः।
जननि ते चरणाम्बुजयोस्तयोः,
नतिततिः प्रणतिश्च नमस्कृतिः॥

हे जननि! परम प्रसन्न, नतमस्तक, प्रिय तेजस्वी पुत्र आपके चरणकमलों में सदा ही बारम्बार प्रणाम करते हैं।

(84)

अयि सुधारसदानपरायणे,
कुटिलदानवदारणदारुणे ।
नतिततिं प्रणतिं तव पादयोः,
प्रकुरुते कुरुते कुरुते त्वयम्॥

अमृत रस प्रदान करने में तत्पर, दुष्ट दैत्यों के संहार के समय उग्रस्वरूपिणि हे माँ! यह भक्त आपके चरणों में बारम्बार नमस्कार करता है।

(85)

अतुलशक्तिधरा लयकारिणी,
निखिलशांतिपरा शुभधारिणी।
विविधभावभरा सुखसारिणी,
विजयतां जननी भयतारिणी॥

अप्रतिम शक्तिधारिणी, प्रलयकारिणी, मनोहारिणी, सुखसारिणी, भयहारिणी संपूर्ण शांति हेतु क्रियाशील, विविध भावों से परिपूर्ण माँ भगवती की विजय हो।

(86)

अयि तव स्मरणं स्मरणं शिवे,
ननु भवार्णवतारणके विधौ।
भवतु मे तरणिस्तरणिप्रभे,
जननि जीवनसारसुसारिणी॥

सूर्य के समान प्रभामयि! हे माँ शिवे! संसार सागर को पार करने की विधि में आपका स्मरण मेरे लिये नैया बने। हे जननि! आप ही मेरे जीवन की सार हो।

(87)

परमभक्तिमयी शुभभावना,
न जननीं प्रति यस्य हृदन्तिके।
भवति तस्य निरर्थकजीवनं,
विमलगन्धहतं कुसुमं यथा॥

जिसके हृदय में माँ जगदम्बा के प्रति परमभक्तिमयी शुभभावना नहीं है उसका जीवन सुगन्धहीन पुष्प की भांति निरर्थक है।

(८८)

परमया रमया रमयन्मनः,
परिजहन् मनुजस्तवगौरवम्।
भुवनमेव समस्तसुखालयं,
ननु विचिन्त्य करोत्यतिमूर्खताम्॥

हे माँ! आपकी महिमा का अनादर करते हुये सांसारिक सुखों में रमण करते हुये जगत् को ही समस्त सुखों का निवास मानकर मनुष्य बड़ी मूर्खता करता है।

(८९)

नहि बलं न धनं न कुलं गृहं,
न च सखा न हि कोऽपि च बांधवः।
न च मतिर्नगतिर्नरतिर्रमे,
त्वमयि केवलमेव ममाम्बिके॥

हे माँ! न मेरे पास धन है, न बल है, न कुल है, न घर है, न बन्धु है, न बान्धव हैं, न मति है, न गति है, न रति है, अर्थात् मेरे पास कुछ भी नहीं है यदि मेरे पास है तो केवल आपका आश्रय।

(९०)

यदपि वस्तु मदर्थमतिप्रियं,
जननि दत्तमिदं भुवने त्वया।
प्रमुदितेन हृदा परिपालय,
त्वमयि तद् विनयं विदधाम्यहम्॥

हे माँ! आपने संसार में जो भी परमप्रिय वस्तु मुझे प्रदान की हैं। उन समस्त वस्तुओं की आप प्रसन्नता से रक्षा कीजिए। यह मेरी आपसे सविनय प्रार्थना है।

(91)

जननि यद् भुवनेऽस्ति ममाप्यहो,
तदपि ते सकलं प्रतिभाति मे।
त्वमत एव सुनिश्चितमेव हि,
जननि तस्य भविष्यसि पालिका॥

हे जननि! संसार में जो कुछ भी मेरा है वह मुझे सब कुछ आपके द्वारा दिया हुआ प्रतीत होता है। अत एव हे माँ आप निश्चिय ही उसकी देखभाल भी करोगी।

(92)

जगति येऽपि च वस्तुचया अहो,
विरचिताः किल ते च सदा त्वया।
जननि तैः सह ते तुलनां यदि,
प्रकुरुते कविरत्र तदज्ञता॥

हे जगदम्बे! संसार में जितने भी पदार्थ हैं उनकी रचना आपने ही की है। अतः हे भगवति! यदि उन पदार्थों से आपकी तुलना की जाती है तो इसमें कवि की अल्पज्ञता ही प्रतीत होती है।

(93)

अतुलनीयचरित्रवतीं शिवां,
यदि तुलामधिरोहयते कविः।
अहह तद्गुरुता प्रतियात्यहो,
सपदि भूमितले किल हीनताम्॥

यदि कवि अप्रतिम चरित्रवती कल्याणकारिणी माँ भगवती की सांसारिक किसी वस्तु से तुलना करता है तो शीघ्र ही उस कवि का गौरव धरती पर कम हो जाता है।

(94)

सफलता निजकर्मसु चेच्छिवे,
मिलति वा मिलतीति न मां यदि।
भवति तत्र यशोऽपयशस्तव,
यदधुनास्ति तवास्ति जनो ह्ययम्॥

हे माँ शिवे! मुझे अपने कार्यों में सफलता मिलती है अथवा नहीं मिलती है तो इसमें यश अपयश आपका ही है क्योंकि इस प्राणी के पास जो कुछ भी है वह सब आपका ही दिया हुआ है।

(95)

जननि मत्परिवारपरम्परां,
यदधुना त्वमिमां परिपश्यसि।
अयि दयामयि रक्ष निरन्तरम्,
सुमनसा वचसापि च कर्मणा॥

हे अम्बे! जो आप मेरे परिवार की परम्परा को देख रही हैं। हे दयामयि माँ! मन, वचन एवं कर्म से आप हमारे समस्त परिवार की सदा ही रक्षा करना।

(96)

सकलशब्दमयीं मधुरां प्रियां,
स्तुतिमिमामतिभक्तिसमन्विताम्।
प्रमुदितः प्रणतो हि जनोऽधुना,
चरणयोस्तु तवार्पयतीन्दिरे॥

हे माँ इन्दिरे! परमभक्तिपूर्ण इस समस्त शब्दात्मिका, मधुर एवं प्रिय स्तुति को अतिप्रसन्न एवं नतमस्तक हुआ यह भक्त आपके श्री चरणों में अर्पित करता है।

(97)

हिमगिरेर्निकटे तव सन्निधौ,
वसतिरत्र परम्परया च या।
जननि तत्र निवासपरात्मना,
विलिखितं स्तवनं हि सुतेन ते॥

हे जननि! हिमालय के पास आपके सान्निध्य में जो ह्यूण (यमुनापुर) नामक बस्ती है उस बस्ती में रहने वाले आपके इस पुत्र श्रीकृष्ण सेमवाल ने यह स्तुति लिखी।

(98)

वपुरिदं परिवीक्ष्य शवात्मकं,
भयपराः प्रभवन्ति यदा निजाः।
अवनिरूपधरे सकलाश्रये,
शरणदापि तदा त्वमहो शिवे॥

निर्जीव इस शरीर को शव रूप में देखकर जब स्वजन तक भयभीत हो जाते हैं तो समस्त प्राणियों को आश्रय देने वाली धरारूपिणि हे माँ! तब आप ही आश्रय स्थली बनकर उस समय शरण देती हो।

(99)

यदि मया रचितं जगदम्बिके,
त्रुटिमयं पदमत्र किमप्यहो।
मम सुभक्तिविलोकनतत्परे,
ह्यवगणय्य दयस्व दयात्मिके॥

हे माँ जगदम्बिके! यदि मेरे द्वारा कोई भी त्रुटिपूर्ण पद लिखा गया हो तो हे दयामयि माँ! मेरी परमभक्ति को ध्यान में रखकर उसकी उपेक्षा कर मुझ पर कृपा कीजिए।

(100)

प्रतिदिनं स्तवनस्य सुवाचनं,
प्रकुरुतेऽस्य जनो यदि भक्तितः।
सपदि तस्य समस्तविपत्तयो,
विलयतामुपयान्ति भवेच्छिवम्॥

यदि कोई भी मनुष्य इस स्तुति का प्रतिदिन भक्तिपूर्वक सुवाचन करता है तो उसकी सारी आपत्तियाँ शीघ्र ही विलीन हो जाती हैं और उसका कल्याण होता है।

(101)

श्रीकृष्णसेमवालेन नाथोरामसुतेन वै।
शतकं रचितं रम्यं पराम्बामोदवर्धकम्॥

श्री नाथोराम सेमवाल के पुत्र श्रीकृष्ण सेमवाल ने पराम्बा के आनन्दवर्धन हेतु स्तुतिमय रमणीय शतक की रचना की।

कात्यायनीस्तवः

(1)

महामोहध्वान्ते भगवति धरण्यामनुदिनं,
भ्रमन्तं सन्तप्तं भयविकलचित्तं बहुविधम्।
अशान्तं विश्रान्तं व्यथितमनुजं दुःखनिलयं,
पराम्बे पाहि त्वं तदपि किल कात्यायनि भृशम्॥

पराम्बे भगवति हे कात्यायनि! मायामोहमयी इस धरती पर प्रतिदिन अनेक प्रकार के भयों से व्याकुल चित्तवाले दुःखी, अशान्त, विश्रान्त मुझ व्यथित व्यक्ति की आप बार-बार रक्षा करो।

(2)

जगद्रक्षादक्षे गुणगणनिधानैकनिपुणे,
महामाये भव्ये भवविभवदात्रि प्रमुदिते।
कृपापारावारे परमसुखदे पाहि नितरां,
विपद्ग्रस्तं मां त्वं जननि ननु कात्यायनि मुदा॥

संसार की रक्षा में दक्ष, समस्त गुणों की खान, महामायास्वरूप, प्रसन्न हृदय, कृपारूपी समुद्र एवं विश्व को ऐश्वर्य प्रदान करने वाली हे माँ कात्यायनि! मुझ विपत्ति में फँसे हुए अपने पुत्र की रक्षा करो।

(3)

परिश्रान्तं क्लान्तं सकलविधिसंक्रान्तमनिशं,
भयाक्रान्तं भ्रान्तं निरतिशयदीनं कलुषितम्।
मदान्धं मन्दं मां परहितरते पाहि सततं,
दयार्द्रे सद्दृष्ट्या प्रियजननि कात्यायनि मुदा॥

हे दयामयि! जनकल्याणकारिणि! प्रियजननि! कात्यायनि! मुझ दुर्बल, प्रतिदिन सर्वविध सक्रान्त, भयाकुल, अतिदीन, कलुषित, अहंकारी, मंदबुद्धि, भ्रमित एवं थके हुये भक्त की प्रसन्नतापूर्वक सद्दृष्टि से सदा रक्षा करो।

(4)

अये मातः कश्चिद् विविधविषयासक्तमनसा,
विवेकव्यासक्तो मदमलिनचित्तस्तव चरः।
करोत्यज्ञत्वञ्चेत्सुत इति विचार्य प्रतिपलं,
क्षमस्वैतद्दोषान् परिहर च कात्यायनि मुदा॥

हे माँ! यदि कोई अविवेकी, अहंकार से कलुषित चित्तवाला आपका अनुचर प्रतिक्षण मूर्खता करता है तो हे कात्यायनि माँ! पुत्र समझकर हमेशा इसे क्षमा करो एवं प्रसन्नतापूर्वक इसके समस्त दोषों को दूर करो।

(5)

न भक्तिश्चित्ते मे न च परमयुक्तिः कृतिषु मे,
न शक्तिर्देहे मे न हि न हि च भुक्तिर्मम विधौ।
तथापि स्नेहात्त्वं मयि वितर दृष्टिं सकरुणां,
शिवे भद्रे सौम्ये सततमयि कात्यायनि मुदा॥

हे शिवे भद्रे माँ कात्यायनि! मेरे हृदय में न भक्ति है और नहीं कृत्यों में युक्ति है। मेरे शरीर में न बल है और न ही मेरे भाग्य में भोग है फिर भी हे माँ! आप प्रेम से मेरे ऊपर सदैव करुणामयी दृष्टि ही रखना।

(6)

न जाने पूजान्ते तव चरणसेवाविधिमपि,
न शास्त्रज्ञाताहं किमपि न हि सच्चिन्तनपरः।
तथापि त्वत्पादाम्बुजपतनभृङ्गो ह्यनुचर-,
स्तवाधारं ध्यात्वा जयति भुवि कात्यायनि सदा॥

हे माँ कात्यायनि ! न ही मैं आपकी पूजा पद्धति तथा चरणवन्दनविधि को जानता हूँ। ना ही मैं किसी शास्त्र का ज्ञाता तथा सच्चिन्तनपरक व्यक्ति हूँ। तथापि आपके चरणकमलों में गुंजार करने वाला भ्रमररूपी यह अनुचर सदा आपके आश्रय का ध्यान करके इस धरती पर विजयी होता है।

(7)

विरञ्च्याख्या देवास्तव भृकुटिसंकेतनिरताः,
प्रकुर्वन्तो विश्वं स्थितिनियमसंहारचतुराः।
नमन्तस्त्वां शश्वत् स्तवनमुखरा भक्तिसहिताः,
त्वमेवैतान् सर्वानवसि ननु कात्यायनि मुदा॥

हे माँ कात्यायनि! आपकी भृकुटिसंकेत का पालन करने में संलग्न, संसार की स्थिति, नियमन एवं संहार में दक्ष, भक्तिपूर्वक निरन्तर आपकी स्तुति एवं आपको प्रणाम करते हुये ब्रह्मादि देवता विश्व का विधान करते हैं। हे भगवति! निश्चय ही आप ही इन सबकी प्रसन्नता पूर्वक रक्षा करती हो।

(8)

शरण्ये दीनं मां श्रुतिविधिविहीनं शरणदे,
जगज्जालैर्लिप्तं जयविजयरागेऽप्यनुरतम्।
परित्रायस्व त्वं करुणवरुणानन्दलहरि,
निराधाराधारे कनकमयि कात्यायनि मुदा॥

समस्त प्राणियों को शरण देने वाली, प्राणिमात्र की रक्षा करने वाली, करुणारूपी समुद्र की आनन्द लहरी, निराधार-प्राणियों को आधार देने वाली, स्वर्णमयि हे माँ कात्यायनि! आप शास्त्रोक्तविधि से रहित, संसारचक्र में उलझे हुए, जीत-हार की अनुरक्ति में लिप्त मुझ दीन की रक्षा करो।

(9)

प्रयातं यातं मे जननि सकलं जीवनमिदं,
विभिन्नै : संघर्षैः किमधिगतपीडास्वपि शिवे।
न हि ज्ञातो मात र्जगति महिमा ते कथमिव,
परित्राणं त्राणं तदपि कुरु कात्यायनि मुदा॥

हे माँ शिवे! मेरा यह सारा जीवन विधि संघर्षों से प्राप्त पीड़ाओं में ही व्यतीत हो गया है। ऐसी स्थिति में हे माँ! मैं आपकी महिमा को किसी भी प्रकार से नहीं जान पाया हूँ। फिर भी हे माँ कात्यायनि! मेरी सर्वविधि रक्षा करो।

(10)

कदा यातं बाल्यं विविधविधिसंक्रीडनपरं,
कदा संयातं मे ललितललितं यौवनमपि।
अकाले सम्प्राप्तं जननि मयि वार्धक्यमधुना,
कथंकारं त्राहि त्वमयि भुवि कात्यायनि मुदा॥

हे माँ! विभिन्न प्रकार की क्रीड़ाओं से परिपूर्ण मेरा बचपन तथा विभिन्न क्रिया-कलापों से युक्त मेरा सुन्दर यौवन कब बीत गया, इसका मुझे लेशमात्र भी पता नहीं चल पाया। अब असमय ही मुझमें वार्धक्य आ गया है अतः हे माँ कात्यायनि! इस धरती पर मेरी येन केन प्रकारेण रक्षा करो।

(11)

असारे संसारे भ्रमवशजडीभूतमनुजः,
न जाने मातः किं किमशिवमसौ संप्रकुरुते।
तथापि त्वां याचे हिमगिरिसुते कामपि कृपां,
स्वपुत्रं मत्वा त्वं कुरु जननि कात्यायनि मुदा॥

हे माँ! भ्रम के कारण जड़मति हुआ यह मनुष्य इस संसार में क्या-क्या अमंगल करता है, यह मैं नहीं जानता। तथापि हे माँ हिमगिरि सुते! हे माँ कात्यायनि! आपसे प्रार्थना है कि आप अपना पुत्र समझकर मुझ पर कुछ न कुछ कृपा अवश्य करो।

(12)

समस्तं ब्रह्माण्डं तुहिनगिरिकन्ये भ्रमति वै,
त्वदीयैर्भ्रूभंगैस्त्वरितमयि किन्नैव कथय।
अतो दुष्टानां त्वं रिपुदलबलानाञ्च दलने,
स्ववक्रां दृष्टिं त्वं जननि कुरु कात्यायनि मुदा॥

हे माँ तुहिनगिरिकन्ये! बताइये क्या आपके भ्रूभङ्ग मात्र से शीघ्र ही सारा ब्रह्माण्ड नहीं घूमता है? अतएव हे माँ कात्यायनि! आप दुष्टजनों एवं मेरे शत्रुओं के बल के मर्दन हेतु अपनी वक्रदृष्टि करिये।

(13)

शिवा त्वं काली त्वं करधृतकपालिन्यसि शुभे,
भवानी त्वं देवी भुवनजननी त्वं गिरिसुता।
विशाला कल्याणी त्वमसि जनवाणी जयकरा,
त्वमेव म्लानं मां सुखय भुवि कात्यायनि मुदा॥

हे माँ! आप शिवा हो, आप काली हो, आप हाथ में खप्पर धारण करने वाली कपालिनी हो, आप भवानी हो, आप लोकमाता देवी हो, आप पर्वतराज कन्या पार्वती हो, आप विशाला हो, आप कल्याणी हो, आप जयकारिणी हो, जनवाणी हो, हे माँ कात्यायनि! आप ही मुझ दुःखी को प्रसन्नतापूर्वक सुख प्रदान करो।

(14)

त्वदीयं सौन्दर्यं विमलचरितञ्चारुचरिते।
प्रगातुं शक्तो न प्रभवति कवीन्द्रः कथमपि।
गुणागारे सारे गुणरहितमूढं निजसुतं,
कथङ्कारं त्राहि त्रिगुणमयि कात्यायनि मुदा॥

हे माँ चारुचरिते! आपके सौन्दर्य एवं निर्मल चरित को बृहस्पति भी किसी प्रकार से वर्णन करने में समर्थ नहीं है। हे गुणों की समुद्र! साररूपिणि! त्रिगुणमयि! कात्यायनि माँ! अपने निर्गुण मूर्ख पुत्र की किसी भी प्रकार से प्रसन्नतापूर्वक रक्षा करो।

(15)

न वाञ्छा वित्तानां मम मनसि किञ्चिद् ह्यपि शिवे,
न भोगैश्वर्याणां न खलु रमणीनामपि च मे।
परं सद्वाञ्छेयं प्रभवतु मदीयं प्रतिपलं,
सपर्यापर्यायस्तव जननि कात्यायनि सदा॥

हे माँ शिवे! मेरे मन में न तो धन की लेशमात्र भी इच्छा है और नहीं भोग की, न ऐश्वर्य की, और ना ही रमणियों की। तथापि हे कात्यायनि! हे जननि! मेरी प्रतिफल यही सुन्दर अभिलाषा रहती है कि मेरा हर क्षण आपकी पूजा का पर्याय हो।

(16)

अथायं निःसारः निरवधिमयः शक्तिरहितः,
प्रपञ्चैराविद्धः महितममतामोहनिकरः।
प्रसुप्तः निस्तब्धः क्षणचपलतुल्यः प्रियतमः,
त्वदर्थं देहो मे भवतु भुवि कात्यायनि सदा॥

हे माँ कात्यायनि! मेरी सदा यही इच्छा रहती है कि मेरी यह निसार, अकिञ्चन, समय सीमा रहित, प्रपञ्चों में उलझी हुयी, अतिशय मोहमाया से पूर्ण, प्रसुप्त, निस्तब्ध, बिजली के समान अत्यन्त चंचल, परमप्रिय देह आपके प्रिय कार्यों के लिए हो।

(17)

जगत्यां जीवोऽयं कुटिलकठिनः कर्मकुमतिः,
कुधीः कामी क्रोधी मलिनमदयुक्तोऽपि मधुपः।
अये मातर्लब्ध्वा तव चरणरेणोः कणमपि,
मदैर्हीनः शान्तः स हि भवति कात्यायनि तदा॥

हे माँ कात्यायनि! संसार में परम कुटिल, दुर्बुद्धि, कामी, क्रोधी, मलिन, अहंकार से युक्त होता हुआ भी यह जीव आपके चरणों की धूल के कणमात्र को भी प्राप्त करके तुरन्त ही निरभिमानी होकर शान्त हो जाता है।

(18)

चरित्रं चित्रन्ते परमतुलनीयं गिरिसुते,
कथङ्कारं स्तोतुं कथय ननु भक्तः प्रभवति।
सुतं मत्वा मातस्सपदि वचनं क्रन्दनपरं,
निशम्य त्वं कष्टं मम शमय कात्यायनि मुदा॥

हे माँ गिरिसुते! आपके उत्तम अद्भुत अप्रतिम चरित्र की हे माँ! आप ही बताइये कि भक्त किस प्रकार से स्तुति कर सकता है। हे कात्यायनि माँ! मुझे पुत्र मानकर मेरे क्रन्दन परक वचनों को सुनकर शीघ्र ही मेरे कष्ट को शान्त करो।

(19)

त्वया प्रेम्णा प्रेम्णा सरसरससौभाग्यसुखदे,
समारोप्य प्रायः किसलयमयं पादपमिमम्।
परित्यक्तञ्चैनं कथमपि शुभे सिञ्च सदये,
कृपासिन्धोस्तोयैस्त्वमयि ननु कात्यायनि मुदा॥

सरस सौभाग्सुखदायिनि शुभे! सदये हे माँ! आपने प्रेम से किसलय युक्त इस पौधे को लगाकर तदनन्तर त्यागे हुये इस पौधे को अपने कृपासागर के जल से प्रसन्नतापूर्वक किसी न किसी प्रकार से हे माँ कात्यायनि! पुनः सींचो।

(20)

जगन्मातर्मातस्तव चरणयोः सादरमिमं,
विनीताभिर्वाग्भिः पुनरपि पुनः भक्तिपरकः।
अयं प्रातः सायं स्तवनमनिशं संप्रकुरुते,
गृहीत्वा तत्तापं परिहर च कात्यायनि मुदा॥

हे जगजननि! जो भक्त भक्ति भावना से परिपूर्ण होकर विनम्रवाणी से आपके चरणों की स्तुति को प्रातः एवं सायंकाल निरन्तर करता है हे माँ कात्यायनि! उस भक्त को शरण में लेकर उसके सभी कष्टों को प्रसन्नतापूर्वक दूर करो।

(21)

क्षितेः क्षेमार्थं या नगपतिसुता दिव्यवदना,
नगर्य्यां देहल्याश्छतरपुरमित्याख्यसुतले।
वसन्ती भव्याभा जनहितरता भाति सुतरां,
पुनीहि क्षिप्रं सा त्वमयि भुवि कात्यायनि मुदा॥

जो दिव्यमुखमण्डल वाली, दीप्तिमती, जनकल्याणकारिणी, पर्वत-राजपुत्री भगवती कात्यायनी संसार के कल्याण के लिए दिल्ली नगरी के छतरपुर नामधेय स्थान पर वास करते हुये शोभायमान है ऐसी आप संसार में शीघ्र ही सबको पवित्र करो।

(22)

श्रीकृष्ण सेमवालेन श्रद्धाभावसमन्वितः।
पुष्पाञ्जलिरयं देव्याः पादयोरर्प्यतेऽनिशम्॥

श्रद्धाभाव से परिपूर्ण यह पुष्पांजलि श्रीकृष्ण सेमवाल के द्वारा माँ भगवती कात्यायनी के श्री चरणों में अर्पित है।

"ज्वाल्पादेवी भुविभगवती भासतां मे सुमाता"

(1)

दिव्यैर्दिव्यैर्दिनमनुदिनं दीप्तिमन्तो दिगीशा-,
र्मन्त्रैस्तन्त्रैस्स्तवननिचयैर्ध्यानशाणैकमग्नाः ।
प्रातः सायं मधुरमधुरैर्वाक्यपुष्पप्रकल्पैः,
ज्वाल्पादेवीं विमलविमलां मातरं यां भजन्ति॥

दिशाओं के तेजस्वी स्वामी ध्यानरूपीशाण में एकमात्र मग्न होकर प्रातः सायं मन्त्रों, तन्त्रों, स्तुतियों एवं अत्यन्त मधुर वाक्यरूपी पुष्पगुच्छों से जिस परमनिर्मल ज्वाल्पादेवी की पूजा करते हैं। उस माँ भगवती को सादर प्रणाम है।

(2)

संसाराब्धौ निपतितजनो भोगलिप्सादिशीर्णो,
ज्ञानाज्ञानप्रभवविपदस्सम्पदश्चाप्यभिज्ञः ।
दीनोऽयं त्वां कतिपयपदैस्सादरं मन्दबुद्धिः,
स्तौति प्रेम्णा परमजननीं श्रद्धयाभक्तिपूर्णः॥

संसार सागर में मग्न, भोगविलासादि की इच्छा से जीर्ण, ज्ञान व अज्ञान, ऐश्वर्य व विपत्ति एवं सम्पत्ति से अनभिज्ञ, श्रद्धाभक्ति से युक्त यह निरीह मन्द-बुद्धि आपका पुत्र प्रेमपूर्वक कुछ पदों द्वारा माँ भगवती आपकी स्तुति करता है।

(3)

भव्यैर्भावैर्भवभयहरा भावनाभावयित्री,
भाग्याधीशा भरणकरणी भागधेयप्रदात्री।
भास्वद्भाषा भवनविभवा भामिनीभक्तभक्ता,
ज्वाल्पादेवी भुवि भगवती भासतां मे सुमाता॥

आदर्शभावों द्वारा संसार के भय को दूर करने वाली, उत्तम भावनाओं की जन्मदात्री, भाग्येश्वरी, विश्व का भरण पोषण करने वाली, सौभाग्य-प्रदायिनी, उर्जस्विनी, भाषास्वरूपिणी, परमैश्वर्य-शालिनी, परमसुन्दरी भक्तों की भी भक्त, मेरी प्यारी माँ भगवती ज्वाल्पादेवी संसार में देदीप्यमान हों।

(4)

त्वं गौरी त्वं हिमगिरिसुता त्वञ्च भव्या भवानी,
त्वं धात्री त्वं प्रियजनवृता त्वं शिवस्त्वं शिवानी।
त्वं लक्ष्मीस्त्वं गुणगणयुता त्वं हिमस्त्वं हिमानी,
ज्वाल्पादेवी त्वमयि ममता मंगला त्वं मृडानी॥

हे ज्वाल्पादेवि! आप गौरी हो, आप हिमालय पुत्री हो। और आप भव्या हो, भवानी हो, आप धात्री हो, आप साधुजनों से स्नेह करने वाली हो, आप ही शिव हो, आप ही शिवानी हो, आप ही सर्वगुण सम्पन्न लक्ष्मी हो, आप ही हिम हो, और हिमानी भी आप ही हो, हे भगवति! आप ही ममता हो आप ही मंगला हो, और आप ही मृडानी हो।

(5)

यस्या दृष्टिर्दनुजदलने वक्रतां सम्प्रयाति,
दीनेभ्यो या द्रवितनयना सौम्यतां याति सद्यः।
तस्या देव्याः मृदुलमृदुला सैव दृष्टिस्सदैव,
कल्याणी च प्रतिपलसुधास्यन्दिनी मत्कृते स्यात्॥

राक्षसों के संहार हेतु जिस माँ की दृष्टि वक्र हो जाती है और दीनों के लिये वही शीघ्र ही दयार्द्र हो जाती है। उस माँ, भगवती की परममृदुल दृष्टि मेरे लिये प्रतिक्षण कल्याणकारिणी एवं अमृत वर्षिणी हो।

(6)

शान्ते रम्ये गिरिवननदीसंकुले श्रेष्ठक्षेत्रे,
ज्वाल्पादेव्याः सरलमनसा विघ्नविच्छेदकर्त्र्याः।
वासे जाते वयमिह समे भक्तिशक्तिप्रमुग्धा,
धन्याः धन्याः पुनरपि पुनः पुण्यतां सम्प्रयाताः॥

गिरि वन नदी से व्याप्त शान्त, मनोहर उत्तम स्थान पर विघ्न-विनाशिनी ज्वाल्पादेवी के वास करने पर हम सब यहाँ भक्ति एवं शक्ति से समन्वित होकर बारम्बार परमधन्य होते हुए पुण्य को प्राप्त कर रहे हैं।

(7)

मातर्लोकेऽप्रतिमचरितं सर्वभाव्यैर्विभाव्यं,
सर्वोत्कृष्टं द्युतिमयमिदं शक्तियुक्त्यान्वितं ते।
दुःखैर्दग्धं व्यथितहृदयं मामधन्यं शरण्ये,
पाहि त्राहि त्वरितमयि हे विश्वकल्याणकर्त्रि॥

हे माँ! जगत् में सर्वतोभावेन देदीप्यमान, सर्वोत्कृष्ट, दीप्तिमान, बल एवं युक्ति से परिपूर्ण आपका चरित अप्रतिम है। जगत्कल्याण-कारिणी एवं समस्त प्राणियों की रक्षा करने वाली हे माँ! सांसारिक पापों से दग्ध व्यथित हृदय वाले मुझ अधन्य की शीघ्र ही रक्षा करो, रक्षा करो।

(8)

ज्वालामालं दिनकरनिभं शीतरश्मीश्वरीयं,
रूपं रम्यं रमयति मनो मानवस्य त्वदीयम्।
तत्ते मातश्चरणशरणे सम्प्रयातस्य चास्य,
तापं शापं शमय सपदि प्राणदे शक्तिदे मे॥

हे माँ! सूर्यवत् तेजोमय एवं चन्द्रवत् शीतल आपका मनोहर रूप मनुष्य के चित्त को आह्लादित करता है। हे प्राणदायिनि! शक्तिदायिनि माँ! ऐसे आपके चरणों की शरण में आये हुये मेरे ताप एवं शाप को शीघ्र ही शान्त करो।

(9)

लोभाविष्टा मलिनमलिना ज्ञानविज्ञानहीना,
मोहान्धा मे मतिरतिचला भावशून्या तथैव।
मातर्ज्ञातुं तव गुणकथां नैव शक्ता धरित्र्यां,
देवि ज्वाल्पे तदपि कृपया स्वात्मना मां पुनातु॥

हे माँ! लोभ से आक्रान्त, अत्यन्तमलिन, ज्ञानविज्ञान से रहित, मोहान्ध मेरी बुद्धि अत्यन्त चंचल एवं भावशून्य है। इस धरा पर आपके चरित का वर्णन करने में अक्षम है। फिर भी हे ज्वाल्पादेवि! अपनी कृपा से मुझे पवित्र कीजिए।

(10)

हे हे मातर्विपदि पतिते ते सुतस्यास्य भूमौ,
रक्षां कृत्वा प्रतिपलमसौ किन्त्वया त्रायते न।
अद्यापीमं सकलविकलं रक्ष सन्तापहर्त्रि,
ज्वाल्पादेवि प्रथितकरुणे भूय एव त्वमत्र॥

हे माँ! धरती पर इस पुत्र के आपद्ग्रस्त होने पर क्या आपने हर पल रक्षाकर इसे नहीं बचाया। हे ज्वाल्पादेवि! करुणामयि संन्तापहारिणि हे माँ ज्वाल्पादेवि! आज भी सम्पूर्ण रूप से सन्तप्त इस पुत्र की फिर से रक्षा करो।

(11)

विद्याबुद्धिप्रभवविभवैर्ज्ञानविज्ञानबोधैः,
योगारूढैः प्रभुपदपणैस्त्यागपूतैश्च पूज्यैः।
ब्रह्माण्डेऽस्मिन् मुनिजनगणैः स्तूयते या सदैव,
कल्याणी सा जननि जयताद् देववाणी त्वदीया॥

इस ब्रह्माण्ड में विद्या एवं बुद्धि के अत्यधिक ऐश्वर्य से परिपूर्ण, ज्ञानविज्ञान सम्पन्न, त्याग से पवित्र, पूजनीय योगियों द्वारा सदा ही पूजित हे माँ आपकी कल्याणकारिणी देववाणी सदा ही विजयी हो।

(12)

कालीनद्या विमलपुलिने सर्वभावेन नित्यं,
क्रोडे प्राप्ते हिमगिरिगुरोः स्वस्य जन्मप्रदातुः।
ज्वाल्पेत्यादिप्रचुरचरितैः लोककल्याणकृत्यैः,
विश्वेऽस्मिन्या भ्रमति जननी तां नमामो भजामः॥

जो माँ भगवती जनकल्याणकारी ज्वाल्पा इत्यादि विविध चरितों से इस जगत् में अपने पूज्य पिता हिमालय के निकट काली नदी के निर्मल तट कालीमठ में सदैव सर्वतोभावेन विद्यमान है, उसे हम प्रणाम करते हैं, भजते हैं।

(13)

धारीदेवी धृतिमतिमयी धर्मदा धैर्यदात्री,
धूम्राक्षादिप्रबलबलिनो धूर्तदैत्यप्रहर्त्री।
या माता मामवति नितरां स्नेहभावेन भूमौ,
ज्वाल्पादेवि त्वमसि किल सा मन्मतेश्चिन्तनेन॥

इस धरती पर परम स्नेह से जो माँ मेरी रक्षा करती है, हे ज्वाल्पादेवि! मेरे मतानुसार यह धूम्राक्षादि परमबलवान् धूर्त राक्षसों की विनाशिनी, धैर्यशालिनी, धर्मप्रदायिनी, धैर्यदायिनी धारीदेवी भी आप ही हैं।

(14)

मातर्यत्ते परहितपरं पावनं पाणिपद्मं,
भासादीप्तं मणिमययुतैर्भूषणैरायुधैश्च।
संसारार्तिप्रशमनविधौ वीक्ष्यते संप्रवृत्तं,
पायात्तत्ते सुकरयुगलं स्वं सुतं मामजस्रम्॥

हे माँ! संसार में कष्ट निवारण हेतु प्रवृत्त, उज्जवल मणिमय आभूषण एवं विविध शास्त्रों से सुसज्जित, पवित्र, जनकल्याणकारी, जो आपके कर-कमल दिखाई देते हैं, वे कल्याणकारी आपके करकमल अपने पुत्र मुझ अकिञ्चन की निरन्तर रक्षा करें।

(15)

कालीरूपे ललितललिते दिव्यलक्ष्म्याः स्वरूपे,
विद्यादेवी द्रुहिणगृहिणीरूपतोऽप्येव नित्यम्।
या माता मे वसति भुवने काव्यकालीमठेऽस्मिन्,
ज्वाल्यारूपेऽप्यवतु जननी प्रत्यहं माञ्च सैव॥

जो माँ संसार में कालीरूप में, दिव्य लक्ष्मी रूप में तथा विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती के रूप से नित्य ही इस उत्कृष्ट कालीमठ में निवास करती है वही माँ ज्वाल्पारूप में यहाँ वास करती हैं। ऐसी माँ भगवती प्रतिदिन मेरी रक्षा करे।

विन्सरस्तोत्ररत्नावलिः

1. दिशतु स हि गिरीशः
सर्वदा सुप्रभातम्

2. महादेवो देवो जगति
जयताद् बिन्सरपतिः

3. जयतु बिन्सरसंस्थितशङ्करः

4. कल्याणं तनुते प्रसन्नवदनः
श्रीबिन्सरे संस्थितः

5. जय हे बिन्सरपूज्यनायक !

6. मां रक्ष शङ्कर सदा
भुवि बिन्सरीय !

"दिशतु स हि गिरीशः सर्वदा सुप्रभातम्"

(1)

सघनवननिवासी लास्यलीलाविलासी,
भुवनभयविनाशी बिन्सरस्याधिवासी।
कठिनकृतिविकासी श्रीमहादेव एष,
वितरतु भुवनेऽस्मिन् सर्वदा सुप्रभातम्॥

गहन वनों में रहने वाले, नृत्य-लीला में रमण करने वाले, संसार के भय का विनाश करने वाले, बिन्सर-तीर्थ के अधिवासी, कठिन कार्यों के सम्पादन में दक्ष हे भगवान् महादेव! आप इस लोक में सदा मङ्गलमय सुप्रभात प्रदान करें।

(2)

गिरितटविपिनानां सर्पसिंहादिकानां,
विदलितमनुजानां मित्रमित्रप्रसिद्धः।
भुवि जनसुखकारी बिन्सरस्थः शिवोऽयं,
वितरतु भुवनेऽस्मिन् सर्वदा सुप्रभातम्॥

पर्वतीय प्रदेशों, नदी-तटों तथा वनों में विचरण करने वाले, सर्प, सिंह आदि पशुओं तथा असहाय मानवों के घनिष्ठ मित्र के रूप में प्रसिद्ध, पृथ्वी पर सभी लोगों को सुख देने वाले, बिन्सर निवासी भगवान् शिव इस संसार में समस्त प्राणियों को सर्वदा मंगलमय सुप्रभात प्रदान करें।

(3)

सहृदयहृदयानां मानवीयप्रभाणां,
सुकमलविमलानां श्रद्धया पूजितानाम्।
हृदयतलनिवासी बिन्सरस्याशुतोषो,
वितरतु वसुधायां सर्वदा सुप्रभातम्॥

सहृदय हृदय वाले, मानवीय आभा से मण्डित, सुन्दर कमल के समान निर्मल चरित्र से सम्पन्न, श्रद्धापूर्वक वन्दनीय, मनुष्यों के अन्तस्तल में निरन्तर विराजमान, बिन्सर में रहने वाले भगवान् आशुतोष पृथ्वी पर सर्वदा मंगलमय सुप्रभात प्रदान करें।

(4)

हिमगिरिगुरुतल्पो लोककल्याणकल्पः,
प्रलयलयविकल्पो दर्शने विद्यतेऽल्पः।
जगति जनकजल्पो बिन्सरस्य प्रकल्पो,
जगति दिशतु नित्यं प्रेमतः सुप्रभातम्॥

हिमालय की कन्दराओं में शयन करने वाले, लोककल्याण के लिए प्रतिबद्ध, प्रलयकाल के लिए रौद्ररूप, न्यूनातिन्यून दृष्टिगोचर होने वाले, संसार में पिता के रूप में पुकारे जाने वाले, पर्वत के अधिष्ठाता महादेव भगवान् संसार में सर्वदा प्रेमपूर्वक मङ्गलमय सुप्रभात प्रदान करें।

(5)

त्रिभुवनकरुणायाः सर्वदा स्नेहसिन्धुः,
यमनियमरतानां चेतसां केन्द्रबिन्दुः।
प्रभुचरणपराणामाश्रयो बिन्सरेन्दुः,
दिशतु दिशतु नित्यं भूतले सुप्रभातम्॥

तीनों लोकों की करुणा के प्रेममय सिन्धु, यम-नियमों के पालन में संलग्न चित्तवालों के केन्द्र-बिन्दु, प्रभु-चरणों की सेवा में संलग्न भक्तों के आश्रय, बिन्सरेन्दु भगवान् शिव संसार में नित्य सुप्रभात प्रदान करें।

(6)

निखिलनिगमशास्त्रैर्गीयते यस्य गीतं,
श्रुतिभिरपि सदैव स्तूयते स्तोत्रमस्य।
स हि मनसिजहन्ता बिन्सरस्थो गिरीशो,
वितरतु सततं मे स्नेहतः सुप्रभातम्॥

निगमादि समस्त शास्त्र सदैव जिनका गुणगान करते हैं और श्रुतियाँ भी नित्य जिनका स्तवन करती हैं, वे कामदेव के विनाशक, बिन्सर में प्रतिष्ठित भगवान् शंकर मुझे स्नेहपूर्वक निरन्तर सुप्रभात प्रदान करें।

(7)

भुजगपतिरजेयो भव्यभावप्रभावो,
भवविभवविभावो भूतनाथो भवेशः।
विभुविनयविशेषो बिन्सरस्थो विभूतिः,
वितरतु मम नित्यं मङ्गलं सुप्रभातम्॥

सर्पों के नियामक, अजेय, सुन्दर भावों के विस्तारक, संसार को ऐवश्र्य प्रदान करने वाले, भूतों के अधिपति, जगत् के स्वामी, सर्वत्र व्याप्त, ईश्वरपरक श्रद्धा के विशिष्ट केन्द्र, बिन्सर की विभूति, महादेव सर्वदा मुझे मङ्गलमय सुप्रभात प्रदान करें।

(8)

परिजनपरितापव्याप्तचित्तः प्रतप्तः,
प्रलपति च विलापं निःसहायोऽसमर्थः।
प्रभुचरणतले यो बिन्सरस्य द्रुतं हि,
वितरति स तु तस्मै मङ्गलं सुप्रभातम्॥

परिजनों के द्वारा प्राप्त दुःख से दुखी चित्त वाला, सन्तप्त, निःसहाय, असमर्थ जो व्यक्ति बिन्सर में स्थित प्रभु के चरणों में विलाप करता है, उसे वे भगवान् शिव शीघ्र ही मङ्गलमय सुप्रभात प्रदान करते हैं।

(9)

सुरवरमुनिपूज्यो दिव्य-दिव्यो दिवेशो,
गगनभवनयुक्तः पार्वती-पर्वतीयः।
धृतिमतियतिमान्यो धूर्जटिर्बिन्सरस्थो,
दिशतु प्रतिदिनं मे भूतले सुप्रभातम्॥

इन्द्र आदि देवों और मुनियों के द्वारा पूजनीय, दिव्य लोकों के स्वामी, आकाश और पृथ्वी के अधिपति, देवी पार्वती के साथ पर्वत पर निवास करने वाले, धैर्यशाली, मतिमान्, यतिजनों के द्वारा मान्य, पर्वत में स्थित शंकर भगवान् पृथ्वी पर प्रतिदिन मुझे सुप्रभात प्रदान करें।

(10)

व्यथितमनुजमध्ये यः कृपादृष्टिवृष्टिं,
प्रमुदितहृदयेन प्रेमभावैः करोति।
स हि भुवि करुणेशो बिन्सरस्थो महेशो,
वितरतु मम नित्यं मङ्गलं सुप्रभातम्॥

जो शिव प्रसन्नचित्त से स्नेहपूर्वक दुखी लोगों पर अपनी कृपामयी दृष्टि की वृष्टि करते हैं, वे पृथ्वी पर करुणा के अधिष्ठाता बिन्सर निवासी महेश्वर मुझे नित्य मङ्गलमय सुप्रभात प्रदान करें।

(11)

सगुणगुणविशिष्टः काल-कालः करालो,
मुदित-मुदितचित्तो विश्वरूपो विशालः।
अमरवरवरेण्यो बिन्सरस्थः प्रवालः,
प्रतिदिनमवनौ मे यच्छतात् सुप्रभातम्॥

सगुण गुण से विशिष्ट, काल के काल, विकराल, अत्यधिक प्रसन्नचित्त वाले, विश्वरूप, विशिष्ट देवताओं के पूजनीय, बिन्सर के प्रवालरूप भगवान् शंकर संसार में प्रतिदिन मुझे सुप्रभात प्रदान करें।

(12)

रजत इव विशुद्धे शुभ्रतुङ्गे हिमाद्रे,
ह्यनवरतममोघो ध्यानशाणैकमग्नः।
तदपि ननु शिवोऽयं बिन्सरे बद्धचित्तः,
वितरतु मम नित्यं मङ्गलं सुप्रभातम्॥

चाँदी के समान शुभ्र हिमालय के शिखर पर निर्विकल्पभाव से ध्यान रूपी कसौटी पर आरूढ़ होकर भी जिनका मन निरन्तर बिन्सर में ही लगा रहता है, ऐसे शंकर भगवान् सदा मुझे माङ्गलिक सुप्रभात प्रदान करें।

(13)

किमनिशमनिमेषः सर्वब्रह्माण्डभाण्डं,
प्रतिपलमवलोक्य ध्यानमानप्रधानः।
रचयति रचनां यः शङ्करो बिन्सरस्थः,
वितरतु सततं मे भूतले सुप्रभातम्॥

क्या निरन्तर ध्यान में अवस्थित भगवान् शंकर निर्निमेष दृष्टि से प्रतिक्षण इस विशाल ब्रह्माण्ड को देखते हैं और इसकी रचना करते हैं? (अर्थात् अवश्य करते हैं।) वे ध्यानस्थ होकर भी सृष्टि की रचना एवं व्यवस्था के कार्य में सक्रिय हैं, यह उनकी विलक्षण महिमा है। बिन्सर में रहने वाले ऐसे भगवान् शंकर संसार में निरन्तर मुझे सुप्रभात प्रदान करें।

(14)

असुरसुरनराणां हर्षवर्षप्रकर्षो,
गिरिवरतनयाया जीवनाधार एषः।
मधुर-सरल-सौम्यः सम्भवो बिन्सरस्थो,
वितरतु सततं मे भूतले सुप्रभातम्॥

असुरों, देवों तथा मनुष्यों के लिए अपार हर्ष की वर्षा करने वाले, भगवती गिरिजा के जीवन के आधार, मधुर, सरल, सौम्य स्वभाव वाले, पर्वतस्थ शंकर भगवान् संसार में मुझे निरन्तर सुप्रभात प्रदान करें।

(15)

कुटिल-कुमति-धूर्त-क्षुद्र-मूर्खादिकेभ्यः,
प्रभवति नितरां यश्चण्ड-चण्ड-प्रचण्डः।
स हि परमदयालुः बिन्सरस्थः कृपालुः,
वितरतु भुवनेऽस्मिन् सर्वदा सुप्रभातम्॥

कुटिल, कुबुद्धियुक्त, धूर्त, नीच तथा मूर्खजनों को कठोर दण्ड देने वाले, परम कारुणिक एवं कृपापूर्ण दृष्टि वाले, बिन्सरस्थ भगवान् शिव इस संसार को सदा सुप्रभात प्रदान करें।

(16)

अवनितलसमस्ते सर्वसम्पन्निधानं,
किमपि न हि न जाने व्याघ्रकृत्तिं वसानम्।
अगतिगतिविचित्रां वीक्ष्य हे बिन्सरीय!,
नतिततिमतिकृत्य प्रार्थये सुप्रभातम्॥

समस्त भूमण्डल को अनन्त वैभव प्रदान करने वाले, व्याघ्रचर्म धारण करने वाले शंकर भगवान् को मैं कुछ भी नहीं जान पाया हूँ। ऐसे विचित्र गति वाले हे बिन्सर के भगवान् शंकर आप को देखकर मैं नम्रतापूर्वक बार-बार प्रणाम करता हुआ सुप्रभात की कामना करता हूँ।

(17)

वसुपतिसुमतिस्त्वं भस्मरागाङ्गरागी,
परिजनपरिपूर्णो निःस्पृहस्त्वं विरागी।
तदपि परहितार्थं बिन्सरस्यानुरागी,
वितरतु भुवनेऽस्मिन् स्नेहतः सुप्रभातम्॥

हे भगवान्! आप ऐवश्‍र्य और सद्‌बुद्धि वाले होने पर भी शरीर में भस्माङ्गराग धारण करते हो। समस्त परिवार से परिपूर्ण होते हुए भी आप निस्पृह और विरागी हो। फिर भी बिन्सर के अनुरागी भगवान् शंकर! आप लोक-कल्याण के लिए समस्त विश्व में स्नेहपूर्वक सुप्रभात प्रदान करें।

(18)

निशिचरदलचारी दुष्टसंहारकारी,
कमलवनविहारी दिव्यदिग्वस्त्रधारी।
विषमविषयहारी बिन्सरस्य प्रभारी,
दिशतु दिशतु नित्यं भूतले सुप्रभातम्॥

निशाचर-समूह के साथ घूमने वाले, दुष्टों का संहार करने वाले, कमलवन में विचरण करने वाले, दिशारूपी दिव्य वस्त्र को धारण करने वाले, कठिन से कठिन समस्याओं का समाधान करने वाले, बिन्सर के अधीश्‍वर भगवान् शंकर संसार को सदा सुप्रभात प्रदान करें।

(19)

मृदुल-मृदुलहासी शुभ्रकैलाशवासी,
भवविभवविभासी विश्वसंन्यासशासी।
सुजनधनविकासी बिन्सरस्य प्रवासी,
वितरतु भुवनेऽस्मिन् सर्वदा सुप्रभातम्॥

मन्द-मन्द मुस्कान वाले, शुभ्र कैलास पर्वत पर निवास करने वाले, संसार के ऐश्वर्य को प्रकाशित करने वाले, विश्व पर सम्यक् प्रकार से शासन करने वाले, सज्जनों के ऐश्वर्य को विकसित करने वाले, बिन्सर के प्रवासी भगवान् शिव संसार को सदा सुप्रभात प्रदान करें।

(20)

रिपुरपि न हि कश्चिद् दृश्यते नैव मित्रं,
सकलभुवनमध्ये यस्य शम्भोः कदापि।
समविषमविचारै र्वञ्चितो बिन्सरीयो,
दिशतु दिशतु भव्यं भूतले सुप्रभातम्॥

समस्त संसार में जिन भगवान् शम्भु का न कोई शत्रु दिखाई पड़ता है और न मित्र। जो भेदभाव के विचारों से सर्वथा रहित हैं, वे बिन्सरस्थ भगवान्-शिव पृथ्वी पर दिव्य सुप्रभात प्रदान करें।

(21)

परहितकरणार्थं धर्मसंस्थापनार्थं,
कलुषितदमनार्थं पुण्यसंरक्षणार्थम्।
भ्रमति चलति भूमौ मोहनध्येयधारी,
दिशतु स हि गिरीशो भूतले सुप्रभातम्॥

दूसरों के कल्याण के लिए, धर्म की स्थापना के लिए, संसार में व्याप्त मलिनता के विनाश के लिए, पुण्यों के संरक्षण के लिए, मोहन के रूप में ध्येय की पूर्ति के लिए जो भगवान् शिव भूमण्डल में चलते-फिरते रहते हैं। वे गिरीश भगवान् शंकर पृथ्वी पर सुप्रभात प्रदान करें।

(22)

श्रीकृष्णसेमवालेन,
स्नेहेनात्र समर्प्यते।
बिन्सरस्थमहेशाय,
'सुप्रभातम्' मुदा हृदा॥

श्रीकृष्ण सेमवाल प्रसन्न मन से बिन्सर-निवासी भगवान् महादेव को यह सुप्रभात प्रेम पूर्वक समर्पित करता है।

"महादेवो देवो जगति जयताद् बिन्सरपतिः"

(1)

अगम्यो गम्योऽपि प्रियवरवरो भव्यवदनो,
निराधाराधारः सरलहृदयो दिव्यसदनः।
अरण्यारण्यानी नगरनिलयाकर्षणधनो,
महादेवो देवो जगति जयताद् बिन्सरमनाः॥

वाणी और मन की पहुँच से परे होने पर भी भक्ति द्वारा सरलता से सुलभ, प्रियजनों में भी अत्यन्त प्रिय, दिव्य तेज से युक्त मुखमण्डल वाले, निराश्रित जनों के अवलम्बन, सरल हृदय, दिव्य आवासरूप, विशाल वनों में निवास करने पर भी नगरों के विशाल भवनों के प्रति आकर्षण रूप सम्पत्ति वाले, बिन्सर क्षेत्र के प्रति मन में विशेष अनुराग रखने वाले, देवों के भी देव, श्री महादेव संसार में विशेष उत्कर्ष से विराजमान हों।

(2)

प्रकामो निष्कामः परमकमनीयोऽपि कठिनो,
निराकाराकारो निरतिशयनिःशान्तभवनः।
अखण्डब्रह्माण्डप्रबलबलदाता त्रिनयनो,
महादेवो देवो जगति जयताद् बिन्सरधनः॥

प्रकृष्ट इच्छा शक्ति वाले, कामनाविहीन, परम सुन्दर होते हुए भी कठोर, निराकार और साकार, अत्यन्त शान्ति-स्थान, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की शक्ति के प्रबल स्रोत, बिन्सर रूपी सम्पत्ति वाले, त्रिनेत्रधारी, देवों के भी देव महादेव संसार में विजयोत्कर्ष को प्राप्त करें।

(3)

अविश्रान्तः शान्तो जनमनसि सम्मोहजनकः
कृपापारावारो विबुधवरविश्वासनिकरः।
महोंकाराकारः कण-कण-निवासैकचतुरो,
महादेवो देवो जगति जयताद् बिन्सरपतिः॥

अपनी लीला के विस्तार में गतिशील तथा शान्त, मनुष्य के मन में मोह को जन्म देने वाले, कृपा के महासागर, विद्वानों और श्रेष्ठ जनों के विश्वास के आधार, महत् ओंकार-स्वरूप, कण-कण में निवास करने में निपुण, बिन्सराधीश देवाधिदेव महादेव की संसार में जय हो।

(4)

मृगैर्व्याघ्रैस्सर्पैर्निखिलपशुभिस्साकमनिशं,
वसन्तं श्रीमन्तं भुवनभयभङ्गाय विवशम्।
महेशं नागेशं पशुपतिमहीशं परवशं,
नतोऽहं त्वां नित्यं नगपतिममुं बिन्सरवशम्॥

मृगों, बाघों, सर्पों तथा अन्य पशुओं के साथ सदा रहने वाले, शोभा-सम्पन्न, संसार के भय भञ्जन-रूप कर्म में पराधीन (संसक्त), देवों के अधिष्ठाता, सर्पों के स्वामी, पशुपति, भूमण्डल के अधीश्वर तथा भक्तों के आधीन रहने वाले, बिन्सर क्षेत्र के अनुराग के अधीन, ऐसे अद्भुत कैलासपति आपको मैं भक्तिपूर्वक प्रणाम करता हूँ।

(5)

श्मशाने क्रीडन्यो निशिचरगणैस्साकमुदितः,
समस्तं ब्रह्माण्डं रचयति विनाशैकनिपुणः।
कलानाथो नाथो भ्रमति भुवनेऽनाथजनको,
जगत्कल्याणार्थं स हि विजयतां बिन्सरपतिः॥

श्मशान में भूत प्रेतादि के साथ प्रसन्नचित्त से क्रीडा करने वाले, विश्व के विनाश करने में सक्षम, समस्त ब्रह्माण्ड के रचयिता, विविध प्रकार की कलाओं के स्वामी एवं विश्वाधिपति, संसार में अनार्थों के नाथ, संसार में लोक कल्याण हेतु भ्रमण करने वाले बिन्सर के स्वामी महादेव ब्रह्माण्ड में विशेष उत्कर्ष से विराजमान हों।

(6)

जगद्रक्षार्थं यो विचलति न कस्मिन्नपि पले,
निपीतं प्रेम्णापि प्रमुदितहृदा येन गरलम्।
तमेवं श्रीमन्तं विषधरशिवं विश्वनिलयं,
नतोऽहं सद्भक्त्या प्रणतशिरसा बिन्सरपतिम्॥

संसार की रक्षा के लिए जो किसी भी क्षण विचलित नहीं होते, जिन्होंने जगत्कल्याण के लिए प्रेमपूर्वक प्रसन्नचित्त से विषपान किया, उन्हीं सर्वगुण सम्पन्न, विष को धारण करने वाले, विश्व के आश्रय स्थान, बिन्सर के स्वामी, महादेव आपको मैं भक्तिपूर्वक नतमस्तक होकर प्रणाम करता हूँ।

(7)

कदाचित् कान्तारे गिरिगहनगर्भेष्वपि कदा,
कदाचित् प्रोतुङ्गे हिमगिरिशिखायामपि मुदा।
श्मशाने बह्नौ वा ननु भुवि निवासेऽपि च शिव!,
त्वमेवात्मारामो विषयमृगतृष्णाविरहितः॥

कभी बीहड़ वन में, कभी पर्वत की गहन कन्दराओं में, कभी अत्यन्त ऊँचे हिमालय की चोटी पर आप प्रसन्नतापूर्वक निवास करते हैं, तो कभी अग्नि और कभी भूमि पर निवास करते हुए भी हे शिव! आप सदा विषयों की मृगतृष्णा से विमुख होकर आत्मतृप्त रहते हैं।

(8)

जटाजूटे गङ्गा विलसति भुजङ्गस्तव गले,
शरीरे दिग्वस्त्रं लसति करयोरायुधदलम्।
चिताभस्माङ्गे ते लसति मृगचर्माम्बरतले,
तथापि त्वं स्नेहाद् वससि भुवने बिन्सरजले॥

आपकी जटाओं में भगवती गंगा का निवास है, कण्ठ में भुजङ्ग सुशोभित हैं, शरीर पर दिशा रूपी वस्त्र विराजमान हैं, हाथों में शस्त्र धारण किए हुए हैं, अंगों पर चिताभस्म का लेप है, आसन के रूप में मृगचर्म बिछा है, फिर भी आप स्नेहवश पृथ्वी पर स्थित बिन्सरस्थजल में निवास करते हैं।

(9)

अये शम्भो लोके प्रलयलयकाले प्रमुदितो,
महाकालस्त्वं किन्न नटसि तदा ताण्डवमहो।
स एवायं रुद्रो भृकुटिकुटिलो बिन्सरपतिः,
कृपादृक्पातैर्मामवतु सततं दुःखपतितम्॥

हे भगवान् शंकर! आप संसार की प्रलय वेला में भी प्रसन्न होकर महाकाल के रूप में क्या ताण्डव नृत्य नहीं करते? (अर्थात् अवश्य करते हैं।) कुटिल भृकुटि धारण करने वाले, वही बिन्सरपति रुद्र दुःख में डूबे मुझ पर अपनी कृपादृष्टि डालकर निरन्तर रक्षा करें।

(10)

असारे संसारे किमपि न हि पश्यामि सुखदं,
तथाप्यस्मिन् लोके भ्रमवशजडीभूतमनुजः।
प्रपञ्चैराविद्धः कुटिलकुटिलश्चात्र तनुते,
क्षमस्वैनं दीनं सदयदयया बिन्सरपते!॥

हे शंकर भगवान्! मैं इस असार संसार में कोई भी ऐसी वस्तु नहीं देख रहा हूँ, जो सुख देने वाली हो, फिर भी इस संसार में भ्रमवश नाना प्रकार के प्रपंचों में उलझा हुआ (प्राणी) अत्यन्त कुटिलतापूर्ण आचरण करता है। हे बिन्सर के स्वामी! आप अपनी दयापूर्ण अनुकम्पा से ऐसे दीन प्राणी को क्षमा करें।

(11)

न जाने पूजान्ते विविधविषयासक्तिविकलो,
न जाने ध्यानन्ते भ्रमचलितचित्तो विचलितः।
तथापि त्वत्पादाम्बुजशरणभृङ्गः शिशुरयं,
क्षमां याचे त्वत्तो मलिनमतिभक्तस्तव सदा॥

सांसारिक विषयों में आसक्ति के कारण मैं तुम्हारी पूजा की विधि नहीं जानता हूँ और अनेक भ्रान्तियों तथा संशयों में ग्रस्त होने से मैं तुम्हारी आराधना की विधि नहीं जानता हूँ। फिर भी तुम्हारे चरण-कमलों की शरण में आया हुआ भ्रमर रूपी यह (मैं) मलिन बुद्धि वाला तुम्हारा (अज्ञानी) भक्त-शिशु सदा तुमसे क्षमा की प्रार्थना करता हूँ।

(12)

हिमानी मानी त्वं भुवि निरभिमानी त्वमसि न,
महाज्ञानी दानी त्वमसि च भवानीपतिरपि।
प्रधानध्यानी त्वं त्रिभुवनवितानी मम मतौ,
ततोऽहं त्वां वन्दे सततमतिमन्दः पशुपतिम्॥

हे शंकर! आप बर्फीली चोटियों पर निवास करने वाले और स्वाभिमानी हो। क्या आप समस्त ब्रह्माण्ड में निरभिमानी नहीं हो? अर्थात् हो। आप महाज्ञानी, दानी और भवानी के पति भी हो, मेरी समझ से आप विश्व के प्रधान चिन्तक और समस्त ब्रह्माण्ड के विस्तारक हो, इसीलिए अत्यन्त मन्दबुद्धि वाला मैं सदा आपको प्रणाम करता हूँ।

(13)

परित्यक्तो गेहः परिजनजनाश्चापि सकलाः,
सुखं त्यक्त्वा सर्वं भ्रमभयविपत्स्वेव पतितः।
अशान्तः सन्तप्तो विचलितमना मोहनगिरिः,
स्थितोऽहं शम्भो ते चरणशरणे बिन्सरपते!॥

घर-बार छोड़ा, सभी प्रकार के सम्बन्धी तथा नौकर-चाकर छोड़े। सब प्रकार के सुखों को त्याग कर भी मैं भ्रम, भय और विपत्तियों के जाल में फंसा, अशान्त, दुखी, विचलित मन वाला मोहनगिरि हे बिन्सरपति शम्भो! आपके चरणों की शरण में आया हूँ।

(14)

प्रभो हे शम्भो मे तव चरणयोरेष विनयः,
महामोहध्वान्तात् कलिमलदलाद् विश्वनिलयात्।
विमुक्तिं दत्त्वा त्वं प्रणवमय हे बिन्सरपते,
स्वकीयाङ्के त्वं मे सपदि शरणं देहि वरद!॥

हे प्रभो! शम्भो! आपके चरणों में मेरी यह विनम्र विनती है कि मुझे महामोहरूपी अन्धकार से, कलियुग के दोषों से और संसार-चक्र से छुटकारा देकर, हे वर देने वाले प्रणवमय बिन्सर के स्वामी! आप शीघ्र ही अपनी शरण प्रदान करें।

(15)

श्रीकृष्णसेमवालेन, स्नेहेनात्र समर्प्यते।
बिन्सरस्थमहेशाय, स्तुतिरेषा महोत्तमा॥

श्रीकृष्ण सेमवाल के द्वारा प्रणीत यह अत्युत्तम स्तुति बिन्सर में प्रतिष्ठित महेश्वर के लिए स्नेहपूर्वक समर्पित है।

"जयतु बिन्सरसंस्थितशङ्करः"

(1)

कुलपरम्परया प्रभुचिन्तने,
भवति यस्य मतिस्सुमतीश्वर!।
अयमहो विनयेन सुतस्तव,
प्रकुरुते स्तवनं स्तुतिभिश्च ते॥

हे सुमतीश्वर! वंशपरम्परा से जिसकी बुद्धि भगवान् के गुणानुवाद में तल्लीन रहती है, यह तुम्हारा पुत्र नम्रतापूर्वक नाना प्रकार की स्तुतियों के द्वारा तुम्हारा सद्वन्दन करता है।

(2)

बहुधरो धृतिमानगतेर्गति-
र्हितकरो मुदितो मृदुरव्ययः।
सुसरणः प्रवरो वरदो वरो,
जगति मङ्गलमातनुते शिवः॥

अपारतत्वों को धारण करने वाले, धैर्यशाली, एवं गतिविहीन को गति देने वाले, लोकोपकारी, प्रसन्नचित, कोमल एवं अव्ययरूप, निरन्तर गतिशील, प्रवर, वरद एवं श्रेष्ठ शिव समस्त संसार में कल्याण का विस्तार करते हैं।

(3)

सुरगणैः सततं समुपासितो, निखिलभूतगणैरपि सेवितः।
असुररूपधरैरनुपूजितः, जयतु बिन्सरसंस्थितशंकरः॥

देवताओं के द्वारा निरन्तर उपासित, समस्त भूत-प्रेतों द्वार सेवित, राक्षसों के द्वारा भी पूजित बिन्सर स्थित शंकर भगवान् विजय को प्राप्त हों।

(4)

स्मरहरो गिरिराजसुताप्रियो,
मधुरिपोरपि कष्टहरो हरः।
प्रकृतिवासपरस्सहजः शिवः,
प्रकुरुते सततं भुवि मङ्गलम्॥

कामदेव को नष्ट करने वाले, पर्वतराज हिमालय की पुत्री के परमप्रिय, भगवान् विष्णु के कष्टों को भी दूर करने वाले, प्राकृतिक वातावरण के प्रति अनन्य स्नेह करने वाले, सहजरूप, भगवान् शंकर निरन्तर विश्व में मंगल प्रदान करते हैं।

(5)

प्रणवरूपधरः परमेश्वरो,
व्यथितमानवतापहरो हरः।
गुरुवरो नितरां गुरुताधरो,
जयतु बिन्सरसंस्थितशङ्करः॥

ओंकार रूप धारण करने वाले, परमेश्वर, दुखी व्यक्तियों के दुःखों को दूर करने वाले, श्रेष्ठ, गुरु एवं निरन्तर गौरव को धारण करने वाले, बिन्सर में निवास करने वाले भगवान् शंकर संसार में विजय को प्राप्त करें।

(6)

विविध सौख्यसुधारसरञ्जितः,
सकलकालकलाकलितोऽप्यसौ।
न लभते यदि शान्तिमनुत्तमां,
त्वमसि तस्य तदा शिव शान्तिदः॥

नाना प्रकार की सौख्यरूपी अमृत रस से अभिषिक्त होता हुआ, संसार के समस्त कालचक्र से युक्त होता हुआ भी यदि यह मनुष्य अत्युत्तम शान्ति को प्राप्त नहीं करता है तो तब हे शंकर! तुम ही उसको शान्ति प्रदान करते हो।

(7)

किमु न वेत्सि महेश्वर भूतलं,
कपटछद्मछलैश्च कलङ्कितम्।
तदपि मां करुणेश्वर रक्ष हे,
विपदि सम्पतितं स्वसुतं शिव!॥

हे भगवान् शंकर! क्या तुम निरन्तर नाना प्रकार के कपट, छद्म एवं छलों के द्वारा कलकिंत संसार को नहीं जानते हो? अर्थात् अवश्य जानते हो। तब भी हे करुणेश्वर भगवान् शंकर! विपत्ति में पड़े हुए मुझ अपने पुत्र की रक्षा करो।

(8)

स्तुतिरेषा मया भक्त्या,
महादेवस्य सन्निधौ।
अर्प्यते सादरं प्रेम्णा,
सेमवालेन बिन्सरे॥

मैं श्रीकृष्ण सेमवाल बिन्सर में भक्ति एवं प्रेम से भगवान् शंकर के चरणों में इस स्तुति को सादर अर्पित करता हूँ।

"कल्याणं तनुते प्रसन्नवदनः श्रीबिन्सरे संस्थितः"

(1)

कैलासाचलसंस्थितो यतिवरो योगीश्वरः श्रीधरो,
ध्यानावस्थितचित्तवृत्तिरहितो गौरीश्वरो भास्वरः।
विद्याबुद्धिविलासलास्यरसिकः श्रीमान् महेशो भुवि,
कल्याणं तनुते प्रसन्नवदनः श्रीबिन्सरे संस्थितः॥

कैलाश पर्वत पर रहने वाले, महान् संयमी, योगीश्वर, विश्ववैभव-सम्पन्न, ध्यानावस्थित निर्विकल्प रूप, गौरीश्वर, देदीप्यमान, विद्या, बुद्धि और नृत्य, संगीत आदि विभिन्न कलाओं के अनुरागी, प्रसन्नवदन, बिन्सर में स्थित श्रीमान् महेश्वर निरन्तर संसार के कल्याण का विस्तार करते हैं।

(2)

ब्रह्माण्डे सहसा कठोरहृदयश्चण्डप्रचण्डक्षणे,
रुद्रस्ताण्डवमत्र संप्रकुरुते सृष्टेर्विनाशाय यः।
सोऽयं भूतिविभूषणो धनपतिर्नागेन्द्रहारो हरो,
लोके मानवतां तनोति सततं श्रीबिन्सरे संस्थितः॥

सृष्टि के विनाश के क्षण में जो भगवान् रुद्र कठोर हृदय होकर अत्यन्त रोषाकुल अवस्था में ताण्डव नृत्य करते हैं। भस्म-लेप से विभूषित, धन के स्वामी, सर्पों की माला धारण करने वाले, बिन्सर में स्थित वहीं भगवान् शिव संसार में मानवीय गुणों का विकास करते हैं।

(3)

यस्मिन् चारुतरं चराचरजगन्नक्षत्रहारावलिः,
यस्मिन् भूतपिशाचसिद्धसकला देवाः समस्तास्त्वयि।
लीयन्ते प्रलये तवैव कृपया शीघ्रं महाकाल हे!,
तस्मिन्मे भवतान्मतिः प्रतिदिनं श्रीबिन्सरस्याधिपे॥

हे महाकाल! समस्त जड़-चेतन जगत् नक्षत्ररूपी मणियों के हार, भूत, पिशाच, सिद्धगण तथा समस्त देवता प्रलय-काल में तुम्हारी कृपा से शीघ्र ही जिस आप में समाहित हो जाते हैं, ऐसे सर्वसमर्थ बिन्सराधिपति में मेरा मन सदा रमा रहे।

(4)

ध्यायन्ति स्तुतिगौरवं मुनिजनाः धर्मव्रताः मानवाः,
वेदव्यासपुराणशास्त्रनिवहैस्स्तोत्रैश्च यस्य प्रभोः।
कुर्मो बिन्सरवासिनो भगवतस्तस्याशुतोषस्य वै,
साष्टाङ्गप्रणतिं विधाय मुदिताः पूजां शुभां प्रत्यहम्॥

मुनिजन, धर्मव्रतधारी और आचारपूत मनुष्य महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित पुराणादि शास्त्रों एवं स्तोत्रों के माध्यम से जिस प्रभु की स्तुति के गौरव का ध्यान करते हैं, हम बिन्सर-वासी उस आशुतोष शंकर भगवान् को साष्टाङ्ग प्रणाम करते हुए प्रसन्न मन से प्रतिदिन उनकी कल्याणकारी पूजा करते हैं।

(5)

दीना दीनतरास्तथैव मलिना मातुर्भवान्याः सुताः,
दूरस्था गिरिकन्दरास्वनुदिनं वासं वसाना वयम्।
नत्वा त्वां जनकं तवैव जनता श्रद्धामयी साम्प्रतं,
श्रद्धायाः कुसमाञ्जलिं चरणयोस्ते चार्पयामः शिव॥

हे शिव! दीन, दीनातिदीन, पापपरायण, दूरस्थ पहाड़ों की गुफाओं में प्रतिदिन वास करने वाले मां जगदम्बा के पुत्र हम श्रद्धामयी तुम्हारी ही जनता पूज्य पितृचरण तुम्हें प्रणाम करती हुई वर्तमान में श्रद्धापूर्वक पुष्पाञ्जलि तुम्हारे चरणों में अर्पित करती है।

(6)

श्रीकृष्ण सेमवालोऽयं,
यच्छति सादरं मुदा।
बिन्सरस्थमहेशाय,
श्रद्धाञ्जलिमिमं हृदा॥

श्रीकृष्ण सेमवाल आदर एवं प्रसन्नता तथा प्रेम के साथ यह श्रद्धांजलि बिन्सरवासी श्री शंकर भगवान् को समर्पित करता है।

"जय हे बिन्सरपूज्यनायक!"

(1)

जगदीश्वर विश्वपालक!,
भवरोगस्य विनाशकारक!।
करुणावरुणालयप्रभो!,
परिशप्तं परिपाहि मां हर!॥

हे जगदीश्वर! संसार का पालन करने वाले, जन्म-मरणरूपी भव-रोग का विनाश करने वाले, करुणासागर हे महादेव! हे शंकर! आप मुझ अत्यन्त परिशप्त की रक्षा करें।

(2)

शिव शङ्कर शङ्करो भवान्,
भुवनेश त्वमये भवच्छिद!।
परितापतपेन पीडितं,
मनुजं मां परिरक्ष सर्वतः॥

हे शिव शंकर! जगत् का कल्याण करने वाले, संसार के स्वामी, भव-बन्धनों को काटने वाले, आधिभौतिक, आदिदैविक, आध्यात्मिक-तीनों तापों से पीड़ित मेरी सर्वतोभावेन रक्षा करें।

(3)

बहवो मम जीवने विभो,
विविधाः क्लेशपराः क्षणास्त्वया।
परया कृपया च तत्क्षणं,
न हि किं ते विलयीकृताः कृताः॥

हे सर्वव्यापी प्रभो! क्या आपने मेरे जीवन में घटित अनेक कष्टदायी क्षणों को अपनी परम कृपा से तत्काल विलीन नहीं किया।

(4)

परदुःखनिवारणाय किं,
गरलन्ते न गले लयीकृतम्।
अहमत्र विचित्रचित्रदं,
जगदीशं प्रणमाम्यहर्निशम्॥

दूसरों के दुःखों का निवारण करने के लिये क्या आपने विषपान करके उसे अपने कण्ठ में धारण नहीं किया? ऐसे आश्चर्यचकित करने वाले परब्रह्म परमात्मा शिव को मैं निरन्तर प्रणाम करता हूँ।

(5)

हिमशैलशिखानिवासिनं,
गिरिजायाः पतिमद्भुतं हरम्।
विनयेन नयेन भक्तितः,
प्रणतिः सादरमत्र चार्प्यते॥

हिम-पर्वत के शिखरों पर निवास करने वाले, पार्वतीपति, विलक्षण चरित्रवाले, क्लेशों को हरने वाले भगवान् शिव के प्रति मैं नम्रता और भक्ति से विधिपूर्वक सादर अपनी प्रणति अर्पित करता हूँ।

(6)

त्रिपुरान्तक! चित्तचिन्तक!
जगतो यन्त्रक मन्त्रक! प्रभो!।
अयि नश्वरजीवनान्तक!,
परिपाहि स्वकृपालवेन माम्॥

हे त्रिपुरराक्षस के विनाशक, मन के चिन्तन में निरत, जगत् को नियन्त्रित करने वाले, संसार को सद्बुद्धि देने वाले और नश्वर जीवन का अन्त करने वाले हे भगवान् शिव! अपनी कृपा के लेश मात्र से मेरी रक्षा करें।

(7)

प्रणमामि नमामि भक्तितः,
स्मरणन्ते प्रकरोमि श्रद्धया।
अनिशं कृपयैव ते विभो,
भुवि जीवामि जगन्नियन्त्रक!॥

हे सर्वव्यापी भगवन्! मैं आप को भक्ति पूर्वक प्रणाम करता हूँ और नमस्कार करता हूँ तथा श्रद्धापूर्वक आपका स्मरण करता हूँ। हे संसार के नियन्त्रक प्रभो! मैं तुम्हारी कृपा से ही इस संसार में जीवित हूँ।

(8)

भुवि गोचरगोचरश्च यः,
प्रचुरो भक्तिचरो रहश्चरः।
रचनां रचयत्यगोचरः,
स गिरीशः परिपातु मां हरः॥

जो भगवन् अनुभूति द्वारा संवेध्य हैं, भक्ति द्वारा प्राप्य हैं, एकान्त प्रिय हैं। जो मन तथा इन्द्रियों से अतीत होकर सृष्टि की रचना करते हैं। वे कैलाशपति शिव मेरी रक्षा करें।

(9)

अयि मन्मथमानमर्दक!,
भुवने पुण्यपथप्रदर्शक!।
गिरिगौरवगर्वदायक !,
जय हे बिन्सरपूज्यनायक!॥

हे कामदेव के मान का मर्दन करने वाले, संसार के लोगों को पुण्य का मार्ग दिखाने वाले, हिमालय पर्वत को गर्व तथा गौरव प्रदान करने वाले, बिन्सर के पूजनीय नायक श्री महादेव! आप की जय हो।

(10)

जय हे जय हे जगत्प्रभो!,
जनतायाः सकलार्तिनाशक!।
अयि बिन्सरभालचन्द्रमः!,
प्रणतिस्ते मनसा विधीयते॥

हे जगत् के स्वामी! लोगों के दुःखों का नाश करने वाले, बिन्सर रूपी भाल के चन्द्र भगवान् शंकर! मैं हृदय से आप को प्रणाम करता हूँ।

(11)

शरदिन्दुसमानमुज्ज्वलं,
चरितं शङ्कर! ते शुभप्रदम्।
मम भाग्यविधानबोधकं,
सततं स्यादिति ते निवेद्यते॥

हे शंकर! शरत्कालीन चन्द्रमा के समान उज्ज्वल कल्याणकारी आपका चरित्र, मेरे भाग्य का निरन्तर उद्बोधक हो, यही मेरी आपसे विनम्र प्रार्थना है।

(12)

श्रीकृष्णसेमवालोऽयं,
श्रद्धाभावेन भावितः।
बिन्सरस्थमहेशाय,
स्तोत्रमेतत् प्रयच्छति॥

श्रद्धाभाव से भावित होकर श्रीकृष्ण सेमवाल द्वारा बिन्सर में प्रतिष्ठित महेश्वर की सेवा में यह स्तोत्र सादर समर्पित है।

"मां रक्ष शङ्कर सदा भुवि बिन्सरीय!"

(1)

हे भूतनाथ भवनाथ दरिद्रबन्धो!,
हे हे दयामयमनः करुणार्द्रसिन्धो!।
दुःखानि नाशय विभो मम मूर्खजन्तोः,
त्वं पाहि मां सपदि हे जगदेकतन्तो!॥

हे समस्त जीवों के स्वामी! हे जगत् के अधिशासक! हे निर्धनों के बन्धु, दयार्द्रचित्त वाले, करुणा के सागर! हे विभो! मुझ मूर्खजन के दुःखों का नाश करो। साथ ही हे जगत् के एकमात्र सूत्रधार! आप शीघ्र मेरी रक्षा करो।

(2)

तृष्णा तनोति हृदये विविधाँस्तरङ्गान्,
येनात्मना विचलितश्चलितो महेश!।
भूमौ भ्रमामि भवजालविमुग्धचित्तः,
मन्दातिमन्दमतिरेष सुतस्त्वदीयः॥

हे महेश! मेरे हृदय में तृष्णा अनेक तरङ्गों को जन्म दे रही है। जिससे मैं मन से उन तरङ्गों के आघात से अत्यन्त विचलित और व्याकुल हूँ। संसार के रागद्वेषमय जाल से बँधा हुआ मैं विमुग्धमति तथा अत्यन्त मन्दबुद्धि वाला यह तुम्हारा पुत्र संसार में भटक रहा हूं।

(3)

संसारसाररहितो रहितो गिरीश!,
मोहान्धकारमलिनो न हि किं विजाने।
हे हे शिव व्यथितमानवतापहारिन्,
मां पाहि सम्प्रति विभो परिपाहि पाहि॥

हे पर्वताधिपति भगवान् शंकर! मैं संसार के रहस्य से सर्वथा अपरिचित हूँ। मोहरूपी अन्धकार से मलिन मतिवाला मैं कुछ भी नहीं जानता। दुखी मनुष्यों के ताप को दूर करने वाले भगवान् शंकर! आप मेरी रक्षा करें।

(4)

क्रीडासनासनविहारपरम्परायां,
हा हन्त भोगविभवादिकभावनायाम्।
यातं मदीयमखिलं प्रियजीवनन्तत्,
किं साम्प्रतं मम भविष्यति नो विजाने॥

क्रीडा, विनोद, भोजन, भ्रमण आदि कामों में व्यस्त रहकर तथा सांसारिक भोगों में आसक्त होकर मेरा सम्पूर्ण मूल्यवान् जीवन व्यर्थ ही चला गया। अब मेरी क्या दशा होगी, यह मैं कुछ नहीं जानता हूँ।

(5)

हे तापशापशमनोत्कटबिन्सरीय!,
तापानि मे शमय सर्वविधानि सद्यः।
दासोऽस्मि ते चरणचारुरजःकणानां,
मां रक्ष शङ्कर सदा भुवि पर्वतीय!॥

समसत ताप और शापों के शमन करने में प्रवीण हे बिन्सर के स्वामी! मेरे सभी प्रकार के तापों का शमन कीजिये। मैं आपके चरणों के दिव्य रजकणों का दास हूँ। हे पर्वतनिवासी शिव! आप पृथ्वी पर सब प्रकार से मेरी रक्षा करें।

(6)

कालोऽस्ति साम्प्रतमहो कलिकल्मषीयः,
नानाविचारचरिताः कुटिलाः कृतघ्नाः।
सञ्चालयन्ति भुवनं किल पामरा हा,
किन्नो भविष्यति दशात्र च मादृशानाम्॥

वर्तमान समय कलियुग के पापकर्मों से कलुषित है। दुःख का विषय है कि विभिन्न विचार वाले कुटिल, कृतघ्न एवं पामर लोग संसार का संचालन कर रहे हैं। अतः मुझ जैसे व्यक्तियों की इस संसार में क्या दशा होगी यह समझ में नहीं आ रहा है।

(7)

त्वत्पादपद्मपतितः किल किङ्करोऽयं,
कृत्वा विनम्रमनसा प्रणतिं स्वकीयाम्।
भूमौ लुठत्यतितरामयमत्र तप्तः,
रक्ष त्वमेनमनिशं परिवारयुक्तम्॥

आपके चरण-कमलों में पड़ा हुआ यह किंकर विनम्र मन से आपको अपना प्रणाम करता हुआ इस संसार में अत्यन्त दुखी होकर पृथ्वी पर लड़खड़ा रहा है। अतः परिवार सहित इस अपने पुत्र की आप निरन्तर रक्षा करो।

(8)

विश्वस्य शोकशमनोत्सुकसम्भवो यः,
सञ्चारयत्यखिलशक्तिधरो महेशः।
कार्याणि सर्वजनसौख्यपराणि भूमौ,
सोऽयं करोतु सततं मम सुप्रभातम्॥

संसार के शोक का शमन करने के लिए उत्सुक, सक्षम एवं सम्पूर्ण शक्तिमान् जो शंकर संसार के सभी लोगों के सौख्यपरक कार्यों का संचालन कर रहे हैं। वे ही शंकर भगवान् मुझे निरन्तर सुप्रभात प्रदान करें।

(९)

संसारजालजनिताद् महतो भयाद् वै,
भीतोऽस्म्यकिञ्चनजनो विकलो महेन्द्र!।
विश्वाटवीं प्रति चलन् व्यथितोऽतिश्रान्तः,
त्वय्येव सम्प्रति समाश्रयमाश्रयामि॥

हे महेन्द्र! सांसारिक प्रपञ्चों में उत्पन्न महान् भय के कारण भयभीत होकर मैं अकिञ्चन व्यक्ति व्याकुल हो रहा हूँ। इस संसार रूपी बीहड़ वन में चलते-चलते बहुत दुखी एवं श्रान्त हो गया हूँ। अब तुम ही वर्तमान में एकमात्र मेरे आश्रय हो।

(10)

सर्वात्मना लसति ते प्रथमादिशक्तिः,
त्वत्तः समस्तजगतः परिचालनञ्च।
त्वय्येव किन्न निहितं भगवन् हितं मे,
तर्हि त्वमेव परिरक्ष शिव! स्वयं माम्॥

हे भगवन् शंकर! आपकी आद्या शक्ति ही पूर्णतया जगत् में अपना कार्य कर रही है। आप ही इस जगत् का परिपालन करते हैं। हे प्रभो! क्या मेरा हित आपका आश्रय लेने में निहित नहीं है? तो हे भगवन् शिव! आप स्वयं ही मेरी रक्षा करें।

(11)

शम्भो तवैव चरणाब्जमरन्दलुब्धः,
सम्प्रत्ययादुपगतस्तव बिन्सरेऽस्मिन्।
त्वं देहि सत्वरमतः शरणं मदर्थं,
भक्त्या करोति विनयं कविसेमवालः॥

हे भगवन् शम्भो! मैं आपके चरण-कमलों के मकरन्दपान का लोभी अनन्य विश्वास का संबल लेकर इस बिन्सर में आपके पास आया हूँ। हे महेश! आप मुझे शीघ्र आश्रय प्रदान करने की कृपा करें। यह आपका भक्त कवि श्रीकृष्ण सेमवाल श्रद्धापूर्वक विनती करता है, कृपया इसे स्वीकार करें।

वाग्वैभवम्

1. वाग्वैभवम्

वाग्वैभवम्

(1)

जनयति सुमतिं या दुर्मतिं दारयन्ती,
प्रकटयति गुणौघं दुर्गुणान्वारयन्ती।
वितरति सुखराशिं नाशयन्ती समस्यां,
जयति जगति माता सर्वलोकप्रणम्या॥

जो माँ दुर्बुद्धि को नष्ट करके सद्बुद्धि को प्रदान करती है, दुर्गुणों का अवरोधन करके सद्गुणों को देती है, सम्पूर्ण समस्याओं का समाधान कर सुखराशि को वितरित करती है, सब लोगों द्वारा वन्दनीय वह माता संसार में विशेषोत्कर्ष से विराजमान रहे।

(2)

हरिपदकमलेभ्यो निर्गते जह्नुकन्ये!
शिवशिरसि गतेऽपि त्वत्समग्रं ह्यधोऽधः।
प्रभवति पतनं यद् भूतले कष्टयुक्तं,
तदपि जनहितार्थं वर्तते मातृरूपे!

हे गंङ्गे! विष्णु के चरणकमलों से निकलकर शिव के सिर में पहुँचने पर भी तेरा संसार में जो सभी प्रकार से अधः पतन हुआ है वह भी लोक कल्याण के लिए ही हुआ है।

(3)

चरण! शरणमस्य त्वं मुरारेः प्रयाहि,
नहि नहि भुवि तेऽन्यो विद्यते कोऽपि पन्थाः।
अयि! तव परितापं नाशयन् साम्प्रतं सः,
पदमतिविमलन्ते दास्यतीच्छानुकूलम्॥

हे चरण! तुम मुरारि के शरण में जाओ। इसके अतिरिक्त संसार में तुम्हारे लिए कोई दूसरा मार्ग नहीं है। सम्प्रति वह तुम्हारे सभी कष्टों का नाश करता हुआ तुम्हारी इच्छा के अनुकूल तुम्हें सुन्दर पद प्रदान करेगा।

(4)

चरितमतिविचित्रं वीक्ष्य ते वृक्ष! लोके,
भवति हि बहुलोऽयं विस्मयो मानसे मे।
क्षिपति तव शरीरे प्रस्तरान्दुर्जनो यो,
त्वमयि सपदि तस्मै यच्छसीच्छाफलानि॥

हे वृक्ष! तेरे विचित्र चरित्र को देखकर मेरे हृदय में बड़ा भारी आश्चर्य होता है। जो व्यक्ति तुम्हारे शरीर में पत्थरों को फेंकता है उसे तुम शीघ्र अभीष्ट फल देते हो।

(5)

विमलकमलहासं चन्द्र ते वीक्ष्य मूर्खः,
क्षिपति तव मुखे चेदीर्ष्यया ष्ठीवनं यः।
किमपि नभसि गत्वा तत्परावृत्त्य भूयः,
मलिनमयि विधातुं तन्मुखं चैव याति॥

हे चन्द्र! ईर्ष्यावश तेरे सौन्दर्य को देखकर यदि मूर्ख व्यक्ति तेरे ऊपर थूक फैंकता है तो वह कुछ दूर आकाश में जाकर पुनः लौटकर उसके ही मुख को मलिन करता है।

(6)

अयि गिरिवर! लोके ते शिलाखण्डपाते,
न भवति यदि हानिः कापि दुःखप्रदात्री।
अचल! मुनिसमं त्वां निश्चलं मन्यमानः,
कलयति किमुपेक्षां नैव ते लोक एषः॥

अरे पर्वत! यदि संसार में तेरे शिलाखण्ड़ों के गिरने से कष्टकारी महती हानि न होती तो तुम्हें मुनि के समान अचल समझकर क्या संसार तुम्हारी उपेक्षा नहीं करता!

(7)

गिरिगहन-वनेभ्यो घर्षयन्ती स्वदेहं,
प्रवहसि भुवनेऽस्मिन् या परार्थं सदैव।
सुनदि! तव महत्त्वं ये न जानन्ति लोके,
विरम विरम किञ्चित् कालमेवात्र तेभ्यः॥

हे सुनदि! जो तू घनघोर जंगलों से, बड़े भारी पहाड़ों सी अपनी देह का संघर्षण करती हुई दूसरों के हित के लिए निरन्तर बहती रहती है जो व्यक्ति ऐसी नदी के महत्व को नहीं जानते हैं उनके लिए तू कुछ समय के लिए विराम कर, जिससे वह तेरे महत्त्व को समझ सकें।

(8)

दिनकर! यदि शक्तिर्विद्यते ते प्रतापे,
जलनिधिमखिलं तं शोषयेः क्षिप्रमेव।
अयि! लघुवपुरेतत्पल्वलं शोषयित्वा,
तव हृदि किमु लज्जा नैव संयाति काचित्॥

हे सूर्य! यदि तेरे प्रचण्ड ताप में ताकत है तो उस अथाह समुद्र को शीघ्र ही सुखा। अरे इस छोटे से तालाब को सुखाकर क्या तुम्हारे हृदय में कुछ भी लज्जा का अनुभव नहीं होता!

(9)

तृणमिदमिति जाने नास्ति सत्ताऽस्य काचिद्,
वियति पवनदास्यं स्वीकरोत्येव नूनम्।
परमिदमपि नेत्रे चेत् पतेद्दैवयोगात्,
जनयति बहुपीडां नास्ति सन्देहलेशः॥

मैं जानता हूँ यह एक छोटा सा तिनका है, इसकी अपनी कोई भी सत्ता नहीं, यह निर्विवाद सत्य है कि यह आकाश में वायु की दासता से ही उड़ सकता है। परन्तु यह भी दैवयोग से आँख में पड़ जाये तो अतिशय पीड़ा को उत्पन्न करता है; इसमें कोई भी सन्देह नहीं है।

(10)

वितरति भुवने यो गन्धमेतं सगर्वं,
विविधविषयभोगी यत्र कुत्रापि वायुः।
किमपि न हि तदीयं केवलं भारवाही,
मनुज! भव सतर्कश्छद्मरूपे त्वमस्य॥

विविध प्रकार के विषयों का भोग करने वाला वायु अभिमानपूर्वक संसार में जहां कहीं भी सुगन्ध को फैलाता है, वस्तुतः वह उसकी अपनी वस्तु नहीं है, वह तो केवल भारवाही है। इसलिए हे मनुष्य! इसके कपटी स्वरूप से तुम सावधान हो जाओ।

(11)

दिनकरकिरणानां तापशापानुतप्तं,
किसलयदलमेतन्म्लानतां नन्वगच्छत्।
जगति विधिविधानं दृश्यते ह्येतदेव,
ग्लपयति ननु तेजः कोमलं निर्बलञ्च॥

सूर्य की किरणों के ताप के शाप से सन्तप्त होता हुआ यह किसलय दल म्लानता को प्राप्त हो गया है। संसार में प्रारम्भ से ही विधाता का विधान चला आ रहा है कि तेज या शक्ति कोमल और निर्बल को ही नष्ट करती है।

(12)

किरति बहुतरं यस्सर्वभूमण्डलेऽस्मिन्,
दिवसपतिरजस्त्रं भीषणं तापपुञ्जम्।
अयमपि विधियोगाद् ग्रस्यते राहुणा वै,
नृप! कथय किमर्थं दर्पसर्पं विभर्षि॥

जो सूर्य सम्पूर्ण संसार में निरन्तर अत्यन्त भीषण गर्मी को फैलाता है, वह भी भाग्यवशात् एक छोटे से ग्रह राहु से ग्रस्त हो जाता है इसलिए हे राजन्! कहिए? किसलिए तुम इस अभिमान रूपी सांप को धारण कर रहे हो।

(13)

चरणतलनिवासो विद्यते यस्य नित्यं,
व्यथय नहि रजस्तद्दीनदीनं कदापि।
तदपि परमकष्टैर्बाध्यमानञ्च भूत्वा,
प्रकटयति विरोधं दूषयत्युत्तमाङ्गम्॥

जो धूल हमेशा पैरों के नीचे निवास करती है उस असहाय एवं दीन धूल को कभी भी परेशान न करो। क्योंकि वह भी कष्ट से अत्यधिक दुःखी होकर उस प्राणी के सिर को भी धूल से दूषित करती हुई अपना विरोध प्रकट करती है।

(14)

सरलकमल! मास्मिन्विश्वसेः भृङ्गयूथे,
नव-नव-रसलुब्धो विद्यते सर्वदाऽयम्।
मधुर-मृदु-सुगुञ्जन् दर्शयन्प्रेमबन्धं,
तव सकलमरन्दं पास्यति प्राप्स्यतीति॥

हे सरल-हृदय-कमल! इन भौरों के समूह पर विश्वास मत करो, यह तो सर्वदा नए-नए रस के लोभी हैं। यह तो मधुर एवं मृदुल गुञ्जार करता हुआ प्रेम प्रदर्शित करके तुम्हारे सम्पूर्ण मकरन्द का पान करेगा और अन्यत्र पहुँच जायेगा।

(15)

मलिनमतिरते रे भीतिभावं विहाय,
त्वमजदलसमानं स्वात्मयूथं विशालम्।
रचय रचय धीद्विट्! यापयेस्तान्यहानि,
वयमिह तु चलामस्सिंहवद् ह्याश्रयो नः॥

हे दुर्बुद्धि सम्पन्न! तू भय की भावना को त्यागकर अपने समान ही अपना एक विशाल दल बना और अपने दिन बिता। हम तो यहां से चलते हैं, क्योंकि सिंह के समान हमारा आश्रय सभी जगह है।

(16)

मनुजवरवरेण्याकर्णय त्वं वचो मे,
खलजनदलमध्ये मा गमस्त्वं कदाचित्।
मृदुहृदयमवेक्ष्य त्वां यतो धूर्तराजाः,
विविधविधिकुकृत्यैः पीडयिष्यन्ति नूनम्॥

हे सज्जन पुरुष! तुम मेरे वचनों को सुनो – कभी भी दुष्ट व्यक्तियों के बीच मत जाओ। क्योंकि ये धूर्त लोग तुम्हारे भोलेपन का लाभ उठाकर तुम्हें नाना प्रकार से पीड़ित करेंगे।

(17)

सकलभुवनमध्ये देहिनां प्राणरूपः,
त्वमसि पवन! मान्यो व्यापकोऽतिप्रसिद्धः।
तदपि वहसि रे त्वं दूषितं गन्धमेतत्,
कथय कथय कोऽयं हीदृशः प्रेमबन्धः॥

हे पवन! तुम समस्त संसार में प्राणिमात्र के प्राणरूप माननीय, व्यापक एवं अत्यन्त ख्यातनामा हो, तो फिर तुम इस दुर्गन्ध को क्यों वहन कर रहे हो? कहो तुम्हारा यह कैसा प्रेम बन्धन है।

(18)

भवनमहमपूर्वं श्रेष्ठिभिस्सेव्यमानं,
विविधविधिकलाभिर्भूषितं भव्यरूपम्।
अयि मनसि सहर्षं धारयद् गर्वमुच्चैः,
स्मृतिमपि नहि यातो भूमिकम्पः कथन्ते?

नाना प्रकार की कलाओं से सुशोभित एवं भव्य स्वरूप वाला मैं अपूर्व भवन हूँ। संसार के समस्त धनिक लोग मेरा उपभोग करते हैं। अरे भवन! इस तरह के अभिमान को मन में धारण करते हुए क्या तुम्हें भूकम्प का स्मरण नहीं होता।

(19)

गगनमण्डलचञ्चलचन्द्रमः,
कथय रे मदमोहवृतः कथम्।
स्मरसि किं कुकृतं न पुरा कृतं,
मलिनमस्ति यतश्चरितञ्च ते॥

हे आकाश मण्डल में चलायमान चन्द्रमा! कहो क्यों तुम इस तरह अभिमान से ग्रस्त हो। क्या तुम्हें अपने पूर्वकृत कुकुर्म का स्मरण नहीं है, जिससे तुम्हारा चरित्र कलंकित है।

(20)

अलभथास्त्वमिदं सदृशं फलं,
निजकृतस्य कलंकितकर्मणः।
मलिनया निशया सह हा शशिन्,
यदभवत्तव विप्रियबन्धनम्॥

हे चन्द्र! तुमने अपने किए हुए दुष्कर्म का उसके ही अनुकूल फल प्राप्त किया। जो मलिन रात्रि के साथ तुम्हारा अनिच्छित स्थिर सम्बन्ध हुआ।

(21)

उपगते त्वयि हे मधुमन् मधो!
युवतयो मुदिता मुदिता जनाः।
प्रमुदिता धरणी मुदिता लताः,
कथमियं व्यथिता ननु मालती॥

हे मधु वर्षी वसन्त! तुम्हारे आने पर सम्पूर्ण युवतियां प्रसन्न हैं, जन-जीवन प्रसन्न है, पृथ्वी प्रसन्न है, लता, वृक्षादि प्रसन्न हैं। किन्तु यह मालती क्यों दुःखी है!।

(22)

समुदिते गगने गरिमान्विते,
दिनमणौ जनतासमतारते।
प्रतिभया विभयापि च सत्तया,
व्यपगतो विधुरेष महत्तया॥

जनता के प्रति समान रूप से स्नेह रखने वाले गौरवशाली सूर्य के आकाश में उदित होने पर यह चन्द्रमा अपनी प्रतिभा से, विभा से, महत्ता से और सत्ता से रहित हो गया है।

(23)

कथय विन्ध्य! कदापि हृदा त्वया,
कृतमिदन्तु विचारविचिन्तनम्।
जगति मानविनाशकरी सदा,
मम भविष्यति कष्टकरी दशा॥

हे विन्ध्य! कहो तुमने कभी अपने दिल में इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया कि संसार में प्रतिष्ठा को समाप्त करने वाली मेरी यह कष्टकारी दशा भी होगी।

(24)

द्विगुणतामुपयाति विभा शुभा,
मधुरिमाकृतिदेहभृतो भुवि।
विकृतदेहभृतोऽपि च पूज्यते,
सदसि वः कृपयैव गुणाः! सदा॥

हे सद्गुणों! तुम्हारी कृपा से सुन्दर आकृति वाले व्यक्ति की कल्याणकारी प्रतिभा दुगुनी हो जाती है और तुम्हारी ही कृपा से विकृत देहधारी मनुष्य भी विद्वान् एवं सज्जनों की गोष्ठियों में पूजा जाता है।

(25)

अयि! यच्छसि सर्वदाश्रयं,
पथिकेभ्यो वट! फुल्लचेतसा।
न हि? चित्रमिदं त्वदाश्रितः,
क्षुपवर्गस्तु निहन्यते त्वया॥

हे वट्वृक्ष! जहां एक ओर तुम प्रसन्नतापूर्वक सम्पूर्ण पथिकों को आश्रय देते हो वहीं दूसरी ओर यह आश्चर्य नहीं कि तुम अपने ही आश्रित पौधों को नष्ट करते हो।

(26)

मणिरक्षार्थमसौ फणी गले,
गरलञ्चेदिह धारयत्यरे।
जनता सततं दुरुक्तिभिः,
कथमेतं भुजगं विनिन्दति॥

यदि यह सांप अपनी मणि की रक्षा के लिए अपने गले में जहर रखता है तो संसार अपने दुर्वचनों से इसको क्यों निन्दित करता है।

(27)

दयतेऽपि च दूयते मनः
सरलं तं परिवीक्ष्य रासभम्।
प्रथितो भुवि मूर्खसंज्ञया,
निरतः कर्मणि निष्ठयाप्ययम्॥

उस सरल हृदय गधे को देखकर मन दया एवं दुःख से परिपूर्ण हो उठता है। क्योंकि निष्ठा से कार्य करता हुआ भी वह संसार में मूर्ख की संज्ञा से सम्बोधित किया जाता है।

(28)

अयि हंस! सुनिर्णये तव,
यदि कश्चिद् विदधाति संशयम्।
त्वरितं वद कःक्षमःक्षितौ,
पुनरन्यायविचारणेऽधुना ॥

हे हंस! यदि तुम्हारे सद्निर्णय पर किसी को सन्देह है तो बताओ संसार में सत् असत् के विचार करने में फिर कोन समर्थ होगा।

(29)

मलयानिल! ते गुणोत्तमं,
न हि वक्तुं भुवि कोऽपि सक्षमः।
मृदुतां न जहासि सौख्यदां,
भुजगश्वासविदूषितोऽपि सन्॥

हे मलयानिल! संसार में तेरे श्रेष्ठ गुण को व्यक्त करने में कोई भी सक्षम नहीं है क्योंकि तुम जहरीले साँप की उष्णश्वासों से दूषित होते हुए भी मानवमात्र को सुख देने वाली अपनी शीतल सुगन्ध को नहीं छोड़ते हो।

(30)

दिवसस्य विभूषणं रविः,
सुनिशायाश्च विभूषणं विधुः।
कमलं च ह्रदस्य भूषणं,
सुजनो ह्यस्ति विभूषणं भुवः॥

दिन का विभूषण सूर्य है, रात्रि का आभूषण चाँद है और तालाब का आभूषण कमल है। इसी प्रकार संसार का भूषण सज्जन है।

(31)

गहने विपिनेऽप्ययं जनः,
कुटिलं स्थूलतरं विहाय तम्।
सरलं मृदुलं मनोरमं,
तरुवृन्दं किल कृन्तति ध्रुवम्॥

यह मनुष्य घनघोर जंगल में भी टेढ़े मेढ़े वृक्षों को छोड़कर सीधे, कोमल एवं सुन्दर वृक्षों को ही निरन्तर काटता है।

(32)

जलधेः पुलिने विराजितं,
सरसाब्धौ मम मज्जितं मनः।
मलयानिलवीज्यमानया,
सुनलिन्या मलिनीकृतं कथम्॥

समुद्र के सुन्दर तट पर विराजमान रस सागर में निमज्जित मेरे मन को मलयानिल से प्रबोधित नलिनी ने कैसे मलिन किया।

(33)

चषकेति सदैव चिन्तयन्,
चषकोऽयञ्च कषायतां गतः।
न मयाधिगतः कदापि सः,
मम जन्मैव च तेन निष्फलम्॥

चषक का निरन्तर चिन्तन करने पर यह चषक ही कसैला हो गया है। किन्तु कभी भी वह चषक मुझे प्राप्त नहीं हुआ। जिससे मेरा जन्म ही निष्फल हो गया है।

(34)

प्रभुतामृदुताधनादिकाः,
यदि सन्तीति नरान्तिके गुणाः।
अयि दीप्तिरतीव मोहिनी,
स्वयमायाति निवासहेतवे॥

यदि मनुष्य के पास प्रभुत्व, मृदुत्व एवं धनादि गुण विद्यमान हैं तो अत्यन्त मनोहारिणी दीप्ति अपने आप ही निवास के लिए उसके पास चली जाती है।

(35)

बदरिकाफलसुन्दरताभवं,
त्यज सखेऽखिलगर्वमहाज्वरम्।
सुललिते त्वयि बाह्यमनोहरे,
न हि स लुभ्यति वेत्ति तवान्तरम्॥

हे मित्र बदरिका फल! अपनी सुन्दरता से उत्पन्न सम्पूर्ण गर्व-रूपी ज्वर को छोड़ दे। क्योंकि तेरे बाहर से सुन्दर एवं मनोहर होने पर जो व्यक्ति तेरे आभ्यन्तर रूप को जानता है वह तुम पर कभी आकर्षित नहीं हो सकता।

(36)

सुविमलं बहिरेव मनोहरं,
बदरिकाफलमेतदवेक्ष्य रे।
त्वमयि मुह्यसि किन्नु ततः परं,
तव भविष्यति दुर्मतिचिन्तनम्॥

अरे! बाहर से विमल एवं कोमल बदरिका के फल को देखकर यदि तुम मोहित होते हो तो इससे बढ़कर तेरा दुश्चिन्तन क्या होगा।

(37)

सिंहो वानरसदृशीं न कुरुते संतर्जनां धर्षणां,
नैवं वाञ्छति वन्यजीवनिचयं कर्तुं भयेनार्दितम्।
यद् यच्चापि समीहते प्रकुरुतेऽरण्ये त्वसौ निर्भयः,
श्लाघा सत्त्ववतां हि गौरवमयी काप्यद्भुता चेतना॥

सिंह वन्दर के समान सन्तर्जना एवं घर्षणा नहीं करता है, न ही जंगली जीवों को भय से व्याकुल करना चाहता है, वह जो भी चाहता है उसे जंगल में निर्भीक होकर सम्पन्न करता है; निश्चयेन ताकतवर व्यक्तियों की गौरवमयी चेतना प्रशंसनीय है।

(38)

यातो ह्याम्रतरोस्तले प्रियसखे तन्निन्दकश्चैकदा,
सोऽनिन्दत्तमहो फलान्यतिलघून्यालोक्य तस्मिँस्तरौ।
दैवात्कीरनिषेवितं प्रपतितं तस्मात्फलं तन्मुखे,
पीडास्वादसुखेन तेन युगपज्ज्ञातञ्चतद्गौरवम्॥

हे मित्र! वह निन्दक एक समय आम के वृक्ष के नीचे गया और उस पेड़ पर लगे छोटे फलों को देखकर उनकी निन्दा करने लगा। दैवयोग से उस पेड़ से तोते के द्वारा खाया हुआ एक फल उसके मुख में गिरा। जिससे उसे एक साथ पीड़ा एवं रसास्वाद के प्राप्त होने से उसे इसके गौरव का पता चला।

(39)

साफल्यं लभते श्रमेण भुवि यः शिक्षामिमां यच्छति,
दूरस्थानि फलानि तस्य विपिने सम्वीक्ष्य लोकाः समे।
आलस्यस्य वशंगताः कुपुरुषाः कर्तव्यमार्गच्युता,
निन्दन्ति श्रमवर्जिताः तमपि रे खर्जूरवृक्षं सदा॥

श्रम से सफलता मिलती है इस प्रकार की शिक्षा देने वाले अरण्य स्थित उस खर्जूर के दूरस्थ फलों को देखकर आलस्य के वशीभूत श्रमहीन एवं कर्तव्य मार्ग से विचलित व्यक्ति उसकी निन्दा करते हैं।

(40)

संसाराय समस्तवस्तुनिचयं दत्त्वापि रे पर्वत!,
योगीवाचलतां गतस्त्वमपि भो लोकोपकारे रतः।
औदासीन्यमलौकिकं विदधता नित्यं त्वया तं प्रति,
भव्यादर्शो इह प्रियः प्रकटितो निःस्वार्थसेवापरः॥

हे पर्वत! संसार को समस्त वस्तु दान करने पर भी तुम योगी की तरह निस्पृह एवं अचल रहते हो, तुमने इस प्रकार की अलौकिक उदासीनता को धारण करके संसार में निस्वार्थ सेवा के भव्य आदर्श को प्रदर्शित किया है।

(41)

यान्तं वीक्ष्य मदालसं गजवरं स्वीकृत्य मन्दां गतिं,
कश्चित्तं निजगाद कौतुकमनाः सव्यङ्ग्यवाचा न्विदम्।
पूर्वं राजगृहे निवाससुखदःकालः प्रयातस्तु ते,
रे रे सम्प्रति किं पुनर्वहसि रे दर्पं पुरा धारितम्॥

किसी व्यक्ति ने मदमस्त हाथी को एक समय मन्द गति से चलता हुआ देखकर हंसी-हंसी में उसे इस प्रकार व्यंग्य वचन कहा कि अरे! पहले राजनिवास में रहते हुए आपके ऐश्वर्यमय दिन लद चुके हैं फिर भी इस प्रकार गर्व क्यों धारण कर रहे हो।

(42)

आद्यन्तं तव वेद्मि पुष्प! निखिलं यद्विद्यते यादृशं,
लोकालोकविमोहमोहरहितश्चेतस्तथाऽप्यत्र मे।
संरागेण समन्वितञ्च ललितं वायोः कृपाभूषितं,
सौन्दर्यं तव वीक्ष्य सम्प्रति हठात् संमोहयत्यद्भुतम्॥

हे पुष्प! जैसा भी तुम्हारा आदि और अन्त है उसे मैं अच्छी तरह से जानता हूँ। तो भी संसार की चकाचौंध व मोहजाल से रहित मेरा मन सुन्दर राग से समन्वित एवं वायु की कृपा से शोभायमान तेरे सौंदर्य को देखकर हठात् सम्मोहित हो रहा है।

(43)

याताःकेचन कुक्कुराः विधिवशादेकं वनं चैकदा,
भोज्यं तत्र विलोक्य ते हतमृगं शब्दायमाना मिथः।
तत्कोलाहलरोदनैस्तु कुपितः पार्श्वे शयानस्तदा,
सिंहो यत् प्रतिबोधितः किमभवत्तेभ्यो वरं कर्म तत्॥

एक समय कुछ कुत्ते दैवयोग से एक वन में गए वहां वे एक मरे हुए मृग को देखकर उसको खाने के लिए आपस में झगड़ने लगे, तभी उनके कोलाहल और क्रन्दन से कुपित होता हुआ पास में ही सोया शेर जो जाग उठा, क्या यह कार्य उनके लिए अच्छा हुआ।

(44)

सिंहोऽयं स्वभुजार्जितं वनमिदं यत्स्वेच्छया गाहते,
दर्पोद्दामतया च दुर्गमवनान्याकम्पयन् राजते।
अन्ये निष्क्रियतापरा हि पशवस्तं वीक्ष्य चेन्मानसे,
हा क्रोशन्त्यतिदीनमन्दमतयःकिं तस्य तैर्हीयते॥

यह शेर स्वभुजार्जित वन में स्वेच्छापूर्वक विचरण कर रहा है और अत्यधिक दर्पोन्मत्त होता हुआ सम्पूर्ण वनों को कम्पित करके सुशोभित हो रहा है। अन्य अकर्मण्य अत्यन्तहीन और मन्द-मति पशु यदि उसे देखकर मन में क्रोधित होते हैं, तो उसका वे क्या बिगाड़ सकते हैं।

(45)

ताराणां खलु तेजसापि जगतः किंचित्तमः क्षीयते,
चन्द्रे व्योम्नि विकासतामुपगते कुत्रास्ति खद्योतकः।
संप्राप्तेऽरुणसारथौ तु गगने चन्द्रोऽपि हा म्लायते,
ह्याक्रान्तं किल जायते लघुतरं तेजो महातेजसा॥

ताराओं के प्रकाश से भी कुछ अंधकार नष्ट होता है और चंद्रमा के आकाश में उदित होते ही खद्योतादि तुच्छ तेज की सत्ता भी समाप्त हो जाती है और सूर्य के उदय होने पर चन्द्रमा भी म्लान हो जाता है। इससे सिद्ध होता है कि प्रकृष्ट तेज लघु तेज को निगल जाता है।

(46)

दैवान्मानसमुत्तमं परिजहद् हंसस्तडागेऽप्रिये,
संयातो यदि गर्वतामुपगतस्ते चिन्तने चिन्तकः।
तर्हि ब्रूहि गतिर्भविष्यति सखे तस्याधुना कीदृशी,
सम्प्राप्तः कपटादिना कपटिको यस्सारसो मानसम्॥

तुम्हारे विचार में यदि हंस दैवयोग से अत्युत्तम मानसरोवर को छोड़कर छोटे तालाब में पहुंचने पर अभिमान को प्राप्त हो गया है तो हे मित्र! बताओ जो कपटी सारस अपने कपटादि के द्वारा मानसरोवर में पहुंच गया है उसकी इस समय कैसी दशा होगी।

(47)

हंसो याति हि पल्वलं परिजहन् रम्यं सरो मानसम्,
आवासं तमुपेत्य तुष्टमनसा गर्वोऽपि चेदुह्यते।
तर्हि ब्रूहि सखे! निवासमपरं कं दीनदीना सती,
हा धिक् मानवती निराश्रयतया संयातु तेजस्विता॥

यदि हंस सुन्दर मानसरोवर को छोड़कर कीचड़ भरे तालाब में पहुंच कर वहीं सन्तुष्ट होता हुआ अभिमान को भी धारण करने लग जाता है तो मित्र! कहो! अत्यधिक दीन होती हुई मानवती तेजस्विता निराश्रित होती हुई कहां जाए।

(48)

यस्याः क्रोडमुपेत्य विश्वजगतो जीवास्समस्ता इमे,
स्वेच्छाधावनकूर्दनादिविविधैः कृत्यैस्तथा दुष्कृतैः।
रम्यां यां परिपीडयन्ति वसुधां संक्षोभयन्तोऽनिशं,
सा तत्रापि न दुःखिता विचलिता धन्या धरे ते क्षमा॥

संपूर्ण संसार के प्राणी जिसकी गोद में पहुंचकर स्वेच्छा-पूर्वक धावन कूर्दनादि के द्वारा तथा मल विसर्जनादि अन्यान्य दुष्कर्मों के द्वारा जिस सुंदर पृथ्वी को मलिन बनाते हैं परन्तु वह पृथ्वी तब भी दुःखी एवं विचलित नहीं होती है इसलिए हे पृथ्वी! तू अपनी इस अवर्णनीय क्षमा के लिए धन्य है।

(49)

मौनं यो भजते सदा निजकथादोषप्रचारक्षणे,
ह्यन्येषां त्रुटिवर्णने च पटुतां संदर्शयेदद्भुताम्।
इत्थं संधृतनैकशीलचरिता भूमौ भ्रमन्तो नराः,
केषां स्युर्न नमस्क्रियासुविधिना सम्भाजनीयास्सदा॥

जो व्यक्ति अपने दोषों के वर्णन के समय मौन धारण करता है और दूसरों की कमियों के वर्णन में अद्भुत चतुरता दिखाता है वह व्यक्ति किस प्रकार इस विचित्र चरित्र वाले संसार में सुन्दर प्रकार से किन के अभिवादन के पात्र हो सकते हैं।

(50)

मित्रागच्छ वसुन्धरानिपतितं त्वं पश्य रे रे सुमं,
यत्पूर्वं नृपशाद्वलेषु विधिना संवर्धितं मालिना।
शीर्षे विश्वनियामकस्य विमलं राज्ञाऽर्प्यते श्रद्धया,
तच्चैवाद्य विशीर्यते प्रियमिदं दुर्गन्धपूर्णस्थले॥

हे मित्र! आओ, और इस पृथ्वी में पड़े पुष्प को देखो। जो कभी राजभवन के सुन्दर बगीचों में माली के द्वारा विधिपूर्वक संवर्धित होता हुआ विश्व निर्माणकर्ता भगवान् के मस्तक में राजा के द्वारा श्रद्धापूर्वक चढ़ाया गया था वही प्यारा पुष्प आज दुर्गन्धपूर्ण स्थान पर शीर्ण हो रहा है।

(51)

यो माली सरसं प्रियं ह्युपवनं सम्पोषयन् स्नेहतः,
नानाजातिसमन्वितानि सुरभीण्येतानि पुष्पाण्यहो!
नित्यं तानि विकासयन्प्रकुरुते रक्षामपि श्रद्धया,
सोऽयं तानि चिनोति चापि नितरामेषा विधेर्योजना॥

जो माली बगीचे में सुन्दर एवं प्यारे नाना प्रकार से सुगन्धित फूलों को पालता है रक्षा करता है विकसित करता है और वही उनको चुनता भी है यह विधाता की विचित्र योजना है।

(52)

दृष्ट्या व्याकुलतां प्रयाति मनुजो राशौ स्थिते दुःखितः,
दृष्ट्या वक्रगते तु तस्य भवने मृत्योस्तु सम्भावना।
मृत्योर्वा स्वगृहे स्वमित्रनिलये लाभे च शक्तिस्थिते,
सोऽयञ्चैव विभाति चोच्चसदने मन्दोऽपि वन्द्यो भवेत्॥

जिस शनिश्चर की दृष्टिमात्र से मनुष्य व्याकुल हो जाता है और राशि में स्थित होने पर अत्यंत दुःख को प्राप्त होता है यदि वह वक्र गति को प्राप्त होता है तो मृत्यु की भी संभावना हो जाती है। यदि वही शनिश्चर मृत्यु घर में, अपने घर में, एवं मित्र घर में, लाभ स्थान में, पराक्रम स्थान में, और उच्चराशि में स्थित होता है तो पूजनीय होता है।

(53)

अमरत्वमुपैति देवता,
यदि पीत्वा सकृदेव ते रसम्।
किमु ते स्मरणेन हे सुधे,
न हि मेऽप्येष्यति मोदतां मनः॥

हे सुधे! यदि तेरे रस का एक बार पान करने मात्र से देवता अमरत्व को प्राप्त होता है तो क्या तेरे स्मरण करने से मेरा मन प्रसन्नता को भी प्राप्त नहीं हो सकता!।

(54)

इति वेद्‌मि सुनिश्चितं सुधे,
सरलोऽयं व्यथितोऽपि मानवः।
विहितं किमु नैव निर्जरै-
रधिगन्तुं विमलञ्च ते रसम्॥

हे सुधे! सरल एवं व्याकुल मैं यह निश्चित रूप से जानता हूँ कि देवताओं ने तेरे रस को प्राप्त करने के लिए क्या-क्या नहीं किया।

(55)

अयि तैरचलश्चलीकृतो,
ननु नेत्रं विहितस्तु वासुकिः।
जलधेरपि मन्थनं कृतं,
विहितं भृत्यसमञ्च कर्म तैः॥

अरे! उन्होंने तुम्हें प्राप्त करने के लिए पहाड़ को चलायमान किया, वासुकी को नेतन बनाया और समुद्र का मन्थन किया इतना ही नहीं, भृत्य के समान कार्य भी किया।

(56)

असुरैः सह मित्रता कृता,
विषकूटादपि नो भयं गताः।
प्रभुणा ललनाकृतिः कृता,
त्वदवाप्त्यै किमु तैः कृतं न हि॥

हे सुधे! तुम्हें प्राप्त करने के लिए देवताओं ने शत्रुओं से मित्रता की और विषकूट से भी नहीं डरे तथा विष्णु को मोहिनी का रूप भी धारण करना पड़ा।

(57)

क्व च देवदलं प्रभो सुधे,
क्व च जन्तुर्जगतोऽस्मि पामरः।
महताधिगता श्रमेण तैः,
त्वमहो चेन्मम का दशा पुनः॥

हे सुधे! कहां तो वह देवताओं का दल और कहां मैं क्षुद्र जन्तु। जब अत्यधिक परिश्रम से देवताओं ने तुम्हें प्राप्त किया तो फिर मेरी क्या दशा होगी।

(58)

न हि वेद्मि च कामपि क्रियां,
त्वदवाप्त्यै सफला भवेत् हि सा।
परमात्मसमर्पणं सुधे,
कुरुते ते पुरतः तथाप्यसौ॥

हे सुधे! मैं कोई भी ऐसी विधि नहीं जानता जिससे मैं तुम्हें प्राप्त करने में सफल हो सकूं। किन्तु सभी विधियों से अनभिज्ञ मैं तुम्हें प्राप्त करने के लिए केवल मात्र आत्मसमर्पण कर सकता हूं।

(59)

त्रिदशैरमरत्वमद्भुतं,
निजदेहाय तु याचितं त्वया।
परमत्र सुयाच्यते मया,
निजरागामरतैव हे सुधे॥

हे सुधे! देवताओं ने तुमसे अपने शरीर की रक्षा के लिए अद्भुत अमरत्व की याचना की। परन्तु मैं तुमसे केवल अपने प्रेम की अमरता चाहता हूं।

(60)

अनुरागरसामृतं प्रिये,
यदि मे स्वस्य न दीयते त्वया।
इति निश्चितमेव वर्तते,
मरणं मे शरणं भविष्यति॥

हे प्रिये! यदि तुमने अपना अनुराग रूपी रसामृत मुझे नहीं दिया तो यह निश्चित ही है कि मृत्यु ही मेरी शरणदात्री होगी।

(61)

तव रागरसैकफुल्लितं,
सुखदं स्यान्मम जीवनं प्रिये।
मनसीति विचिन्त्य भूरिशः,
भुवनेऽयं किल जीवति ध्रुवम्॥

हे प्रिये! तेरे अनुराग रूपी रस से संवलित होता हुआ मेरा जीवन सुखद हो। बार-बार ऐसा सोचकर मैं संसार में अब तक जी रहा हूं।

(62)

अयि ते मधुपानलोलुपाः,
चटुलास्त्वां परितो मधोऽनिशम्।
कुटिलं भ्रमणं विधाय ते,
परिपास्यन्ति रसं तवाद्भुतम्॥

हे मधु! तेरे रस के पान के लोभी चटोरे भौंरे तेरे चारों ओर कुटिल भ्रमण करते हुए तेरे अद्भुत रस का पान करेंगे।

(63)

परिपीय निपीय भूरिशो,
मधुरं त्वां रसपूरितं मधु।
अयि ते न निवर्तितुं पुनः,
परियान्तीति मतं हि धीमताम्॥

बार-बार रस से परिपूर्ण तुझ मधु को पीकर जाने के बाद वे भौंरे कभी भी लौटकर तेरे पास नहीं आयेंगे, यह विद्वानों का निश्चित मत है।

(64)

विकसितं ललितं रसपूरितं,
मधुरगन्धमयञ्च सुफुल्लितम्।
त्वमयि वीक्ष्य मधु क्षणहर्षदं,
मनसि चेन्मुदितोऽसि तवाज्ञता॥

अरे मनुष्य! सुन्दर विकसित प्रफुल्लित रसपूर्ण, सुगन्धित एवं क्षण भर के लिए प्रसन्नता को देने वाले वसन्त को देखकर यदि तुम प्रसन्न होते हो तो यह तुम्हारी मूर्खता है।

(65)

अग्रे निधाय महतीञ्च महोष्णतां तां,
पृष्ठे निधाय सकलामपि नग्नतां ताम्।
चित्ते तथापि वहसि त्वमयेऽतिगर्वं,
किम्भो मधो स्वमधुरं परिवीक्ष्य देहम्॥

हे वसन्त! तुम्हारे आगे अत्यन्त उष्णता और पृष्ठ भाग में अत्यधिक नग्नता है। फिर भी क्या तुम अपने सुन्दर शरीर को देखकर हृदय में अत्यंत गर्व को धारण कर रहे हो!

(66)

पूर्वापरं बहुतरं किल कष्टयुक्तं,
पश्यन् सखे परिसरं भुवि हे मधो ते।
नाऽहं त्वदीयमधुरे ललिते स्वरूपे,
मुह्यामि रूपविधिना हि कदापि चात्र॥

हे वसन्त! संसार में तुम्हारे पूर्वापर को अत्यन्त कष्टयुक्त देखकर मैं तेरे सुन्दर स्वरूप पर किसी प्रकार से कभी भी सम्मोहित नहीं होता।

(67)

चण्डप्रचण्डेन च निर्दयेन,
झञ्झाप्रवातेन समागतेन।
गाढान्धकारस्य विनाशदक्षो,
निर्वापितस्तेन गृहप्रदीपः॥

अत्यधिक प्रचण्ड एवं निर्दय झञ्झावात ने आकर घनघोर अन्धकार को नाश करने में प्रवीण घर के दीपक को बुझा दिया है।

(68)

जाज्वल्यमानेऽपि महाग्निमध्ये,
निक्षिप्यमाणः किल लोह एषः।
तप्तो विलम्बेन भवत्यजस्त्रं,
किन्नो तथा शैत्यमपि प्रयाति॥

प्रज्वलित महाग्नि के बीच में डाले जाने पर भी यह लोहा अत्यन्त विलम्ब से गर्म होता है और उसी प्रकार गर्म होने पर विलम्ब से ठण्डा भी होता है।

(69)

यदृच्छया कान्यपि यच्छ देव?
फलानि मे दुष्कृतकर्मणां त्वम्।
निवेदनं मेऽस्ति कदापि माभूत्,
खलेन साकन्तु मदीययोगः॥

हे भगवन्! तुम अपनी इच्छानुसार मेरे दुष्कर्मों का कुछ भी दंड दे दो, परन्तु मेरा आपसे एक ही निवेदन है कि दुर्जनों के साथ मेरा संपर्क न हो, मेरी यह प्रार्थना अवश्य स्वीकार करना।

(70)

हे हे कठोरहृदये! तव जिह्मताया,
नैवोपमा भुवि मया परिवीक्ष्यतेऽत्र।
ग्रावाप्यहोऽपि च खलस्त्रपतेऽपि वज्रं,
संवीक्ष्य ते कुटिलतां महतीं निकृष्टाम्॥

हे कठोर हृदये! तुम्हारी कुटिलता की मुझे इस संसार में कहीं भी समता नहीं दिखाई दे रही है। तेरी निकृष्ट कुटिलता को देखकर पत्थर भी लज्जित हो रहा है और दुर्जन एवं बज्र भी लज्जित हो रहे हैं।

(71)

रम्यैः फलैः रसभरै र्निजमञ्जरीभिः,
पत्रैः प्रियै बहुविधैर्मृदुपल्लवैश्च।
छायाभिरिन्धनदलैः प्रददाति सौख्यं,
तस्मै नमोऽस्तु तरवे मनसा सदा मे॥

जो वृक्ष रस से परिपूर्ण सुन्दर फलों से, प्रिय मञ्जरियों से, पत्तों से, पल्लवों से तथा छाया और लकड़ियों से प्राणिमात्र को सुख देता है, उस वृक्ष को हमेशा मेरा प्रणाम है।

(72)

नव्यानि हृद्यानि सुवासितानि,
मृदूनि रम्याणि च कुड्मलानि।
मत्तोद्धतेन करिणात्र विमर्दितानि,
किं शोभनानि चरितानि कृतानि तेन॥

नये, प्रिय, सुगन्धित कोमल एवं सुन्दर पुष्प की कोपलों को विमर्दित कर क्या उस मदोद्धत हाथी ने सुन्दर कार्य किया है!।

(73)

यस्यापि कस्यापि भवेत्प्रकाशः,
चन्द्रस्य सूर्यस्य च दीपकस्य।
लोकास्तमेव प्रणमन्ति नित्यं,
विज्ञाः नयज्ञाः समयस्थितिज्ञाः॥

प्रकाश चाहे चन्द्रमा का हो, सूर्य का हो, दीपक का हो, या अन्य किसी का। समझदार नीतिवान् एवं समय स्थिति को जानने वाले व्यक्ति उसी को प्रणाम करते हैं।

(74)

ये कुक्कुराः प्रतिदिनं परितो भवन्तं,
लांगूलचालनरता नितरामटन्ति।
हा तेऽधुनापि भवता सुकृपावरोधे,
दुष्कर्तने तव रतास्तु भवन्ति नूनम्॥

हे मित्र! पूंछ हिलाने में चतुर जो कुत्ते निरन्तर आपके चारों तरफ चक्कर लगाते हैं, वे ही तुम्हारे द्वारा सत्कृपा के अवरोध होने पर तुम्हें काटने के लिए निश्चयेन सद्यः तैयार होते हैं।

(75)

पुच्छप्रधूननकलापटुतागुणेन,
हे कुक्कुर! त्वमसि धन्यतमो जगत्याम्।
यस्य प्रभाववशतो मनुजाधिपानां,
क्रोडेऽपि खेलसि सुपुत्रसमस्सदैव॥

हे कुक्कुर। पूंछ हिलाने की कला की चतुरता के कारण तुम संसार में धन्य हो। जिसके प्रभाव से तुम राजाओं की गोद में भी सुपुत्र के समान खेलते हो।

(76)

निर्मापयत्यतिशुभान्सुघटान्कुलालो,
यो निष्ठया प्रतिदिनं नवमृत्तिकाभिः।
विज्ञानवैभवमये भुवने स एव,
प्राप्नोति सम्प्रति सखे महतीमुपेक्षाम्॥

जो कुम्भकार निष्ठापूर्वक प्रतिदिन नवीन मिट्टी के द्वारा सुन्दर घड़ों को बनाता था। वह आज विज्ञान के वैभवमय युग में घोर उपेक्षा को प्राप्त कर रहा है।

(77)

नैतच्चित्रं यदखिलजनो कुक्कुरं हेयदृष्ट्या,
पश्यन्नेतं वदति नितरां तुच्छतायाः प्रतीकम्।
लब्ध्वा कस्मादयमपि लघुग्रासखण्डं यतो हि,
विस्मृत्य स्वं भवति भुवने तस्य दासस्तदैव॥

यह आश्चर्य नहीं है कि संपूर्ण संसार कुत्ते को हेय दृष्टि से देखता हुआ तुच्छता के प्रतीक रूप में इसे जानता है, क्योंकि यह किसी से एक छोटा-सा रोटी का टुकड़ा प्राप्त कर अपनी महत्ता को भूलकर शीघ्र ही उसका दास हो जाता है।

(78)

नैतत्सत्यं सकलमनुजाः वीक्ष्य ते पङ्क! पङ्कं,
निन्दन्ति त्वां विविधवचनैः हीनभावैरजस्त्रम्।
जाते लोके त्वयि च जनके रम्यपङ्केरुहाणां,
त्वद्भक्तानामपि गुणविदां न्यूनता नो यतो हि॥

हे कीचड़! यह सत्य नहीं है कि संसार का हर प्राणी तुमको देखकर नाना प्रकार के वचनों से और हीन भावों से सर्वदा तुम्हारी निन्दा करता है। क्योंकि तुम्हारे लोकप्रिय सुन्दर कमल के जन्म दाता होने से संसार में गुणग्राही तेरे भक्तों की भी कमी नहीं है।

(79)

हे हे बन्धो! मम दृढतरः प्रत्ययो विद्यतेऽयं,
सर्वस्निग्धः सकलभुवने नास्ति कुत्रापि कश्चित्।
पश्येमां त्वं निखिलसुखदां चन्द्रिकां शीतरश्मेः,
तत्राप्यस्ति व्यथितहृदयः चक्रवाको वियोगी॥

हे मित्र! यह मेरा अत्यन्त दृढ़ विश्वास है कि संसार में कहीं भी कोई व्यक्ति सभी का प्यारा नहीं हो सकता। सम्पूर्ण सुखराशि प्रदान करने वाली चन्द्र की चांदनी को देखो, वहां भी चक्रवाक अत्यन्त व्याकुल हैं।

(80)

गेह! स्नेहमपूर्वन्ते,
वीक्ष्य विश्रान्तिकाम्यया।
कष्टसन्ततिसन्तप्ताः,
त्वां यान्ति शरणं जनाः॥

हे घर! तेरे अवर्णनीय आत्मीय भाव को देखकर नाना प्रकार के कष्टों से पीड़ित व्यक्ति विश्राम की इच्छा से तुम्हारी शरण आते हैं।

(81)

का शक्तिर्वानरस्यास्ति,
किमस्ति मम गौरवम्।
ज्ञात्वापि कूर्दते ह्येषः,
किमश्चार्यमतः परम्॥

मुझ बन्दर की क्या शक्ति है और मेरा क्या गौरव है यह सब कुछ जानते हुए भी यह बन्दर कूर्दन कर रहा है इससे बढ़कर आश्चर्य क्या होगा।

(82)

हस्तिन् विशालकायस्त्वं,
गच्छ मन्दं जवेन वा।
सत्सु तीव्रेषु यानेषु,
गतिस्तेऽगतिसन्निभा॥

हे हाथी! तुम विशाल शरीर धारी हो तुम शीघ्र जाओ, या मन्दगति से जाओ, तेजगति वाले वाहनों के होते हुए तुम्हारी चाल बेचाल के समान है।

(83)

अनुमतिं विना ह्यात्मनो यदि,
प्रकुरुते जनः कामपि क्रियाम्।
सफलता कदा कुत्र चाप्यहो,
मिलति नैव तं पूरुषं भुवि॥

जो व्यक्ति आत्मा की अनुमति के बिना किसी भी कार्य को करता है उसे कहीं भी किसी भी स्थिति में सफलता नहीं मिलती है।

(84)

रे रे मराल! कथमत्र समागतोऽसि,
त्यक्त्वा सरस्सरसमद्भुतमानसं तत्।
हा पल्वले वकदले तव योग्यताया,
मूल्यांकनं न हि करिष्यति कोऽपि मित्र॥

हे हंस! सुन्दर जल से परिपूर्ण उस मानसरोवर को छोड़कर तुम यहां क्यों आए हो? हे मित्र! दुःख है कि बगुलों से घिरे हुए इस तालाब में तेरी योग्यता का मूल्यांकन कोई भी नहीं करेगा।

(85)

रे कोकिल! त्वमधुना भज मौनभावं,
प्रोच्चैः विरौत्यतितरां किल काकवृन्दम्।
रम्यस्वकीयपरिवारवृतो वसन्तो,
यद्यागमिष्यति भविष्यति काकली ते॥

हे कोयल! इस समय तू यहां मौन धारण कर। क्योंकि कोवे बहुत ऊंची आवाज में कांए-कांए कर रहे हैं। जब अपने सम्पूर्ण परिवार के सहित सुन्दर वसंत आएगा तब तेरी मधुर काकली का गान होगा।

(86)

आयाति भाग्यविधिना यदि मर्कटस्य,
हस्ते सुभूषणमतीव मनोऽभिरामम्।
सद्यस्तु मर्दयति जिघ्रति चर्वतीति,
धावत्यसौ बहुविधं भुवि यत्र तत्र॥

दैवयोग से यदि बन्दर के हाथ में सुन्दर एवं हृदयाकर्षक आभूषण आता जाता है तो वह उसे मरोड़ता है, सूंघता है, चबाता है, इतना ही नहीं वह उसे लेकर पृथ्वी में इधर-उधर वेग से दौड़ता है।

(87)

तोयाधिपस्त्वमसि चेतसि चिन्तयित्वा,
कश्चित्तृषार्तमनुजस्सुजलार्थमत्र ।
सम्प्रत्ययादुपगतस्तव सन्निधौ हे,
क्षारं जलं समनुभूय स दुःखितोऽभूत्॥

हे समुद्र! तुम सम्पूर्ण जल से परिपूर्ण हो ऐसा हृदय में सोचकर कोई प्यासा मनुष्य जल की अभिलाषा से बड़े विश्वास के साथ तुम्हारे पास आया। लेकिन समीप में आकर तुम्हारा खारा जल पीकर उसे महान् दुःख हुआ।

(88)

तीव्रैस्सहस्त्रकिरणात्मकशक्तिसंघैः,
मा गर्वमुद्वह दिनेश! कदापि लोके।
एकस्तु राहुरधमोऽपि च विद्यतेऽत्र,
गर्वप्रभञ्जनपटुस्तव सर्वदैव॥

अत्यधिक तीक्ष्ण शक्तिशाली हजारों किरणों से युक्त होने के कारण हे सूर्य! तुम कभी भी अभिमान मत करो। क्योंकि एक ही निकृष्ट राहु तुम्हारे अभिमान को मर्दन करने में सर्वदा समर्थ है।

(89)

उत्पाद्य नीरसमिमं विटपं करीरं,
शुष्कं तथा विपुलकण्टकसंयुतञ्च।
संसारनाटककलानिरतेन तेन,
ह्यल्पज्ञता प्रकटिता विधिनाऽपि लोके॥

शुष्क, नीरस एवं अत्यधिक कांटों से युक्त करीर के वृक्ष को उत्पन्न करके संसार रूपी नाटक के निर्माणकर्ता उस विधाता ने भी संसार में अपनी नासमझी प्रकट की है।

(90)

कोऽयं ददातीत्यविचार्य चित्ते,
भोज्यं समश्नाति निमीलिताक्षः।
तं तादृशं नीचतमं विडालं,
हा लज्जते वीक्ष्य कृतघ्नतापि॥

कौन दे रहा है - इस विषय पर मन में विचार न कर आँखें मूंद कर खाने वाले नीचतम विडाल को देखकर कृतघ्नता भी लज्जित हो रही है।

(91)

निर्गत्य पर्वततलाद्यदि खण्डमेकं,
भूमौ समाश्रयति सर्वविधप्रकारैः।
नैवाधिरोहति पुनः पदमद्भुतं तत्,
यातं कथञ्चिदपि नो लभते प्रतिष्ठाम्॥

पहाड़ से यदि कोई एक शिलाखण्ड निकलकर सभी प्रकार से भूमि में आश्रय ले लेता है तो फिर वह उस स्थान को प्राप्त नहीं कर सकता। यदि किसी तरह उस स्थान तक पहुंच भी जाए तो पूर्ववत् प्रतिष्ठा को प्राप्त नहीं करता।

(92)

रणं विधातुं स्वतरङ्गहस्तैः,
प्रचण्डवेगेन समागतो हि।
महाद्रिणा सार्धमसौ समुद्रः,
शिलातलेनैव विचूर्णितोऽभूत्॥

अपने तरंगरूपी हाथों के द्वारा महागिरि के साथ युद्ध करने के लिए प्रचण्ड वेग से आता हुआ यह समुद्र शिलातल से ही चूर्णित हो गया है।

(93)

दृष्टा मयैका किल कुक्कुराणा –
मेतादृशी भूमितले कुजातिः।
यच्छन्ति येऽन्नं सुजनाश्चातस्यै,
तानेव सा दशति नात्र विचित्रमेतत्॥

इस संसार में मैंने कुत्तों की एक ऐसी कुजाति भी देखी कि जो व्यक्ति उसे भोजन देते हैं वह उन्हें ही काटती फिरती है। क्या यह विचित्र नहीं है।

(94)

मरुस्थल्यां कस्याञ्चिदतिविषमायां स्थितमहो,
तृषार्तं सन्तप्तं पुलिननिकटे पान्थ! सरितः।
इमं पङ्गुं नीत्वा त्वरितमयि हित्वापि भवता,
प्रतीकारः कस्य ह्यशुभचरितस्य प्रकटितः॥

हे मित्र! किसी ऊबड़-खाबड़ मरुभूमि में स्थित तृष्णा से व्याकुल और सन्तप्त इस पङ्गु को नदी के तट के समीप ले जाकर उसी स्थान पर तुरन्त छोड़कर आपने उससे किस अशुभ चरित का बदला लिया।

(95)

हे पत्र ते समधिगत्य समाश्रयं वै,
दीपः प्रवातनिवहेन विकम्पितोऽसौ।
हा हा गतो विलयतां लयतां प्रयातः,
स्वात्मानुरूपविमलां द्युतिमादधानः॥

हे पत्र! तुम्हारा आश्रय पाकर यह दीपक निश्चित रूप से वायु के झौंके से विलय होता हुआ पुनः लौ को प्राप्त होकर अपने ही अनुकूल स्वच्छ कान्ति को धारण कर रहा है।

(96)

रे रे पङ्कज मानसं प्रियतरं रम्यं स्वजन्मस्थलं,
तत्रत्यान् सकलान् प्रियान् परिजनान् त्यक्त्वा स्वकीयान् त्वया।
तान् शोकाकुलितान् विधाय सहसा गत्वा सुराणां गृहे,
भद्रं किं भवता कृतं प्रियसखे त्वं ब्रूहि रे सत्वरम्॥

हे कमल! अपने प्रिय जन्म स्थान रमणीय मानसरोवर एवं वहां के अपने सभी प्रिय सम्बन्धियों को त्यागकर तथा उन्हें शोकाकुल बनाकर स्वयं देवगृह जाकर हे प्रियमित्र! शीघ्रता से कहो क्या तुमने यह अच्छा कार्य किया!।

(97)

दत्त्वानिलो बहुविधं त्वनलाय योगं,
दुष्टं वनं दहति कष्टतरं हि सद्यः।
भ्रष्टाश्चरित्रहनने पटवस्तु ये ये,
झञ्झानिलो भवतु तद्दहनेऽत्र वर्षे॥

आग को अनेक प्रकार से सहयोग देकर वायु शीघ्र ही कष्ट साध्य दुष्ट बन को जला देता है। हे अनिल! जो जो भ्रष्ट और चरित्र हनन में चतुर हैं उनके दहन के लिए तुम इस वर्ष झञ्झावात बनो।

(98)

दिव्यां गिरां प्रति निरर्थकदुष्टभावाः,
क्षुद्राः सदैव बहिरेव मनोहरा ये।
तेषां कुवृत्तिहननाय भवेस्त्वमत्र,
झञ्झानिलोऽनिल सदा प्रियनव्यवर्षे॥

व्यर्थ ही दिव्य वाणी (संस्कृत) के प्रति दुष्टभाव रखने वाले जो क्षुद्र मनुष्य बाहर से मनोहर दिखायी देते हैं। हे अनिल! उनकी कुवृत्ति के नाश के लिए तुम यहाँ इस प्रिय नववर्ष में झञ्झावात बनो।

(99)

कनक ते कमनीयकलेवरं,
निकषकर्षितमद्भुतमुत्तमम्।
कथय रे कथमत्र गतं सखे,
मलिनपात्रमिदं प्रति सत्वरम्॥

हे सुवर्ण! कसौटी पर कसे जाने पर अद्भुत रूप से उत्तम और सुन्दर तुम्हारा शरीर हे मित्र! कहो शीघ्र ही मलिन पात्र में कैसे पहुँच गया।

(100)

कुपात्रराहोः किल कण्ठभूषणे,
सुधापि संयाति विकारतां ध्रुवम्।
अहो प्रियेऽद्य प्रतिकूलतां गते,
कथन्न दोषं प्रतियास्यतीदृशम्॥

कुपात्र राहु के कण्ठ में जाने पर अमृत भी निश्चित रूप से विकृति को प्राप्त होता है। हे प्रिय! आज प्रतिकूल परिस्थिति आ जाने पर यह अमृत कैसे दोषी न होगा? अर्थात् अवश्य होगा।

(101)

जगति या ललना मलिनः पतिः,
यदि पतिर्ललितो मलिना च सा।
भवति चेदनयोः रमणीयता,
न हि सुतं लभते च तयोः स्थितिः॥

संसार में यदि कोई स्त्री सुन्दर है तो पति मलिन है यदि पति सुन्दर है तो पत्नी मलिन है यदि दोनों सुन्दर हों तो उन्हें पुत्र प्राप्त नहीं होता यही इनकी नियति है।

(102)

यदि कथञ्चिदिमानि समान्यहो,
युगपदेव भवन्ति च यद्गृहे।
वसति तत्र सदैव दरिद्रता,
प्रतिपलं निखिले किल तद्गृहे॥

यदि किसी प्रकार ये सभी गुण एक साथ किसी घर में हों तो उस घर में सदैव दरिद्रता (गरीबी) रहती है।

(103)

रम्यं समस्तजनताप्रियतां प्रयातं,
पद्मं पवित्रमिदमत्र प्रफुल्लफुल्लम्।
हे हस्त! सम्प्रति गते त्वयि लुञ्चलुञ्चे,
हा त्रोटने न कुशलः प्रतिभासि मे त्वम्॥

सम्पूर्ण जनता के प्रियत्व को प्राप्त, सुन्दर एवं पूर्ण रूप से विकसित कमल को तोड़ने में सभी प्रकार से लुञ्चित हे हाथ! तुम मुझे किस प्रकार से भी सक्षम नहीं लगते हो।

(104)

हस्ती भवेत् किल भवेच्च द्विचक्रिकापि,
हा मानसे न हि तयोः गतिरस्ति तत्र।
तर्हि त्वमेव वद रे परिचिन्त्य चित्ते,
सम्मर्दने तु कमलस्य च तौ क्षमौ किम्!॥

हाथी हो या साइकिल हो, इन दोनों का ऊँचे शिखर में स्थित मानसरोवर में पहुंचना सर्वथा असम्भव है, इसलिए हे मित्र! हृदय में विचार कर तुम ही बताओ कि क्या ये दोनों सुन्दर कमल को कुचलने में सक्षम हैं।

(105)

हे हे तुले! हृदि विचारय भूरिशस्त्वं,
रम्याः सुपुष्पनिचयाश्च विभान्ति भूमौ।
किं त्वं क्षमा कमलपुष्पदलेन साकं,
सन्तोलने पटुतरा भुवनेऽत्र तेषाम्॥

हे तराजू! तू बारम्बार हृदय में विचार कर कि संसार में नाना प्रकार के सुन्दर फूलों के समूह शोभायमान हैं। क्या तुम इन फूलों की तुलना कमल के पुष्पों के साथ कुशलतापूर्वक करने में सक्षम हो।

(106)

चक्रं भवेत् किल भवेच्च हलायुधं वा,
कोदण्डदण्डमपि शस्त्रविशेषमन्यत्।
हे हे सखे! कथय सम्प्रति मेऽग्रतस्त्वं,
लक्ष्म्यासनं चलयितुं किमु तद्धि शक्तम्॥

चाहे चक्र हो, चाहे हल हो, चाहे धनुष हो अथवा कोई अन्य शस्त्र विशेष हो, हे मित्र! वर्तमान में मेरे समक्ष स्पष्ट बताओ कि क्या ये सभी लक्ष्मी के आसन को विचलित करने में समर्थ हैं।

(107)

हे पङ्कज! त्वयि च दुर्दलिते प्रजाते,
त्वं वंशजं हि भुवने दलितप्रजानाम्।
तद्बोधय प्रियजनान् सकलानिदानीं,
भव्यां स्वकीयचरितस्य पवित्रगाथाम्॥

हे कमल! दल-दल में उत्पन्न होने के कारण तुम समस्त दलित समाज के वंशज हो। अतः अपने इन समस्त दलित बन्धुओं को स्वकीय उत्तम चरित्र की पवित्र गाथा से उद्बोधित करो।

(108)

हे हे भुवोऽस्य दलित! ध्रुवमत्र मित्र!
वंशप्रतीकविभवं किल युष्मदीयम्।
मा मामवैहि परिवर्धय भाववृद्धिं,
सम्प्राप्नुत ह्यनुरतिन्नु ममानुरूपम्॥

संसार के समस्त दलित! मुझे अपने वंश का भव्य प्रतीक मुझे समझो और समाज में मेरे ही अनुरूप सद्भाव को बढ़ाओ और प्रेम प्राप्त करो।

(109)

दलिताः कुरुताधुना समे,
ह्यनुरागं सततञ्च मां प्रति।
निजरागरसैर्निषिच्य मां,
गुरुतां प्राप्नुत भूतले प्रियाम्॥

हे समस्त दलितो! तुम सभी मिलकर मेरे प्रति अपने अनन्य अनुराग को प्रकट करो। अपने अनुराग के रस से मुझे सींचकर संसार में गौरव एवं प्रेम को प्राप्त करो।

(110)

राज्ञः अङ्के सानन्दं ससुखं
सौविध्येन उपविश्य कुक्कुरः
वीथिषु चत्वरेषु परिभ्रमन्तं
क्षुधार्त परिजनं विलोक्य
घुर्घुरायते किमयं स्वभावः?
नहि नहि अत्र भयप्रभावः॥

राजा की गोद में सानन्द, सुखपूर्वक सुविधा से बैठकर कुत्ता गलियों-चौराहों में घूमते हुए भूख से व्याकुल अपने परिजन को देखकर भौंकता है, क्या यह (उसका) स्वभाव है? नहीं, नहीं यहाँ भय का प्रभाव है।

(111)

कुक्कुरो व्यथाग्रस्तो रोदिति
अहं निष्ठया श्रद्धया स्वामिभक्तिं प्रदर्शयामि
तथापि मां लोकः
कथं हेयदृष्ट्या अवलोकयति।
किमियं नियतिः ?
एष कर्मविपाकः
नहि नहि लोकस्वभावः ॥

कुत्ता दुखी होकर रोता है कि मैं निष्ठा और श्रद्धा से स्वामिभक्ति दिखाता हूं, फिर भी संसार मुझे हेय दृष्टि से देखता है। क्या यह नियति है? नहीं, नहीं! यह कर्मफल है! नहीं, नहीं! यह संसार का स्वभाव है।

(112)

श्वन्! त्वं धन्योऽसि,
प्रातरेव संभ्रान्ता नागरिकाः
तव दर्शनं कृत्वा
त्वया सह भ्रमणं कृत्वा
मलविसर्जने तव सहयोगं कृत्वा
स्वात्मानं धन्यं मन्यन्ते।
किमिदं विवेकान्धत्वं ?
नहि नहि एष युगधर्मः ॥

कुत्ते! तुम धन्य हो। प्रातःकाल ही सम्भ्रान्त नागरिक तुम्हारे दर्शन करके तुम्हारे साथ भ्रमण करके शौचकार्य में तुम्हारा सहयोग करके स्वयं को धन्य मानते हैं। क्या यह विवेकहीनता है? नहीं, नहीं। यह युगधर्म है।

(113)

हे कुक्कुर! राजप्रासादे वसन्
काञ्चनभाजने भोजनं कृत्वा
विस्मयं मा कुरु
अत्र एतादृशी एव व्यवस्था।
किमिदं भाग्यवैभवम्?
नहि नहि अत्र पामरनायकमन्दिरम्॥

हे कुक्कुर! राजमहल में रहते हुए, स्वर्ण पात्र में भोजन करते हुए आश्चर्य मत करो। यहाँ इसी प्रकार की व्यवस्था है, क्या यह भाग्य से मिलने वाला ऐश्वर्य है? नहीं नहीं। यहाँ मूर्ख राजा का घर है।

(114)

पद्मं चिन्तयति स्वकीयहृदये गम्भीरभावेन यद्,
लब्ध्वा जन्म मया सरोवरवरे सर्वोत्तमे मानसे।
वासो विश्वनियामकस्य शिरसि प्राप्तेऽपि मे मानसे,
राज्ञो भूषणतां व्रजामि भुवने लोकैषणेयं कथम्॥

कमल अपने हृदय में गम्भीर भाव से सोचता है कि सर्वोत्तम मानसरोवर में जन्म पाकर और विश्वनियामक (शिव) के मस्तक में रहते हुए भी मन में 'राजा की शोभा बनूं' (इच्छा है।) संसार में यह कैसी लोकैषणा है।

(115)

गर्वोन्मत्तो नयविरहितो धूर्तमार्गानुगामी,
योऽन्यस्कन्धे कुटिलनृपतिः धारयन् भिन्दिपालम्।
शत्रून् जित्वा सपदि कुरुते तद्बलानामुपेक्षां,
तद्वन्नीचो नहि भुवितले दृक्पथं मे प्रयाति॥

अहंकार से उन्मत्त, नीति-रीति से हीन, धूर्तता का अनुगामी जो कुटिल राजा दूसरे के कन्धे में बन्दूक रखकर शत्रुओं को जीतकर उनके बल की उपेक्षा करता है, उसके समान नीच मेरी दृष्टि में इस संसार में कोई दूसरा नहीं है।

(116)

प्रचण्डग्रीष्मस्य प्रतपपरितप्तेन मनसा,
जलं पीत्वा यस्य प्रमुदितमना गच्छति शमम्।
अये! गम्भीराध्वस्थितसरसकूप! प्रियकरः,
कथङ्कारं कुर्मस्तव गुणकथावर्णनमिदम्॥

प्रचण्ड ग्रीष्म ऋतु की भीषण गर्मी से परितप्त मन को जिसका जल पीकर प्रसन्नता और शान्ति मिलती है। पृथ्वी के अन्तःस्थल में स्थित हे रसयुक्त प्रियकर कूप! तुम्हारे सद्गुणों की कथा का वर्णन हम किस प्रकार करें।

(117)

अन्यायेन वधं दृष्ट्वा,
सर्पस्यापि च यो नरः।
दूयते हृदये भूरि,
धुरि कीर्त्यः सतामसौ॥

अन्याय पूर्वक साँप का भी वध देखकर जो मनुष्य हृदय से दुखी होता है, वह सज्जन सर्वप्रथम प्रशंसनीय है।

(118)

सन्ति नानाविधा लक्ष्म्यः,
मनोहर्षप्रदायिकाः ।
राजलक्ष्मीं विना चित्तं,
रमते नैव मे परम् ॥

मन को हर्ष देने वाली नाना प्रकार की लक्ष्मियाँ हैं। किन्तु राजलक्ष्मी के बिना मेरा मन कहीं नहीं रमता है।

(119)

देशभक्तरक्तरञ्जिता,
भक्तिशक्तियुक्तिसंयुता।
भारतस्य सा स्वतन्त्रता,
कीदृशी त्वया समीक्षिता॥

देश भक्तों के रक्त से रञ्चित, भक्ति, शक्ति और युक्ति से युक्त भारत की वह स्वतन्त्रता तुम्हारे द्वारा किस प्रकार से (समीक्षित) दृष्टिगत हुई।

(120)

राजकर्मचारिणोऽधुना,
कर्मधर्महीनतां गताः।
स्वार्थलोभमोहमोहिता,
ग्राहकस्य दर्शने रताः॥

सम्प्रति सरकारी कर्मचारी कर्म-धर्म से हीन हो गये हैं। स्वार्थ, लोभ और मोह के लालच से ग्रस्त वे मात्र ग्राहक के ही दर्शन में तल्लीन रहते हैं।

(121)

कुत्रचिद् धनस्य लुण्ठनं,
कुत्रचित् स्त्रियो विलुण्ठनम्।
कुत्रचिज्जनस्य लुण्ठनं,
हन्त! भारते विलोक्यते॥

कहीं धन की लूट, कहीं स्त्रियों का हरण, कहीं लोगों का अपहरण, दुःख है कि आज भारत में यह सब दिखाई देता है।

(122)

भ्रातृभावभावना गता,
स्वार्थसिद्धिसाधनागता ।
मञ्जुले पवित्रभारते,
कीदृशी स्वतन्त्रताऽऽगता॥

मनुष्य मात्र में भाई चारे की भावना समाप्त हो गई है। प्रत्येक व्यक्ति में स्वार्थ सिद्धि की दुष्प्रवृत्ति आ गई है। सुन्दर एवं पवित्र भारत में कैसी स्वतन्त्रता आई है।

(123)

शासका धनार्जने रताः,
सेवकाः स्वसाधने पराः।
मानवास्तु वञ्चने वराः,
हन्त रौति भारती धरा॥

देश में शासक वर्ग धन संग्रह में प्रवृत्त हैं, सेवक वर्ग अपने छोटे-छोटे कार्य को सिद्ध करने में लगे हैं अपने को मानव समझने वाले सफेदपोश लोग दूसरों को ठगने में चतुरता दिखा रहे हैं। दुःख है, ऐसी स्थिति देखकर भारत माता रो रही है।

(124)

अत्र मन्दिरञ्च मस्जिदं,
हिन्दवोऽथवा च मुस्लिमाः।
एकभावभूमिभूषिताः,
हा मतैक्यभिन्नता कथम्॥

यहाँ मन्दिर और मस्जिद, हिन्दू एवं मुस्लिमों की एक भावभूमि है। किन्तु हाय! मतैक्य होते हुए भी पुनः भिन्नता क्यों है?

(125)

हर्षदाकुलं क्षुधाकुलं,
हा हवालयापि संकुलम्।
वीक्ष्य मे मनः सखेऽधुना,
जायते महाभयाकुलम्॥

हर्षद से पीड़ित, भूख से आकुल, हवाला से भी संत्रस्त (भारत को) देखकर हे मित्र! मेरा मन सर्वदा भय से व्याकुल होता है।

(126)

सरलान् द्रूमान् धरे! ते छिन्दन्ति निर्दयाः हा,
विमलञ्च कुड्मलं ते सम्मर्दयन्त्यजस्त्रम्।
कथमत्र नो प्रयाता सुधरे विदीर्णतां त्वम्,
कथय त्वमेव शीघ्रं कतमं प्रतीक्षसे भो?॥

हे पृथिवी! निर्दय लोग तेरे सरल वृक्षों को काट रहे हैं और कोमल स्वच्छ कुड्मलों को निरन्तर मसल रहे हैं। हे धरे! ऐसी स्थिति को देखकर तुम विदीर्ण क्यों नहीं हो रही। अरे तुम ही शीघ्र कहो, किसकी प्रतीक्षा कर रही हो।

(127)

रजनीचराश्चरन्ति शुभकर्मबद्धवैराः,
दिवसप्रकर्षभीतः व्यथितोऽत्र कौशिकोऽपि।
निबिडान्धकारकर्त्री जाता निशा त्विदानीं,
कथय प्रदीप शीघ्रं कतमं प्रतीक्षसे भो॥

शुभकर्मों के वैरी रात्रिचर विचरण कर रहे हैं। दिन के प्रकर्ष से भयभीत उल्लू भी व्यथित हो रहा है, इस समय गहन अन्धकार वाली रात्रि है। हे प्रदीप! तुम शीघ्र कहो, किसकी प्रतीक्षा कर रहे हो।

(128)

ज्वलनायते धरेयं मधुरा सुभारतीया,
मलिनायते धरेयं सुजनैकसंश्रितानाम्।
भजसे दशां विलोक्य गङ्गे कथन्नु मौनं,
कथय त्वमेव शीघ्रं कतमं प्रतीक्षसे भो?॥

भारत की यह मधुमय धरा जल रही है। सज्जनों की यह आश्रयभूमि मलिन हो रही है। इस दृश्य को देखकर हे गङ्गे! तुम मौनधारण क्यों कर रही हो! तुम ही शीघ्र कहो, किसकी प्रतीक्षा कर रही हो।

(129)

दिननाथ! साम्प्रतं हा गहनान्धकारयुक्ता,
ह्यतिदीर्घतां प्रयाता भयकारिणी क्षपेयम्।
अरुणोदयं न कुरुषे कथमत्र मित्र! भूमौ,
कथय त्वमेव शीघ्रं कतमं प्रतीक्षसे भो!॥

हे दिननाथ! गहन अन्धकार से परिपूर्ण एवं भय प्रदान करने वाली यह रात्रि वर्तमान में अत्यधिक लम्बी हो गयी है। हे मित्र (सूर्य)! इस भूमि पर तुम अरुणोदय क्यों नहीं कर रहे हो! तुम ही शीघ्र कहो, किसकी प्रतीक्षा कर रहे हो!

(130)

युवतेः प्रयाति लीनं सौभाग्यमद्भुतं,
विलपन्त्यमङ्गला सा संरक्षको न कश्चित्।
भजसे विलोक्य पीडां कथमत्र वीर! मौनं,
कथय त्वमेव शीघ्रं कतमं प्रतीक्षसे भो!॥

युवती का अद्भुत सौभाग्य विलीन हो रहा है, अमङ्गल के रूप में जानी जाने वाली (युवती) विलाप कर रही है, न ही कोई उसका संरक्षक है। उसकी पीड़ा को देखकर हे वीर! तुम मौन क्यों धारण करते हो! तुम ही शीघ्र कहो! किसकी प्रतीक्षा करते हो।

(131)

एकस्मिन् दिवसे वसन्तसमये ह्यस्तं प्रयाते रवौ,
लोलादृष्टिपरा प्रसन्नवदना सभ्रूलताविभ्रमा।
कण्ठे बाहुलतां प्रियां विदधती मन्दस्मिता भामिनी,
कान्तस्नेहविशेषचुम्बनपरा दृष्टा मया चेतना॥

वसन्त ऋतु में एक दिन भगवान् सूर्य के अस्ताचल की ओर जाते समय चचंल दृष्टिवाली प्रसन्न वदन भ्रूविलास में चतुर अपने प्रियतम के गले में बाहुपाश डाले हुए मन्द-मन्द मुस्कान करती हुई प्रियतम के प्रति स्नेह के प्रतीक विशेष चुम्बन करती चेतना नामक एक युवती मैंने देखी।

(132)

ब्रह्माद्या दिवि देवताः प्रमुदिताः शौर्यस्य यस्यानिशं,
गायन्ति स्म हृदैव गीतममलं शेषावतारस्य ये।
लङ्कायां दशकन्धरस्य नगरे युद्धं विभो कुर्वता,
हा हा शक्रजिता सह व्यपगता तस्याप्यहो चेतना॥

ब्रह्मा आदि स्वर्ग के समस्त देवता प्रसन्न होकर जिस शेषावतार लक्ष्मण के शौर्य का निरन्तरगान करते थे। उसी लक्ष्मण की रावण के नगर लंका में मेघनाद से युद्ध करते हुए चेतना क्षीण हो गई।

(133)

विश्वं पाति विभर्ति सर्वभुवनं रामाभिरामश्च यो,
यच्छक्त्याश्रयमुत्तमं प्रति जनं सौख्येऽपि दुःखेऽपि वा।
चैतन्यं किमचेतनेऽपि कृपया यस्यैव संयाति नः!
सीताया हरणान्तरे व्यपगता तस्याप्यहो चेतना॥

जो परमश्रेष्ठ राम समस्त विश्व की रक्षा एवं भरण करता है– और संसार का प्रत्येक मनुष्य सुख और दुःख में भी जिसका उत्तम आश्रय पाकर कृतार्थ होता है, इतना ही नहीं अवचेतन भी जिसकी कृपा से चेतनता को प्राप्त करता है। आश्चर्य का विषय है कि सीता के हरण के पश्चात् उस राम की भी चेतना खो गई।!

(134)

प्रकुरुते च या राष्ट्रमद्भुतं,
प्रकुरुते च या देशमुज्ज्वलम्।
प्रकुरुते विभाभूषितं दलं,
जयतु सा सदा लोकचेतना॥

जो लोक चेतना राष्ट्र को निर्मल करती है और देश का उज्ज्वल करती है तथा जिसकी कृपा से ही कोई भी दल प्रभा से देदीप्यमान होता है। वह लोक चेतना विजय को प्राप्त हो।

(135)

दिशति सत्पथं दुष्टभूपतिं,
नयति दुर्गतिं लोकवञ्चकम्।
भजति निष्ठया राष्ट्रसेवकं,
विजयते च सा लोकचेतना॥

जो लोक चेतना दुष्ट शासक को सन्मार्ग प्रदर्शित करती है और राष्ट्र घातक शासक की दुर्गति करती है तथा राष्ट्र सेवक का अत्यन्त निष्ठा से सम्मान करती है वह लोक चेतना विजय को प्राप्त हो।

(136)

पतिवियोगतः शोकविह्वलां,
करुणया परां क्रन्दिनीमिमाम्।
श्लथशरीरिणीं वीक्ष्य सुन्दरीं,
करुणतां गता मे सुचेतना॥

पति को वियोग से शोक विह्वल, करुणा की साक्षात्मूर्ति, श्लथ शरीर एवं करुण क्रन्दन करती हुई सुन्दरी को देखकर मेरी सुचेतना करुणा को प्राप्त हो गई।

(137)

शशिमुखीं शुभां लोललोचनां,
गजसमां गतिं मञ्जुभाषिणीम्।
कृशकटीं प्रियां वीक्ष्य भामिनीं,
कवयतां गता मे सुचेतना॥

चन्द्रमा के समान सुन्दर मुखवाली, चंचल नयनों वाली, हाथी के समान मन्द गति से चलने वाली, मृदुभाषिणी, कृशकटी, एवं अत्यन्त प्रिय सुन्दरी को देखकर मेरी चेतना कवित्व को प्राप्त हो गई है।

(138)

यदि नृपः कुरुते जनतां प्रति,
बहुविधं कलुषात्मकशासनम्।
उपगते समये ननु तन्नृपं,
नयति नाशमहो जनचेतना॥

यदि शासक जनता के प्रति नाना प्रकार के कलुषित शासन को करता है तो समय आने पर उस शासक को जन चेतना नष्ट करती है।

(139)

परमया रमया रमयन्मनः,
परिजहाति परां स्वपरम्पराम्।
स हि तदात्र करोति च दुष्कृतं,
व्यपगतैव नु तस्य सुचेतना॥

परमसुन्दरी प्रियतमा के साथ रमण करता हुआ जो व्यक्ति अपनी मर्यादाओं को छोड़ देता है और तब नाना प्रकार के दुष्कृत करता है तो मान लीजिये कि उसकी सुचेतना नष्ट हो गई है।

(140)

यदि सुहृत्प्रवरः स्वजनं प्रति,
प्रकुरुते शठतां जडतामपि।
किमधिकं न हि वर्णयितुं क्षमः,
व्यथयते मनुजस्य सुचेतना॥

यदि कोई स्वजन अपने जन के प्रति शठता एवं मूर्खता करता है तो इस प्रसङ्ग पर अधिक वर्णन करने की क्षमता नहीं है परन्तु इतना अवश्य कहूँगा कि उस व्यक्ति की कल्याणमयी चेतना पीडित हो जाती है।

(141)

निराश्रयाणां लोके यो,
नित्यं शरणदायकः।
अर्णवः स महान् वन्द्यः,
क्षारनीरधरोऽपि सन्॥

संसार के समस्त निराश्रयों को जो नित्य शरण प्रदान करता है खारे जल को धारण करने पर भी वह समुद्र महान् है और पूजनीय है।

(142)

दिव्यैः सर्वगुणान्वितैः सुरवरैर्या सेव्यते पीयते,
हा हा तां ललितां प्रियां रसभरामानन्दपूर्णां पराम्।
रम्यां दुःखविनाशिनीञ्च सुखदां पीत्वा सुधां पावनीं,
राहुश्चापि गतोऽमरत्वमधुना वंशस्य वृद्धिन्तथा॥

सर्वगुण सम्पन्न दिव्यरूप श्रेष्ठ देवताओं द्वारा जिस अमृत का सेवन एवं पान किया गया है अत्यन्त कष्ट का विषय है कि उस सुन्दर प्रिय रसभरी आनन्दपरिपूर्ण उत्कृष्ट मधुर दुःखविनाशिनी एवं सुख देने वाली सुधा का पान कर राहु भी इस समय अमरत्व को प्राप्त होता हुआ वंशवृद्धि को भी प्राप्त हो गया है।

(143)

कमल ते विषये मम मानसे,
किमियमत्र न राजति भावना।
त्वमयि सर्वविधेन नृपालये,
नृपकुमारविभूषणतां व्रजेः॥

हे कमल! तेरे विषय में मेरे मन में क्या यह भावना विराजमान नहीं हो रही थी कि तुम सभी प्रकार से राजभवन में राजकुमार के आभूषण के रूप में विराजमान हो।

(144)

परमहो सुहृदामनुपस्थितौ,
सपदि तेऽप्रियगन्धमये स्थले।
निपतिते त्वयि सम्प्रति हे सखे?
किमुचितं विहितं विहितं त्वया॥

किन्तु आश्चर्य का विषय है कि मित्रमण्डली की अनुपस्थिति में शीघ्र ही तुम्हारे अत्यन्त दुर्गन्ध वाले स्थान पर गिर जाने से हे मित्र! क्या तुमने उचित कार्य किया।

(145)

अपि सरोज विहाय सुभावनां,
सकलमित्रगणस्य सुधात्मिकाम्।
कृतमिदं भवता स्वहिताय चेद्,
भुवि तदेव सुखाय भवेच्च ते॥

हे कमल! सकल मित्र मण्डली की अमृतमयी सुन्दर भावना को त्यागकर यदि आपने जो भी अपने हित के लिए किया है वही संसार में तुम्हारे सुख के लिए हो।

(146)

मालिन् ते हृदये कथं कथमपि प्राप्ता दया नो च किं,
प्रेम्णा पालितमुत्तमं विकसितं रम्यं त्वया यत् प्रियम्।
पुष्पं देवनिकेतनाश्रयमिदं निक्षिप्य सद्यः स्वयं,
हा हा तत्र रसातलं प्रति सखे निष्कारणेनाधुना॥

हे माली? क्या तेरे हृदय में किसी भी प्रकार की दया नहीं आई? जो तुमने प्रेमपूर्वक पाले हुई सुन्दर एवं प्रिय पुष्प को जिसका आश्रय देवालय था उसे शीघ्र ही अकारण रसातल में फैंक दिया।

(147)

आचारसंस्कारगुणैरुपेतः,
राजा भवेच्छासनसन्निविष्टः।
तेन प्रजारञ्जनरञ्जनत्वं,
स्वाभाविकत्वेन भविष्यतीति॥

सदाचारादि पवित्र संस्कारों से सम्पन्न राजा यदि शासन में विराजमान रहता है तो उससे स्वाभाविकरूप से प्रजानुरञ्जन की प्रवृत्ति विकसित हो जाती है।

(148)

जातिप्रथाभावविशेषलिप्तः,
चेच्छासने तिष्ठति कश्चिदेकः।
सोऽयं सपद्येव करोति नाशं,
देशस्य सम्पूर्णविकासवृत्तेः॥

जाति प्रथा के विचारों से विशेषरूप से लिप्त यदि कोई भी व्यक्ति शासनारूढ होता है तो वह शीघ्र ही देश की समस्त विकास की प्रवृत्ति को रोक देता है।

(149)

स्वार्थान्धरक्तः परिवारभक्तो,
दुःशासनासक्तमतिः प्रशक्तः।
चेच्छासने राजति दुर्मतिः स,
लोकाय तापं प्रददाति नित्यम्॥

स्वार्थन्धकार में डूबा हुआ अपने परिवार का परम भक्त एवं दुःशासन के प्रति आसक्त बुद्धि वाला शक्तिशाली व्यक्ति यदि शासन में विराजमान होता है तो वह प्रतिदिन प्रजा को दुःख ही देता है।

(150)

यस्य प्राणाः कुटिलनृपतेः पाशबद्धा विदूरे,
स्वातन्त्र्येण प्रमुदितहृदा यत्र कुत्रापि गन्तुम्।
शक्तो नायं कथमपि कथं प्राणहीनो नरश्चेद्,
तस्यानेन स्ववचनमिदं पूर्णतामेति किं वा॥

जिस व्यक्ति का प्राण अत्यन्त दूर में विराजमान किसी दुष्ट राजा के पास में बंधा हुआ हो तो क्या यह प्राणहीन व्यक्ति स्वतन्त्ररूप से प्रसन्न मन से जहाँ तहाँ जाने में किसी भी तरह से समर्थ है अर्थात् नहीं, तो बताइये क्या वह व्यक्ति अपने संकल्प को पूर्ण कर सकता है।

(151)

धूर्तैः भ्रष्टैश्च संक्रान्तो,
ह्यनिच्छन्नपि यो नृपः।
किं शुद्धं शासनं दातुं,
शक्तः स भुवने कदा॥

यदि कोई राजा न चाहते हुए भी धूर्त एवं भ्रष्ट व्यक्तियों से घिरा रहता हो तो क्या वह संसार में शुद्ध शासन दे सकता है? अर्थात् नहीं।

(152)

कालिदाससमारम्भां,
भावनां हृदि चिन्तयन्।
यत् किञ्चिद् दृश्यते भूमौ,
नास्त्याश्चर्यन्तु मन्मते॥

हे मित्र! कालिदास के विचारों वाली भावना को हृदय में विचार कर जो कुछ इस संसार में दिखाई देता है उसके सम्बन्ध में मेरे विचार से कोई आश्चर्य नहीं है।

(153)

भद्रं भद्रं सकलसुखदं लोककल्याणरूपं,
ख्यातं यस्याप्रतिमचरितं माननीयं पवित्रम्।
दैवात्सोऽयं प्रभवति यदि शासनस्योच्चतायां,
तत्राप्येनं कलुषितजनाः दूषयन्त्यात्मकृत्यैः॥

सर्वतोभावेन जिस व्यक्ति का अप्रतिम व्यक्तित्व मंगलमय, सर्वसुखदायी, लोक कल्याणकारी एवं माननीय व पवित्र हो, यदि वह व्यक्ति दैवयोग से शासन के उच्च पद पर विराजमान हो जाता है तो वहाँ भी दुष्ट व्यक्ति अपने कुकृत्यों द्वारा उसे दूषित कर देते हैं।

(154)

शुद्धं स्वच्छं परमविमलं शासनं चालयन्तं,
कर्माधीशं यदि निजहितेनैव मत्वा नृपो यः।
दुष्टैर्वृत्तैः व्यथयति यदा पुण्यवृत्तं तमेव,
तस्यायातः पतनसमयः क्षिप्रमेवं हि मन्ये॥

शुद्ध स्वच्छ एवं अत्यन्त निर्मल शासन को चलाने वाले अधिकारी को जो राजा अपने स्वार्थपूर्ति कारक न मानकर अपने दुष्ट व्यवहार से उस पुण्य चरित्र अधिकारी को पीड़ित करता है तो मेरे विचार से निश्चित रूप से उस राजा के पतन का समय आ गया है।

(155)

उच्चैः पदे तु सम्प्राप्ते,
सत्ताया अपि यो जनः।
तस्या भोगे प्रवृत्तो नो,
स योगी परमो मतः॥

सत्ता के उच्च पद पर पहुँचने पर भी जो उसके भोग में लिप्त नहीं होता है तो मेरे विचार से वह एक महान् योगी हैं।

(156)

विद्याबुद्धिविभायुक्तो,
ज्ञानविज्ञानसंयुतः ।
यस्य राज्ये कविर्व्यग्रो,
नास्ति कष्टमतः परम्॥

विद्या एवं बुद्धि के ऐश्वर्य से परिपूर्ण तथा ज्ञान-विज्ञान का ज्ञाता कवि जिस राजा के राज्य में दुःखी हो इससे ज्यादा अन्य क्या कष्ट हो सकता है।

(157)

नानाविचारैरनुबद्धचित्ताः,
सत्तासुखार्थं यदि सम्मिलन्ति।
तन्माध्यमैः सञ्चलिता च सत्ता,
किं सम्प्रयाति स्वभुवो हिताय॥

नाना प्रकार के विचारों वाले व्यक्ति यदि सत्ता के सुख के लिए आपस में मिलते हैं तो उनके माध्यमों से संचालित सत्ता क्या मातृभूमि के हित के लिए हो सकती है।

(158)

वादप्रवादे परिवादवादे,
आक्रान्त एषः परिवारमोहे।
कि शासनं शुद्धतरं प्रदातुं,
शक्तो जगत्यां किल शासकोऽसौ॥

जो शासक वाद-विवादों में, लोकनिन्दाओं में तथा परिवार के मोह में आक्रान्त रहता है क्या वह राजा शुद्धतर शासन को संसार में देने के लिए समर्थ है।

(159)

प्रशासनं शासनतां प्रयातुं,
न यस्य चित्ते किमपि प्रभावः।
तस्याश्रये यः किल जीवमानः,
स्थातुं सुखेन किमसौ समर्थः॥

'शासन सुन्दर अनुशासनात्मक रूप से चले' इस प्रकार की जिसके मन में प्रिय धारणा नहीं है क्या उसके आश्रय में जीवन जीने वाला व्यक्ति सुख से रहने में समर्थ हो सकता है।

(160)

बहवो यत्र नेतारो,
भिन्नभावमतान्तराः ।
तेषां नेतृत्वदानस्य,
कालं देहि न मे प्रभो॥

जिस देश में भिन्न-भिन्न मत मतान्तर के बहुत से नेता हों उनके नेतृत्व करने का हे प्रभु मुझे अवसर न देना।

(161)

आसन्दिके नतिततिः प्रणतिर्मदीया,
त्वत्पादयोः प्रतिदिनं किल नम्रभावैः।
यस्यै करोति हननं भुवि जीव एष,
पुत्रस्य स्वस्य त्वरितं किल दुष्टकृत्यैः॥

हे कुर्सी! मैं विनम्रभाव से प्रतिदिन तेरे चरणों में प्रणाम करता हूँ। जिस तुझे प्राप्त करने के लिए संसार का यह प्राणी अपने पुत्र तक की दुष्ट कार्यों से हत्या कर देता है।

(162)

क्षणभङ्गुरमस्ति जीवनं,
क्षणिकं तत्र विभाति यौवनम्।
प्रमदेऽत्र मदोऽपि वर्तते,
क्षणिनीतुल्यमतीव नश्वरम्॥

यह जीवन क्षण भङ्गुर है और उसमें भी यौवन अत्यन्त क्षणिक है इस यौवन में मद भी बिजली के समान अत्यन्त नश्वर है।

(163)

घोरे महाकलियुगे जगदम्ब भव्ये,
भ्रष्टाश्चरित्रहनने पटवः कृतघ्नाः।
आचारपूतचरितं परितापयन्ति,
मिथ्याकथाप्रकथनैः किमु नात्र चित्रम्॥

हे माँ जगदम्बे! इस घोर महाकलियुग में भ्रष्ट एवं चरित्र हनन में चतुर व कृतघ्न सदाचार से पवित्र चरित्र को झूठी कथाओं को कहकर परेशान करते हैं इससे आश्चर्य क्या हो सकता है।

(164)

सत्यं वदामि सदये तव सम्मुखेऽहं,
सत्येन शुद्धहृदयेन च निष्ठयापि।
स्वच्छं पवित्रमतुलं प्रकरोमि कार्यं,
तत्रापि कुत्सितजनाः परिपीडयन्ति॥

हे माँ जगदम्बे! मैं सत्यपूर्वक तेरे समुख कहता हूँ कि मैं सत्य एवं निष्ठापूर्वक तथा शुद्ध हृदय से स्वच्छ एवं पवित्रभाव से कार्य करता हूँ वहाँ भी कुत्सित लोग पीड़ित करते हैं।

(165)

उत्थानं पतनं लयश्च विलयो लाभश्च हानिस्तथा,
सौख्यं दुःखमपि प्रियोऽप्रियकरः कीर्तिस्त्वकीर्तिस्तथा।
एतेऽस्मिन्भुवने भवन्ति सुम रे भाग्यक्रमेणानिशं,
तर्हि त्वं हृदि मा वह प्रियसखे खेदं व्यथावर्धकम्॥

हे पुष्प! उत्थान-पतन, लय-विलय, लाभ-हानि, सुख-दुःख, प्रिय-अप्रिय एवं कीर्ति-अकीर्ति ये सभी इस संसार में हमेशा भाग्यक्रम से ही होते हैं इसलिए दुःख को बढ़ाने वाले सन्ताप एवं पश्चाताप को हृदय में धारण मत करो।

(166)

केदारेश्वरसन्निधौ निवसता कालीप्रसादात्तथा,
ह्यूणग्रामनिवासिना विरचितं श्रीकृष्णनाम्ना मया।
नानाभावविभावभावर्भरितैर्लोकानुभूत्यर्जितै-
रुत्कृष्टैरशुभैश्शुभैरनुभवैर्वाग्वैभवं वैभवम् ॥

माँ जगदम्बा काली माई की कृपा से केदारनाथ के समीप ह्यूण (यमुनापुर) ग्राम निवासी कविरत्न डा. मुझ श्रीकृष्ण (सेमवाल) ने नाना प्रकार के भावानुभावों से तथा लोकानुभूति से अर्जित कल्याणकारी एवं अकल्याणकारी अनुभवों के द्वारा वैभव सम्पन्न "वाग्वैभवम्" नामक काव्य की रचना की।

अनुरक्तिपीयूषम्

1. अनुरक्तिपीयूषम्

अनुरक्तिपीयूषम्

(1)

सुधया समलङ्कृतश्शुभः सुखदुःखैकरसानुभूतिदः।
जयताज्जगतीतलेऽनिशं सरसः प्रेमरसोऽन्यसंवशः॥

अमृततत्व से अलंकृत, सुखदुःख की एकमात्र अनुभूति देने वाला, सरस, पराधीन प्रेमरस इस धरती पर निरन्तर विजयी हो।

(2)

भुवनस्य रहस्यरूपकं सुभगे प्रेम विचिन्त्य मानसे।
गदितुं किल तस्य गौरवं मम वाणी मुखरीकरोति माम्॥

हे सुभगे! संसार के रहस्यस्वरूप प्रेम को मन में विचार कर उसके माहात्म्य का वर्णन करने के लिये मेरी वाणी मुझे प्रेरित कर रही है।

(3)

समये समयेऽमरैरपि त्रिदिवात्प्रेमवशं गते भुवि।
अवतीर्य विभासितः प्रियः सरसः प्रेमरसः स्वकर्मभिः॥

समय-समय पर अनेक बार प्रेम के वशीभूत होकर स्वर्ग से पृथ्वी पर अवतीर्ण होकर देवताओं के द्वारा भी अपने कार्यों के द्वारा सरस प्रेमरस को विभासित किया गया है।

(4)

अनुरागधरातले परा दृढसंकल्पयुताः कृतश्रमाः।
युगलाश्च जयन्ति ते प्रियाः रससिद्धाः सरसाः कवीश्वराः॥

इस अनुरागरूपी धरातल पर विराजमान दृढ़संकल्प से युक्त, कृतसंकल्प, परिश्रमी प्रिय प्रेमी युगल एवं रससिद्ध कवीश्वर विजयोत्कर्ष को प्राप्त करें।

(5)

परिमार्जितकारिणं प्रियं निखिलं स्नेहरसस्य भूतलम्।
वसुदेवसुतं नमाम्यहं प्रियगोपीजनहर्षवर्द्धनम्॥

सम्पूर्ण स्नेहरस की धरा को परिमार्जित करने वाले गोपियों के हर्ष का वर्धन करने वाले प्रिय वासुदेव को मैं प्रणाम करता हूँ।

(6)

व्यथितस्य मनःकथामयी ललिता प्रेमपरागवर्द्धिनी।
जयताद् भुवने निरन्तरं जयदेवस्य शुभा सरस्वती॥

विरहीजन के हृदय की कथा रूप, प्रेम पराग को बढ़ाने वाली एवं परम ललित जयदेव की मंगलमयी वाणी इस लोक में सदैव विजयी हो।

(7)

प्रियया परिवञ्चितेन ये सदयाः मृत्युपथं गता जनाः।
अयि शान्तिपथस्य कामनां कुरुतेऽयं ननु तन्मृतात्मनाम्॥

जो दयनीय जन अपनी प्रिया से परिवंचित हो पंचत्व को प्राप्त हो गये हैं, मैं उन मृतात्माओं की शान्ति के लिए इस अवसर पर प्रभु से कामना करता हूँ।

(8)

छलिनश्च छलेन साम्प्रतं वनिता या व्यभिचारतां गताः।
कुरुतेऽत्र सहानुभूतये विनयं भद्रजनश्च तत्कृते॥

कपटी प्रेमी के छल से जो युवतियाँ व्यभिचार के मार्ग पर चल पड़ती है, इस संसार में भद्रपुरुषों से मैं निवेदन करता हूँ कि उनके प्रति वे सहानुभूति रखें।

(9)

अयि जीवनवर्त्मनि प्रिये घटनेत्थं घटते कदा क्वचित्।
समुदत्यतिसौहृदात्मकः शुभकर्षो मनुजञ्च तं प्रति॥

हे प्रिये! कभी किसी मनुष्य के जीवन मार्ग में कहीं कोई ऐसी घटना घट जाती है कि उस व्यक्ति विशेष के प्रति उसका मैत्रीपरक आनन्ददायी आकर्षण उत्पन्न हो जाता है।

(10)

स हि याति परां गतिं यदा प्रतिबध्नात्यनुरागतां मनः।
मनसोर्मिलनं मिथस्तयोर्जगति प्रेमपदेन भण्यते॥

जब वही आनन्ददायी अनुराग पराकोटि को प्राप्त हो जाता है तो उन दोनों का मन परस्पर परम अनुराग में बंध जाता है ऐसे दो मनों के आपस में मिलन को संसार में ''प्रेम'' कहते हैं।

(11)

जरयापि न जीर्यते कदा मरणेऽपि म्रियते न हि प्रिये।
प्रलयेऽपि न याति यल्लयं जगति प्रेम तदेव कथ्यते॥

हे प्रिये! वार्धक्य जिसे जीर्ण नहीं कर सकता, मृत्यु के पश्चात् भी जो मर नहीं सकता, प्रलय होने पर भी जो लय नहीं हो सकता, संसार में उसे ही ''प्रेम'' कहते हैं।

(12)

न हि वाञ्छति यः प्रियः कदा निजसर्वस्वसमर्पितेऽप्यहो।
प्रतिदानफलं प्रियां प्रति जगति प्रेम तदेव कथ्यते॥

अपना सर्वस्व समर्पित करने पर भी जो प्रेमी अपनी प्रेमिका से बदले में कुछ कामना नहीं करता, संसार में उसे ही ''प्रेम'' कहते हैं।

(13)

शुभभावसुमैर्वचोऽमृतै र्विविधैस्तत्र विचारपत्रकैः।
अनुरागफलैः समन्वितो लसति प्रेमवटो महातरुः॥

मङ्गलमयभावरूपी पुष्पों से, वचनामृतों से, विभिन्न विचाररूपी पत्रों से, तथा अनुराग रूपी फलों से युक्त प्रेमरूपी वट का यह महावृक्ष शोभायमान है।

(14)

अयि भाग्यविशेषसम्पदे सुखदुःखान्विततीरतर्पणी।
कलसंकुलनादनादिनी लसति प्रेम महानदीव मे॥

मेरे भाग्य की विशेष सम्पत्ति हे प्रिये! यह प्रेम उस महानदी के समान है, जिसके सुख दुःख रूपी दो किनारे हैं और जहां भावनारूपी लहरों का मधुर नाद गुञ्जायमान होता रहता है।

(15)

अनुरागपथो वहत्यहो जलधेस्तुल्यतमां गभीरताम्।
परमस्य तु कर्मणि प्रिये महती चञ्चलता तरङ्गवत्॥

यद्यपि अनुराग के मार्ग में समुद्रवत् गंभीरता बनी रहती है किन्तु इसकी क्रियाओं में लहरों की भाँति अत्यन्त चपलता दिखाई देती है।

(16)

अयि देवि सदास्य वर्त्मनि जलधेर्ज्वारसमा उमङ्गमाः।
प्रभवन्ति महौजसः च ये हृदयाकर्षणकारकाः पराः॥

हे देवि! इस प्रेम के मार्ग में सागर के ज्वारभाटे की तरह ऐसी उमंगें उमड़ती हैं जो कि हृदयाकर्षक एवं अत्यन्त बलवती होती हैं।

(17)

अनुरागरसो महाशये जलधेः क्षारजलस्य सन्निभः।
अजयज्जलमस्य यो भुवि स हि मुक्तामधिगच्छति ध्रुवम्॥

हे महाशये! अनुराग रूपी रस समुद्र के खारे जल के समान है। यदि कोई प्रेमी इस पर विजय प्राप्त कर लेता है तो वह निश्चय ही मुक्तामणि को प्राप्त करता है।

(18)

हृदि सन्निहितासु सम्मुखे प्रविधातुं निजकार्यकौशलम्।
अनुरागवशोऽवशो जनः कुरुते तद्विषये च किन्न हि॥

प्रेम के वशीभूत हो परवश सा हुआ प्रेमी हृदय में विराजमान प्रियतमा के समक्ष अपनी कार्यकुशलता प्रदर्शित करने के लिये क्या नहीं करता है।

(19)

गगनाङ्गणतारकाँस्तथा जलधेः रम्यमणिव्रजानपि।
परितोषयितुं प्रियाञ्च यः सुविचेतुं भवति क्षमोऽनिशम्॥

प्रेमी प्रेयसी को संतुष्ट (प्रसन्न) करने के लिये आकाश के तारे तथा सागर से मनोहर मणियों को भी चुनने के लिए निरन्तर तत्पर रहता है।

(20)

नहि कोऽपि युवा भुवि क्षमः प्रतिभातुल्यतमो ममावनौ।
इति तां प्रति तस्य भाषिते त्वरिता सा हृदयङ्गमायते॥

प्रेमी द्वारा प्रेमिका को, 'इस धरती पर मेरे जैसा कोई भी प्रतिभावान् एवं सक्षम युवक नहीं है।' इस प्रकार कहने पर भोली भाली वह उस प्रेमी को अपना हृदय समर्पित कर देती है।

(21)

परिधाय नभोवितानकं युगलौ प्रेमपरायणाविमौ।
परिहाय भयञ्च निर्भयौ भ्रमतस्तौ भुवनाङ्गणे प्रिये॥

यह प्रेमी युगल गगनरूपी चन्दोवे को धारण कर निर्भय होकर धरती रूपी इस प्यारे आङ्गन पर विचरण करता है।

(22)

अनयोर्गहनप्रमेलने दिवसा यान्ति कदा निशा अपि।
इति वित्त इमौ न तत्क्षणं परमानन्दसहोदरे सुखे॥

परमानन्द सहोदर सुखरूप इन दोनों के गहन मिलन में कब दिन और कब रातें बीती इसका इन्हें कुछ भी ज्ञान नहीं रहता है।

(23)

अनुरक्तिसमुद्रचारिणोरनयोःप्रेमवचांसि वै कदा।
प्रभवन्ति च यान्ति पूर्णतां न हि वा नैव नवानि वा न वा॥

प्रेम सागर में विचरण करने वाले इन दोनों का प्रेमालाप बढ़ते ही जाते हैं और कभी भी समाप्त नहीं होते।

(24)

अशने वसने तथासने श्वसने वा हसनेऽन्यकर्मसु।
अयमेष सदैव पश्यति सकलं विश्वमिदं प्रियामयम्॥

यह प्रेमी खाते पहनते, बैठते, साँस लेते, हंसते और अन्य किसी भी कार्य को करते समय सदा ही इस सम्पूर्ण संसार को प्रियामय देखता है।

(25)

दिशि वा पथि वा नगेऽपि वा विपिने वा भवने च भूतले।
हृदि वा नयने तथानने प्रतिबिम्बं सकलं सुधामयम्॥

यह प्रेमी दिशाओं में, मार्ग में, पर्वत में, जंगल में, घर में, भूमि में, हृदय में, नयन में, मुख में सभी स्थानों में अमृतमय (प्रेम) का ही प्रतिबिम्ब देखता है।

(26)

अभिमानवती प्रिया यदि प्रतियाति प्रतिकूलतां यदा।
लुठति व्यथितः प्रियां विना भुवि तोयेन विना यथा झषः॥

किन्हीं कारणों से यदि मानिनी प्रेयसी रूठ जाती है तो धरती पर जल के विना मछली के सदृश व्याकुल यह प्रेमी तड़फड़ाता रहता है।

(27)

भुवने भणति व्यथाकुलो भणितिं तत्र विचक्षणामिमाम्।
दयितातिवियोगजैरसौ विविधां भावविभावसंकुलाम्॥

इस संसार में प्रिया के विरह से व्यथित हुआ यह प्रेमी विविधभावों से युक्त इस विलक्षण उक्ति को कहता है।

(28)

विषमान्नु गतं दशामिमां परितप्तं परिवीक्ष्य मां जनम्।
अयि ते हृदि हे प्रिये न हि किमु संयाति दयार्द्रचेतना॥

हे प्रिये! इस विषम स्थिति को प्राप्त हुए मुझे दुःखी देखकर क्या तुम्हारे हृदय में दयार्द्र चेतना नहीं आती।

(29)

अयि सत्यमसत्यमस्ति किं न हि मे शोचयितुं क्षमा क्षितौ।
अनुरागरसानुबन्धने प्रतिवद्धस्य जनस्य चेतना॥

हे देवि! प्रेम रस के बन्धन में बंधे मुझ इस जीव की चेतना (बुद्धि) इस धरती पर 'क्या सत्य है और क्या असत्य है।' यह विचार करने में पूर्णरूप से असमर्थ है।

(30)

अयि मानिनि मानमुत्तमं परिहायेति दयस्व मां प्रति।
न हि मे विलयं गमिष्यति सकला सर्वविधैव चेतना॥

हे मानिनि! अपने उत्तम मान को त्यागकर मेरे ऊपर दया करो। अन्यथा मेरी सम्पूर्ण चेतना सब प्रकार से नष्ट हो जायेगी।

(31)

तव भावविभावमुत्तमं हृदयाकर्षणकारकं प्रिये।
स्मरति व्यथितो यदा यदा व्यपयातीति तदैव चेतना॥

हे प्रिये! यह दुःखी प्रेमी जब-जब तुम्हारे चित्ताकर्षक उत्तम भावविभावादि वृत्तियों का स्मरण करता है तब-तब ही उसकी चेतना लुप्त हो जाती है।

(32)

कितवो मम जीवनाध्वनि रसपूराश्चषकाः समागताः।
न हि तान्प्रति मे कदाऽप्यहो किल याता दयिते स्वचेतना॥

हे प्रिये! मेरे जीवन मार्ग में कितने ही रसपूर्ण चषक आये किन्तु उनके प्रति मेरी अपनी चेतना कभी भी नहीं गयी।

(33)

मरुभूमिनिवासिने प्रिये ननु दत्तस्तृषिताय यत्त्वया।
अनुरागसुधामयो रसः प्रतियाता च तदस्य चेतना॥

हे प्रिये! मरुभूमि में निवास करने वाले इस अनुराग रस के प्यासे को जो अनुराग रूपी अमृत तुम्हारे द्वारा दिया गया उसी से इसकी चेतना पुनः लौट आई है।

(34)

बहवो भुवने रसा मता बहुरागैरनुरञ्जिताः पराः।
परमस्य जनस्य तान्प्रति न हि यातीति कदापि चेतना॥

हे देवि! संसार में मधुरादि रस से रंजित अनेक रस कहे गये है किन्तु इसकी चेतना उनके प्रति कभी भी आकर्षित नहीं हुई।

(35)

मृदुलैर्मधुरैस्सुधामयैर्विविधैस्स्वाग्रहकारकैः प्रियैः।
सरसैः स्ववचोभिरात्मनः पुनरायाति हृतास्य चेतना॥

हे प्रिये! तुम्हारे विनीत, मधुर, अमृततुल्य, विविध आग्रहकारक प्रिय सरस वचनों से इस अकिञ्चन की विरह से हरण हुई चेतना पुनः लौट आती है।

(36)

सुधिया च सुधारसेन वा सुसहाय्येन कृतार्थतां कृते।
अयि नैव निर्वतते प्रिये झटिति त्वां प्रति मे सुचेतना॥

हे प्रिये! आपकी सुबुद्धि एवं अमृतंमय वचनों के द्वारा तथा निरन्तर सहायता के द्वारा मुझे कृतार्थ किये जानें पर तुम्हारी ओर से मेरा ध्यान बिल्कुल भी नहीं हट रहा है।

(37)

नहि कर्गलमेतदस्ति हे पतनेनैव जलस्य विन्दुना।
निजसत्त्वमये विहाय यो गलितं यास्यति शीघ्रमेव हि॥

हे प्रिये! यह प्रेम कागज नहीं है जो कि जल की बूँद के गिरते ही अपने सत्व को त्यागकर शीघ्र ही गल जायेगा।

(38)

ज्वलति ज्वलनेन यत्क्षणे पवनेन प्रतियाति दूरतः।
इदमस्ति न तत्तृणं प्रिये निजसत्त्वं न हि यस्य वर्तते॥

हे प्रिये! यह प्रेम ऐसा तृण नहीं है जो कि अग्नि से क्षणभर में जल जाता है या वायु से दूर चला जाता है और जिसका अपना कोई अस्तित्व नहीं है।

(39)

क्व गतानि निमन्त्रणानि ते वचनानीति मृदूनि तान्यपि।
अनुरागरसानुबन्धनं क्व च यातं वद सम्प्रति प्रिये॥

हे प्रिये! तुम्हारे वे निमन्त्रण कहाँ गये! अत्यन्त मीठे वे वचन कहाँ गये! हे प्रिये! बोलो कि आपका प्रेमरस का वह अनुबन्धन अब कहाँ गया।

(40)

क्व गतं तव सौम्यवीक्षणं क्व च यातश्च तवाग्रहः प्रियः।
क्व गतं हसितं तव प्रिये क्व च यातं तव पावनं मनः॥

हे प्रिये! अब तुम्हारी वह सरल दृष्टि कहाँ गयी? तुम्हारा वह प्रिय आग्रह कहाँ गया! तुम्हारी वह हँसी कहाँ गयी! तुम्हारा पवित्र वह मन अब कहाँ चला गया है।

(41)

क्व गता तव भव्यभावना क्व च याता तव काव्यसाधना।
क्व गता तव रागरञ्जना क्व च याता तव चित्रचेतना॥

तुम्हारी भव्य भावना कहाँ गयी? तुम्हरी काव्यसाधना कहाँ गयी? तुम्हारी स्नेहाभिव्यक्ति कहाँ गयी? तुम्हारी अद्‌भुत चेतना अब कहाँ गयी।

(42)

हृदयं वद केन हेतुना मृदुलन्ते कठिनञ्च निर्दयम्।
अभवत्सहसैव हे प्रिये न हि वेत्तुं किल सक्षमो जनः॥

हे प्रिये! तुम्हारा कोमल हृदय अचानक ही इतना कठोर और निर्दयी क्यों हो गया? यह मनुष्य जानने में पूर्ण रूप से अक्षम है।

(43)

त्वरितं वद मे त्वया सह ह्यपराधः कतमो मया कृतः।
अयि यस्य च दीयते त्वया ननु दण्डः कटुरेष मेऽधुना॥

हे प्रिये! तुम शीघ्र बोलो कि मैंने तुम्हारे प्रति कौन सा अपराध किया है? जिसका तुम मुझे वर्तमान में इतना कटु दण्ड दे रही हो।

(44)

बहवस्तु भवन्ति जीवने ननुरोगाः बहुकष्टकारिणः।
अनुरागपरोऽतिकष्टदो न हि रोगोऽप्यवलोक्यते मया॥

हे प्रिये! जीवन में अनेक अत्यन्त कष्टकारक रोग होते हैं परन्तु प्रेमरूपी रोग से बढ़कर अतिकष्टदायी कोई अन्य रोग मुझे नहीं दिखाई दे रहा है।

(45)

सुधया परिवञ्चितो जनो गरलान्वेषणतां गमिष्यति।
इति चेतसि चिन्तय प्रिये किमु नायाति दया दयामयि॥

हे प्रिये! अमृत से वंचित मनुष्य विष की ही खोज करेगा। हे दयामयि! ऐसा विचार करने पर क्या तुम्हें मेरे ऊपर दया नहीं आती।

(46)

मधुराणि वचांसि तानि ते हृदयं शल्यमिवाधुना प्रिये।
नितरां परिपीडयन्ति मामशरण्यं व्यथितं जनं त्विमम्॥

हे प्रिये! मुझ असहाय एवं व्यथित व्यक्ति को तुम्हारे वे मधुर वचन अब हृदय में बाण के सदृश निरन्तर अत्यन्त पीड़ा पहुंचा रहे हैं।

(47)

निजकौतुकहेतवे त्वया परमाखेटकमीदृशो जनः।
विहितो यदि हे प्रियेऽधुना किमु ते तद् विमलीकृतं कृतम्॥

हे प्रिये! यदि तुमने अपनी क्रीड़ा के लिये इस प्रकार के व्यथित मनुष्य को शिकार बनाया है तो क्या तुमने यह शुभ कार्य किया है।

(48)

अयि कस्य कृतस्य मे भुवि त्वरितं दत्तमिदं फलं त्वया।
विहितं किल मत्सुजीवनं सुधया लिप्तमिदञ्च यत्प्रिये॥

हे देवि! तुमने धरती पर मेरे कौन से कर्म का फल दिया है? जो तुमने मेरा यह सुन्दर जीवन चूने से लिप्त कर दिया है। अथार्त् मेरें जीवन पर चूना लगा दिया है।

(49)

अनुरागशरेण ते प्रिये ननु विद्धो भ्रमतीह भावुकः।
मरणस्य समीपतां गतः शरविद्धो हरिणो यथा प्रिये॥

हे प्रिये! तुम्हारे प्रेम बाण से विद्ध यह भावुक प्रेमी यहाँ उसी प्रकार से तड़पता हुआ चक्कर काट रहा है जैसे बाण से घायल हिरण मृत्यु के निकट पहुँच कर तड़पता हुआ चक्कर काटता जाता है।

(50)

अयि भावविभावभामिनि सुधयाधारधरेऽधरे प्रिये।
कथमत्र मदर्थमुत्तमं निजचित्तं कठिनीकृतं त्वया॥

भाव एवं विभावों प्रकट करने वाली एवं अधरों में अमृतत्व को धारण करने वाली हे प्रिये! अपने उत्तम हृदय को मेरे लिए तुमने इतना कठोर क्यों बनाया।

(51)

अनुरागधरातले प्रिये ह्युपहासस्य च सम्प्रति त्वया।
किमुदाहरणाय वै द्रुतं रचितैषा च कथा न वा नवा॥

हे प्रिये! अनुरागरूपीधरातल पर तुमने इस समय उपहास के उदाहरण के लिये क्या यह नई कथा नहीं रची।

(52)

अनुरागरसेन सेचितो महतायासभरेण वर्धितः।
सरलस्तरलो मनोहरो विलयं यास्यति चैष पादपः॥

हे प्रिये! अनुरागरूपी रस से सींचा गया तथा अथक् प्रयास से वर्धित सरल, सरस एवं मनोहर यह पौधा शीघ्र ही नष्ट हो जायेगा।

(53)

अयि चित्रमिदं विभात्यसौ तव कार्यं समवेक्ष्य हे प्रिये।
स्वत एव सुपालितो द्रुमः स्वयमेवात्र विहन्यते त्वया॥

तुम्हारे कार्य को देखकर यह विचित्र सा लगता है कि अपने द्वारा सुपालित यह वृक्ष यहाँ तुम्हारे द्वारा ही नष्ट किया जा रहा है।

(54)

ऋषिभिर्गदिता पुरा प्रिये भणितिः सा स्मृतिमागता न वा।
स्वयमेव विवर्धितस्तरुः गरलस्यापि न हन्यते जनैः॥

प्राचीनकाल में ऋषियों द्वारा कही गयी वह उक्ति क्या तुम्हें स्मरण नहीं रही कि लोग अपने आप लगाये गये विष के पेड़ तक को भी अपने आप नष्ट नहीं करते।

(55)

नयने किल खञ्जनाञ्जने त्वनयोस्तन्मदिरेक्षणन्तथा।
अधरामृतपानमुत्तमं स्मृतिमायाति पुनः पुनश्च ते॥

हे प्रिये! खञ्जनपक्षी के नयनों के समान तुम्हारे नयन एवं उनकी नशीली दृष्टि, साथ ही तुम्हारे अधरों का अमृत पान, बार-बार मेरे स्मृति पटल पर मंडरा रहा है।

(56)

गहनान्धतमोऽन्विता निशा मम दुःखस्य सहायतां गता।
व्यथयन्ति मदीयमानसं मम निद्रां परिलुण्ठ्य हे प्रिये॥

हे प्रिये! गहन अन्धकार से युक्त निशा मेरी नींद को चुराकर मेरे दुःख की सहायता करती हुयी मेरे मन को अत्यन्त व्यथित कर रही है।

(57)

अयि वैरिणि वैरिणि क्षपे वद कस्यास्य कृतस्य मे त्वया।
अतिदुःखमयञ्च कष्टदं भुवि दत्तं किल दुष्फलं मम॥

मेरी अकारण शत्रु हे रात्रि! धरती पर तुमने मुझे किस कार्य का अत्यन्त दुःखमय एवं कष्टदायक कटुफल दिया है।

(58)

अयि तेन सुधाकरेण मां विमुखीकृत्य सुधारसादहो।
कृतमत्र मया सहाप्रियं सहसा तन्न हि विस्मराम्यहम्॥

हे प्रिये! उस चन्द्र ने अमृतपान से विमुख करके मेरे साथ जो अप्रिय कार्य किया है, उसे मैं शीघ्र भूल नहीं पा रहा हूँ।

(59)

अयि विम्बफलाधरे प्रिये मधुरन्ते ह्यधरामृतं पुरा।
बहुशः परिपीय यो मदोऽधिगतोऽद्यापि जहाति नैव सः॥

विम्बफल के समान अधरवाली हे प्रिये! पूर्वकाल में तुम्हारे मधुर अधरामृत को पी पीकर जो उन्मत्तता प्राप्त की है वह मुझे आज भी नहीं छोड़ रही। अर्थात् उस याद को मैं अब भी भुला नहीं पा रहा हूँ।

(60)

प्रियया परिवञ्चितो जनो यदि पीयूषमपि क्वचित् पिबेत्।
अमरत्वमुपैति नैव स यत आत्मास्य गतः प्रियां प्रति॥

हे प्रिये! प्रिया से वंचित मनुष्य यदि कभी अमृत भी पिये तब भी वह अमरत्व को प्राप्त नहीं होता क्योंकि इसकी आत्मा तो अपनी प्रिया में है।

(61)

**अनुरागकथाव्यथामयी प्रसभं मां व्यथयत्यहो प्रिये।
बहुशोऽपि कृते परिश्रमे न मनो मे विनिवर्ततेऽधुना॥**

हे प्रिये! अनुराग कथा बड़ी ही पीड़ादायिनी है जो कि मुझे अत्यन्त दुःखी कर रही है। अत्यन्त प्रयत्न करने पर भी मेरा यह चित्त इस ओर से वापस नहीं लौट रहा।

(62)

**छलने छलनाच्छरीरतः प्रतियाते त्वयि दूरतोऽप्यहो।
हृदये वसतीति मे प्रिये त्वमये मेऽसि सदैव सन्निधौ॥**

हे छलने! यदि छलपूर्वक तुम मुझसे दूर चली भी गई हो तब भी तुम निश्चयेन सदैव मेरे प्रिय हृदय में ही विराजमान रहती हो, अतः तुम सदा ही मेरे समीप में हो।

(63)

**अयि दीपकरागरञ्जितं परिपश्यात्र पतङ्गसङ्गमम्।
स्ववपुर्ज्वलयन्नपि प्रिये न जहाति प्रणयानुबन्धनम्॥**

हे प्रिये! दीपक के अनुरागी पंतगों के सङ्गम को देखो, जो अपने शरीर के जलने पर भी दीपक से सम्बन्धित प्रेमबन्धन को नहीं त्यागते हैं।

(64)

**अयि दीपक कीदृशं तव भवति स्नेहविशेषबन्धनम्।
तव याति समीपताञ्च यः कुरुषे त्वं किल भस्मसाद्धि तम्॥**

हे दीपक! तुम्हारे स्नेह विशेष का बन्धन किस प्रकार का है? जो तुम्हारी सन्निधि को प्राप्त होता है उसे ही तुम भस्म कर देते हो।

(65)

अयि दीपक निर्दयानिशं भुवने त्वं कतमान् पतङ्गमान्।
निजसम्मुख एव मर्दयन् हृदि किन्ते करुणागता न वा॥

हे निर्दयी दीपक! इस धरती पर कितने ही पतंगों को अपने समक्ष ही नष्ट करते समय क्या तुम्हारे हृदय में करुणा नहीं आती!।

(66)

अयि काल विधाय घूर्णितं कुटिलं दीपमिमं विनाशदम्।
उचितं विहितं त्वया भुवि प्रतिदानस्य फलं प्रदाय तत्॥

हे काल! प्रतिकारस्वरूप विनाशकारी कुटिल दीपक को बुझाकर तुमनें धरती पर उचित ही कर्म किया है।

(67)

शरदिन्दुशुभानने प्रिये परिपश्यापरमद्भुतं सरः।
वपुषश्च गतेऽपि शुष्कतां न हि मीनन्तु जहाति यत्परम्॥

शरद् ऋतु की पूर्णिमा के समान सुन्दर मुखवाली हे प्रिये! इस अद्‌भुत जलाशय को देखो। जो शरीर के सूख जाने पर भी मछली को नहीं त्यागता।

(68)

अनयोरनुरागरञ्जनादरिभावः कथमत्र ते रवे।
यदिदं ननु शुष्कयन्सर उभयोर्मृत्युपथे समागते॥

हे सूर्य! इन दोनों की गहरी मित्रता से तुम्हारी क्या शत्रुता? जो इस सरोवर को सुखाकर इन दोनों को मृत्यु के पथ तक पहुँचा दिया है।

(69)

इह जन्मनि चान्यजन्मनि दयिताया विरहोऽतिकष्टदः।
भगवन्नहि देहि मे कदा परितापं ललनावियोगजम्॥

हे प्रिये! इस जन्म में या अन्य जन्म में प्रिया का विरह अत्यन्त कष्टदायक होता है अतः हे भगवन्! प्रेयसी के वियोग से उत्पन्न दुःख मुझे कदापि नहीं देना।

(70)

न धनं न बलं न वा गृहं न च माता च पितापि बान्धवाः।
प्रतिभान्ति न ते त्वया विना रसहीना सरसीव साम्प्रतम्॥

हे प्रिये! तेरे विरह के कारण वर्तमान में धन, बल, घर, माता, पिता, बन्धुबान्धावादि सूखी नदी के सदृश मुझे किसी प्रकार से अच्छे नहीं लगते हैं।

(71)

न दशा न दिशा न वा निशा सरसे मे सरसा रसापि वा।
प्रतिभाति शुभे त्वया विना भुवनेऽस्मिन्नितरां मनोहरे॥

हे सरसे! हे शुभे! इस मनोरम जगत् में तुम्हारे विना न दशा, न दिशा, न निशा, ना ही सजला नदी मुझे अच्छी लगती है।

(72)

न गतिर्न मतिर्न वा रतिर्न हि वा भावपरम्परापि च।
इह भूमितलेऽति पावने प्रतिभाति प्रियया विना न मे॥

प्रियतमा के बिना इस धरा पर मुझे न गति, न मति, न रति और ना ही भाव-परम्परादि अच्छी लगती हैं, अर्थात् कुछ कुछ भी नहीं सुहाते हैं।

(73)

भुवि यस्य विराजते प्रिया परितप्तस्य जनस्य मानसे।
न तृषा लगति क्षुधा न हि न हि रागो भुवनस्य राजते॥

प्रेमरोग से रुग्ण जिस प्रेमी के हृदय में उसकी प्रेयसी विराजमान है उसे नतो भूख लगती है और न ही प्यास। यहाँ तक कि उसे संसार के रागादि भी नहीं भाते हैं।

(74)

अयि दारुणदुःखदायिनि हृदयाह्लादविनाशिनि ध्रुवम्।
अयमत्र वियोगतस्तव ननु दग्धो लुठतीह भूतले॥

अत्यन्त भयङ्कर दुःख को देने वाली तथा हृदय के आनन्द को नष्ट करने वाली हे प्रिये! इस धरा पर तुम्हारे विरह में जला हुआ तुम्हारा यह प्रिय पृथिवी पर तड़प रहा है।

(75)

सरले हृदये मनोभरे प्रति चाङ्गं दहतीति मे शिखा।
अयि दूरत एव कौतुकं कथमत्रैव विलोक्यते त्वया॥

हे सरलहृदय मनोहारिणि प्रिये! तुम्हारे विरह की अग्निज्वाला से मेरे शरीर का प्रत्येक अङ्ग जल रहा है और तुम दूर खड़ी इसे कौतुक सदृश देख रही हो।

(76)

विरहानलतापतापिते हृदये मे तव वाक्यजालकम्।
तपनं जनयत्यनारतं न निदाघे ज्वलनं यथाप्रियम्॥

हे प्रिये! विरहाग्नि में व्याकुल मेरे हृदय में तुम्हारा वाग्जाल निरन्तर कष्ट उत्पन्न कर रहा है। ऐसा परम कष्ट तो ग्रीष्म ऋतु में जलने पर भी नहीं होता है।

(77)

शरदभ्रघना इव प्रिये क्षणिकं स्वप्नवशान्ममाग्रतः।
कथमप्युपयासि चेद् यदा विरहव्याकुलता हि वर्धते॥

हे प्रियतमे! यदि स्वप्न में शरद्कालीन मेघ सदृश तुम किसी भाँति मेरे सम्मुख आ जाती हो तो उससे मेरी विरह व्याकुलता और भी बढ़ जाती है।

(78)

कुपितासि कथञ्च मां प्रति प्रियनिद्रे मम दुःखनाशिनि।
अधिगत्य तवाश्रयं यतो विरही शान्तिमुपैति सत्वरम्॥

मेरे कष्टों को दूर करने वाली मेरी प्रिय निद्रे। तुम मुझ पर क्यों कुपित हो? तुम्हारा आश्रय पाकर तो विरहातुर प्रेमी भी शीघ्र ही शांति को प्राप्त कर लेता है।

(79)

हृदयस्थलवासिनि प्रिये मम निश्वासविशेषचालिके।
परिवेदनपीडिताय मे त्वमये देहि कृपावलम्बनम्॥

मेरे हृदय में निवास करने वाली और मेरे श्वासों की सञ्चालन करने वाली हे प्रिये! अत्यन्त पीड़ा से पीड़ित मुझ दुःखी को अपनी कृपा का सहारा तो दो।

(80)

मम जीवनवाद्यवादिनि मम तन्त्रस्य रहस्यबोधिनि।
कृपया दयया स्वकीयया सुधिया देहि दिशावलम्वनम्॥

मेरे जीवन के गीतों का गाने वाली! एवं मेरे जीवनसूत्र के रहस्य को जानने वाली हे प्रिये! अपनी दयामयी कृपा एवं सद्बुद्धि से मुझे सन्मार्ग दिखाओ।

(81)

मम भाग्यविधानवर्द्धिनि सुखसौविध्यरसैकदायिनि।
सरलाद् विमलात्स्वचेतसः कुटिलत्वं त्यज मे प्रसीद वै॥

मेरे सौभाग्य का वर्धन करने वाली एवं सुख सुविधाओं की एकमात्र आनन्ददायिनि हे प्रिये! निर्मलतापूर्वक सरलता से अपने चित्त की कुटिलता को त्याग दो और मुझ पर प्रसन्न हो जाओ।

(82)

परिपीय मनोऽनुमोदते भुवि यस्या मधुरां सुधां शुभाम्।
अयि जीवितुमेष इच्छति न हि तां स्नेहसुधां विना कदा॥

इस धरा पर जिसके मधुर एवं आनन्ददायी रस के पान करने से चित्त आह्लादित होता है हे प्रिये! उस स्नेहरस के बिना यह तुम्हारा प्रिय कभी भी जीना नहीं चाहता।

(83)

हृदयं त्रुटितं सुकोमलं वचनानि स्खलितानि मे प्रिये।
गमनन्तु विरामतां गतं विरहेणैव तवास्य सम्प्रति॥

हे प्रियतम! मेरा कोमल हृदय टूट गया है, वाणी स्खलित हो गयी है, इतना ही नहीं तुम्हारे बिना मेरी गतिशीलता ही समाप्त हो गयी है।

(84)

अनुरक्तिरसे तु यादृशं परमानन्दसुखं प्रजायते।
अयि तद् विरहेऽपि तादृशं द्विगुणं दुःखमतीवकष्टदम्॥

अनुरक्तिरूपी रस में जितनी आनन्ददायी सुख के रस की प्राप्ति होती है हे प्रिये। इसकी विरह वेदना में भी उतना ही अत्यन्त कष्टकारक दुगुना दुःख प्राप्त होता है।

(85)

अनुभूतिसुखं प्रियं तथा भवति प्रेमरसस्य मज्जने।
परमोष्णमये क्षणेऽप्रिये मधुरं शीतजलं प्रियं यथा॥

प्रेमरूपी रस सागर में डुबकी लेने से वैसे ही परम सुख की अनुभूति होती है जैसे परमकष्टदायी भीषण ग्रीष्म में मधुर शीतल जल से।

(86)

अनुरक्तिरसान्वितस्य वै क्रियते मर्दनमप्रियं यदा।
अनुलिप्तपरस्तथा तथा सजलामृत्तिसमा हि जायते॥

प्रेमरस से युक्त व्यक्ति की भावनाओं को जितना-जितना कुचला जाता है वह व्यक्ति गीली मिट्टी की तरह उतना ही उस पर चिपक जाता है अर्थात् उस प्रेमी की मर्दित की जाती हुई गीली मिट्टी के सदृश अवस्था हो जाती है।

(87)

अयि मृत्तिसमा गतिर्मम चरणैर्या परिमर्दिताप्यहो।
न करोति कदापि या भुवि प्रतिरोधं किल तत्प्रति प्रिये॥

हे प्रिये! मेरी अवस्था उस माटी के सदृश है जो पैरों से रौंदे जाने पर भी धरती पर उसका प्रतिकार नहीं करती।

(88)

कथनं तव तत्स्मरामि ते गुणपूजां विदधाम्यहं प्रिये।
किमु ते क्व गता सुभावना महती स्वार्थपरायणेऽवशे॥

स्वार्थपरायण एवं पराधीन हे प्रिये! तुम्हारे उस कथन का मैं स्मरण कर रहा हूँ। जो तुमने कहे थे कि मैं सद्गुणों की अर्चना करती हूँ। परन्तु अब तुम्हारी वह सोच कहाँ गयी।

(89)

यदि गच्छति वक्रतां विधिर्दयिते याति जनोऽपवादताम्।
मधुरापि सुधा प्रयात्यहो विषतां किन्त्वधिकं ततः परम्॥

हे प्रिये! यदि भाग्य वक्र हो जाता है तो मनुष्य लोकापवाद का विषय बन जाता है। अहो मधुर अमृत तक विषत्व को प्राप्त हो जाता है उससे अधिक क्या संभव हो सकता है।

(90)

न सुधा न बुधा न चाभिधा जगति स्नेहविधाश्च मे प्रिये।
न भवन्ति हिताभिलाषिणः प्रतिकूला यदि भाग्यसम्पदः॥

हे प्रिये! यदि भाग्य प्रतिकूल हो जाता है तो अमृत, विद्वद्गण, सामान्यजीवन, स्नेह की प्रक्रियायें आदि कुछ भी कल्याणकारी नहीं होती।

(91)

यदि भोगविलासलिप्सया हृदये प्रेमरसोऽभिवर्धते।
स्थितिरस्य तु यौवने गते शिशिरर्तोस्तरुवद् विलोम्यते॥

हे प्रिये! यदि भोग विलास की इच्छा से हृदय में प्रेमरस वृद्धि को प्राप्त होता है तो यौवन के बीत जाने पर इसकी स्थिति पतझड़ ऋतु के वृक्ष के समान हो जाती है।

(92)

दधती शशिसन्निभाननं वचनन्तत्र सुधामयन्तथा।
प्रतिशोधमयैर्हलाहलैर्विषकन्येव च सैव भासते॥

जो नारी चन्द्रमा के सदृश मुख एवं अमृतमय वचनों को धारण करने पर भी यदि वह प्रतिशोधमय जहर को धारण करती है तो वही नारी विषकन्या सी प्रतीत होती है।

(93)

तव यौवनमत्र वर्तते गरलेनाकुलदुर्मदो यथा।
सकृदेव निपीय भावुकः प्रतियातीति मृतिं प्रति ध्रुवम्॥

हे प्रिये! तुम्हारा यौवन यहाँ विष से संकुलित कुत्सित मद के समान है जिसका सहृदय जन पानकर तुरन्त ही पंचत्व को प्राप्त हो जाता है।

(94)

निजकार्यसुसिद्धये यदि कृतकस्नेहवशाद् यथास्थितिम्।
कुरुते ह्यनुरागमद्भुतं पुरनारीव तदैव सा प्रिया॥

हे प्रिये! यदि कोई नारी अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये कृत्रिम प्रेम प्रदर्शित कर अद्भुत प्रेमक्रीड़ा प्रदर्शित करती है वह प्रेयसी उस समय नगरवधू के समान प्रतीत होती है।

(95)

परिधानमिदं सुधापरं परिधत्से वहिरङ्गमुत्तमम्।
अयि ते हृदयं विलोम्यते मलिनं तद् भुवने कुहूरिव॥

हे देवि! बाह्य रूप में स्वच्छ एवं उत्तम स्वरूप को तुम धारण करती हो परन्तु तुम्हारा हृदय तो संसार में काले बादल के समान मलिन ही दिखाई देता है।

(96)

भ्रमरं त्वरितं विलोकय नगरं तत्परितो भ्रमन्नसौ।
अपवादपदं गतो वृथा विमले चेतसि सत्यपि प्रिये॥

हे देवि! नगर के चारों ओर घूमने वाले इस भ्रमर को तो देखो। बेचारा निर्मल चित्त वाला होने पर भी व्यर्थ ही लोकापवाद का विषय बन गया है।

(97)

अपरं परिपश्य तत्सुमं पवनान्दोलितमत्र यत्सदा।
परितस्तु निमन्त्रयत्यदो निजगेहेऽपि वसन्नलीन् मुदा॥

दूसरी ओर उस कुसुम को भी देखो, जो सदा ही पवन के झोके से आंदोलित अपने निवास स्थान पर वास करते हुये प्रसन्नतापूर्वक चारों ओर से भ्रमरों को आमन्त्रित करता रहता है।

(98)

बहुधा भ्रमरै रसस्य ते मधुपानं विहितं न वा सुम।
परमत्र पुनः पुनः समैर्विषये ते नितरां निगद्यते॥

हे पुष्प! भ्रमरों ने अनेक बार तेरा रसपान किया है अथवा नहीं? किन्तु यहाँ तो निरन्तर बार-बार तेरे विषय में लोकापवाद ही सुनायी पड़ते हैं।

(99)

अयि यै र्भ्रमरैः प्रसून ते परिपीतो मधुरो रसः पुरा।
इह तद्भणितिं भणाम्यहं गदिता त्वद्विषये च या मुहुः॥

हे पुष्प! जिन भ्रमरों ने तेरे पुष्परस का पहले पान किया है वे तेरे विषय में बार-बार जो कथा कहते हैं उसे मैं बताता हूँ।

(100)

निजकार्यसुसिद्धये सखे भ्रमरेभ्यो भुवने यदा कदा।
स्वपरागमिमं सुधापरं किमयच्छन्न हि तत्सुमेन वै॥

हे सखे! इस धरती पर अपने कार्य की सफलता हेतु क्या उस पुष्प ने यदा कदा अपने इस अमृतमय पराग को भ्रमरों को नहीं दिया।

(101)

भ्रमरैः कुसुमेन यैः सखे निजकार्यं सफलीकृतं यदा।
त्वरितं किल तेभ्य एव तद् विमुखीकृत्य गतं परं प्रति॥

हे सखे! जब पुष्प ने भ्रमरों से अपना स्वार्थ सिद्ध कर लिया। तब वह उनसे विमुख होकर दूसरे की ओर उन्मुख हो गया।

(102)

चतुरेण सुमेन सम्प्रति पवनव्याजमहो निगद्य वै।
व्यथिताद्भ्रमरान्निजं मनः विमुखीकृत्य कृतञ्च दुष्कृतम्॥

अहो! अब कुशल सुमन ने वायुवेग के बहाने से व्यथित भ्रमर से अपने मन को विमुख कर अत्यन्त निष्कृष्ट कार्य किया है।

(103)

सुम सौरभगर्वदुर्भरादपमानं क्रियतेऽस्य यद्भुवि।
विगते तव सौरभे परं चरणैस्त्वं न विनाशमेष्यसि॥

हे कुसुम! अपनी सुगन्ध के मद के वशीभूत होकर इस धरती पर तुमने इस भ्रमर का जो असह्य अपमान किया है, तुम्हारी सुगन्ध के समाप्त हो जाने पर क्या तुम लोगों के पैरों से नहीं कुचले जाओगे।

(104)

भ्रमरैर्भ्रमणं समीक्ष्य किं कुसुम स्वं परितो निरन्तरम्।
अभिमानपदं गतोऽसि चेद् भ्रम एवात्र तवैव वर्तते॥

हे कुसुम! अपने चारों और निरन्तर भ्रमरों के भ्रमण देखकर यदि तुम गर्वित हो रहे हो तो यह तुम्हारा भ्रम मात्र ही है।

(105)

समयस्त्वयि नैकधा प्रियः भुवि नो पुष्प कदापि दृश्यते।
सदयभ्रमराय साम्प्रतं वितर त्वं स्वपरागमुत्तमम्॥

हे पुष्प! अभीप्सित समय कभी भी एक जैसा नहीं रहता। इसलिए तुम वर्तमान में अपने प्रिय पराग को दया के पात्र भ्रमर को प्रदान करो।

(106)

अयि मानस मा वहाधुनाऽधिगतं दुखमिदञ्च तां प्रति।
शुभवस्तुविशेषदुःखदा गतिरेषात्र विधेस्तु कर्मणाम्॥

हे मन! उस प्रिया से प्राप्त इस दुःख को तू धारण मत कर। इस संसार में विधाता के विधान की यही व्यवस्था है कि शुभ वस्तु ही विशेष दुःखदायिनी होती है।

(107)

न विधेहि वसन्त चेतसि सुहृदावाप्तकुदुःखवेदनाम्।
समयः कुरुते यथायथं मनसा स्वीकुरु तन्मुदा मुदा॥

हे वसन्त! मित्रों से प्राप्त परम कष्ट की वेदना को चित्त में धारण मत करो। समय जो भी जिस प्रकार से करता है उसे वैसे ही प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लो।

(108)

सकलं भुवनं सुधामयं विदधाति प्रियसौरभेण यः।
किमु नैव वसन्तमुत्तमं समयो ह्याक्रमते स्वचक्रतः॥

जो वसन्त प्रिय सुगन्ध से समस्त लोक को सुवासित करता है क्या (काल) अपने चक्र से उसका अतिक्रमण नहीं करता।

(109)

कलिके कवलं करिष्यति कलिकालः कुकृतैः कलङ्कितः।
वपुषः कतमक्षणे तव न हि जानाति च कोऽपि मानवः॥

हे कलिके! दुष्कृत्यों से कलकिंत कलिकाल किस समय तुम्हारे शरीर को अपना ग्रास बना लेगा? यह कोई भी मनुष्य नहीं जानता।

(110)

अयि यस्य कृपावशादसि कलिके यद् भुवि गर्वमागता।
स्थितिरेव विधेर्वशाद् स्थिरा न वसन्तस्य हि तस्य वर्तते॥

हे कलिके! जिस वसन्त की कृपा के कारण इस धरती पर तुम मदोन्मत्त हो रही हो उस वसन्त की ही स्थिति विधाता के विधानानुसार ही स्थिर नहीं है। तो तुम्हारी कथा ही क्या।

(111)

समयः समयो हि वर्तते सहसायाति तथा प्रयाति च।
अगतेः समयस्य तां गतिं न हि वेत्तुं भुवि सक्षमो जनः॥

समय-समय ही होता है अचानक आता है और चला जाता है। पर अनागत समय की उस गति को इस धरा पर सामर्थ्यवान् मनुष्य भी नहीं जान पाया है।

(112)

भुवि को न हि वेत्ति तां कथां समयस्य स्थितिसम्प्रदर्शिकाम्।
अयि दाशरथिर्यदाभवद् दयितादुःखविशेषपीडितः॥

समय की महिमा को दर्शाने वाली उस कथा को संसार में कौन नहीं जानता? जब श्री राम जी पत्नी वियोग के दुःख विशेष से पीड़ित हुये थे।

(113)

समयस्तव वेद्मि तद् बलं कुरुषे येन महालयं क्षणे।
परमत्र दयार्थिने च मे दयया देहि दयावलवम्बनम्॥

हे समय! मैं तुम्हारी उस शक्ति को जानता हूँ जिससे तुम क्षणभर में प्रलय कर देते हो। किन्तु यहाँ तो मुझ दया के इच्छुक को दयापूर्वक अपनी दया का आश्रय दो।

(114)

समये प्रतिकूलतां गते सदयास्ते सुहृदोऽपि तत्क्षणम्।
परिवादपरा भवन्ति हि नितरां ये हितकाङ्क्षिणः पुरा॥

समय के प्रतिकूल हो जाने पर सहृदय एवं निरन्तर हित चाहने वाले मित्र भी तत्क्षण निन्दा करने लग जाते हैं।

(115)

अत एव विहाय सत्वरं निजमानं कलिके सुकोमले।
शशिना सह कौमुदीसमा त्वमये स्वं दयितं प्रति व्रज॥

अतएव हे सुकोमल कलिके! तुम शीघ्र ही अपने मान को त्यागकर अपने प्रिय के पास उसी प्रकार गमन करो जिस प्रकार चन्द्रमा के साथ उसकी कौमुदी जाती है।

(116)

क्षणभङ्गुरमस्ति जीवनं क्षणिकं तत्र विभाति यौवनम्।
प्रमदेऽत्र मदोऽपि वर्तते क्षणिनीतुल्यमतीवनश्वरम्॥

हे प्रमदे! पहले तो जीवन ही क्षणभंगुर है उस पर भी यौवन और भी क्षणिक है इसमें भी यौवन का मद विद्युत्वत् अत्यन्त क्षणिक है।

(117)

अत एव मदोन्मदं शुभे निजमानं परिहाय सत्वरम्।
अनुरागमिमं सनातनं सदये त्वं भज देवि शाश्वतम्॥

इसलिये हे दयामयि! देवि! अपने मदोन्मत्त मान को शीघ्र ही त्यागकर इस चिरन्तन अनुराग का तुम निरन्तर सेवन करो।

(118)

मुदिते त्वयि रे ममोपरि ह्युपकारः किमयं कृतस्त्वया।
अयि मे विरहाकुलात्मकं यदयच्छश्च कषायितं विषम्॥

हे प्रिये! तुम्हारे मेरे ऊपर प्रसन्न होने पर तुमने मुझपर कौन सा उपकार कर दिया जो तुमने मुझे विरहाकुल कड़ुवा विष दिया है।

(119)

अयि जीवननाट्यनर्तक? मम वाक्यस्य रसामृतं पिब।
अनुरागरसानुवञ्चनं मरणाच्चापि विशिष्यते सखे॥

हे जीवनरूपी नाटक के नर्तक! मेरे वचनामृत पान कर। हे सखे! अनुरागरस से वंचित होना मृत्यु से भी बढ़कर है।

(120)

ललना छलनापि वर्तते सरसा वापि च नीरसापि वा।
अबला सबलापि वर्तते सरला सा कुटिलापि वर्तते॥

नारी ललना भी है और छलना भी है सरस भी है और नीरस भी है। अबला भी है और सबला भी है सरल भी है और कुटिल भी है।

(121)

अत एव मदीयसद्वचः शृणु रे मित्र हितोपदेशकम्।
ललनां छलनां समीक्ष्य वै सुमुखीं पावनचेतसीं भज॥

अतएव हे मित्र! मेरे हितकारक वचनों को सुनों, ललना एवं छलना दोनों रूपों की सम्पक् प्रकार से समीक्षा करके पवित्र हृदय वाली सुमुखी का ही ध्यान करो।

(122)

अयि देहि यथेप्सितञ्च ते नियते! तत्कृतकर्मणां फलम्।
परमत्र न देहि हे विभो? भुवि तस्मै तु वियोगजां व्यथाम्॥

हे विधाता! उस प्रेमी प्राणी के कर्मों का फल जैसी आपकी इच्छा हो वैसा ही दो। किन्तु हे प्रभो। इस धरती पर उसे विरह से उत्पन्न कष्ट मत देना।

(123)

कथयामि युवव्रजं मुदा शुभसन्देशमिमं मनोहरम्।
तव रागरसैकरञ्जितं भवतु प्रेम सुधामयं सदा॥

मैं युवकों के लिए प्रसन्नता से यह मनोहर एवं शुभ सन्देश देता हूँ कि उनका अनुरागरस से आप्लावित प्रेम सदा ही अमृत स्वरूप हो।

(124)

मनसा वचसापि कर्मणा कविरेष स्वकृतिं शुभामिमाम्।
मुदितेन हृदार्पयत्यहो सदयां तां दयितां सुधामयीम्॥

यह कवि् अपनी इस शुभकृति को मन, वचन एवं कर्म से प्रसन्न हृदय से उस अमृतवर्षिणी अपनी दयिता को अर्पण करता है।

(125)

अयि मित्र वियोगिनीलये विरहार्तस्य दशाप्रदर्शिका।
लिखिता विरहिव्यथाकथा कविनानेन वियोगिनां कृते॥

हे मित्र? मैंने वियोगिनी छन्द में विरहातुर प्रेमी की दशा को प्रदर्शित करने वाली वियोगी की व्यथा कथा को वियोगी जनों के लिये लिखी है।

(126)

कविना गढ़वालवासिना ननु दिल्लीनगरीप्रवासिना।
कवितावनितासुधारिणा लिखितैषा प्रियभव्यभावना॥

"इति समाप्तम्"

दिल्ली नगरी में रहने वाले कवितारूपी वनिता को धारण करने वाले गढ़वालवासी मुझ श्रीकृष्ण सेमवाल कवि ने प्रिय एवं भव्यभावना से परिपूर्ण यह रचना लिखी है।

संघे शक्तिः कलौ युगे

1. संघे शक्तिः कलौ युगे

संघे शक्तिः कलौ युगे

(1)

पूज्यां परां सर्वगुणैकरूपां,
कल्याणभावां कविकर्मदक्षाम्।
ध्यात्वाम्बिकां स्वां परमोत्तमां तां,
गायामि संघस्य पवित्रगाथाम्॥

सर्वोत्कृष्ट, सर्वगुणैकरूप, परम पूज्य एवं निरन्तर कल्याणभावों वाली कवि-कर्म में दक्ष माँ जगदम्बा का ध्यान करता हुआ मैं संघ की पवित्र गाथा का वर्णन कर रहा हूँ।

(2)

लोके प्रसिद्धं सकलाग्रगण्यं,
पुण्यात्मकं भारतवर्षमेतत्।
राज्यं सुराणामपि वन्दनीयं,
राराजते सर्वविधं विशिष्टम्॥

विश्व के समस्त देशो में पुण्यरूप, समस्त देवगणों द्वारा वन्दनीय यह भारत देश सभी प्रकार की महनीयता एवं विशिष्टता को लिए हुए शोभायमान हो रहा है।

(3)

यस्यास्य देशस्य मनोहराणि,
गायन्ति गीतानि गुणोज्ज्वलानि।
काव्यात्मकान्यत्र सदा कवीन्द्रास्,
तं भारतं नौमि शुभं स्वदेशम्॥

जिस देश के मनोहर एवं गुणोज्ज्वल गीतों को कविगण काव्यात्मक रूप में निरन्तर गाते रहते हैं, उस कल्याणकारी अपने प्रिय भारत देश को मैं सादर प्रणाम करता हूँ।

(4)

यस्योत्तरस्यां दिशि दिव्यवेषो,
देदीप्यते दीप्तिमतां विशेषः।
उत्तुङ्गश्रृङ्गो हिमवान्नगेशः,
सोऽयं मदीयो जयतात्स्वदेशः॥

जिस देश की उत्तर दिशा में दिव्य वेषधारी, दीप्तिमानों में विशिष्ट रूप से देदीप्यमान, अत्युन्नतशिखरों से सुशोभित, हिमाच्छादित पर्वतराज हिमालय विराजमान है; वह मेरा प्यारा भारत देश विजयोत्कर्ष को निरन्तर प्राप्त करता रहे।

(5)

नद्यः समस्ताः कलिकल्मषघ्न्यो,
गङ्गादयः पूतजलप्रवाहाः।
मान्याः वदान्याः प्रवहन्ति यत्र,
तद् भारतं नौमि शुभं स्वदेशम्॥

जिस देश में कलियुग के समस्त पापों को धोने वाली पवित्र जलप्रवाह वाली श्रेष्ठ एवं सम्माननीया गङ्गादि नदियाँ अनवरत बहती रहती हैं; उस अपने प्यारे भारत देश को मैं सादर प्रणाम करता हूँ।

(6)

शोभां विशिष्टां हरितानि तानि,
क्षेत्राणि सर्वाणि मनोहराणि।
देहस्वरूपेण विकासयन्ति,
यस्मिन् प्रिये भारतवर्षदेशे॥

जिस प्यारे भारत देश में विशेषद्युति को धारण करते हुए सुन्दर एवं हरित वर्ण वाले लहलहाते खेत देहरूप में विकसित हो रहे हैं, उस भारत देश को मैं सादर प्रणाम करता हूँ।

(7)

चण्डप्रचण्डोऽपि गभीरभावः,
प्रारम्भतो हिन्दमहासमुद्रः।
प्रक्षालयत्यत्र सुहिन्दुभूमेः,
पादौ पवित्रावतिनम्रभावैः॥

अनन्त काल से प्रचण्ड रूप को धारण करता हुआ भी अत्यन्त गम्भीर स्वभाव वाला समुद्र जिस भारत भूमि के पवित्र चरणों को अतीव विनम्रभाव से प्रक्षालित करता आ रहा है, उस भारत देश को मैं सादर प्रणाम करता हूँ।

(8)

धान्यैः धनैर्वा फलपुष्पशाकैः
कल्पप्रकल्पैर्निखिलै र्विकल्पैः।
सुवर्णवर्णा सुखदा सुरम्या,
ह्यासीदियं भारतवर्षभूमिः॥

धन-धान्य एवं नाना प्रकार के फल-पुष्प व शाक से परिपूर्ण, विविध प्रकार के प्रकल्पों के द्वारा अनुपम सौन्दर्य एवं सुखसमृद्धि से सम्पन्न यह भारत भूमि स्वर्णधरा के रूप से प्रसिद्ध थी।

(9)

विश्वासभासैः परिभासमानाः,
श्रद्धासमुल्लासभराः प्रसन्नाः।
हिन्दूजना अत्र सुखप्रपन्नाः,
सानन्दरूपेण विराजमानाः॥

परस्पर विश्वास से परिभासित, श्रद्धा एवं उत्साह से युक्त, प्रफुल्लित, समस्त हिन्दू समाज सुख-पूर्वक आनन्द सहित इस भारत भूमि मे सुशोभायमान हो रहा था।

(10)

साहित्यसंस्कारसुसंस्कृतीनां,
सम्पोषणे सर्वविधानुरक्ताः।
ज्ञानप्रकाशेन विकासमानाः,
भक्ताः सुशक्ताः किल हिन्दवोऽत्र॥

कल्याणकारी साहित्य, पवित्र संस्कार एवं आदर्श संस्कृति के सम्वर्धन व परिपोषण में अनुरक्त तथा ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित सशक्त हिन्दुजन इस भारत भूमि में सानन्द निवास कर रहे थे।

(11)

सत्तायाः सुखभोगलोभनिरतैरेभिः समैः शासकैः,
यद् यत्तैः विहितं परस्परमहो स्वैर्बन्धुवर्गैः सह।
तेषां वृत्तिरमुं विलोक्य मुगलैराक्रम्ययोऽयं घृतः,
तेनैवं परतन्त्रतामुपगतो देशो मदीयः प्रियः॥

राज्य की सत्ता के सुखभोग के लोभ में व्यस्त इस देश के समस्त शासकों ने अपने बन्धुओं के साथ परस्पर युद्ध किये। उनकी इस प्रकार की प्रवृत्ति को देखकर मुगल शासकों ने भारत पर आक्रमण किया, उसी से हमारा प्यारा भारत वर्ष परतन्त्रता को प्राप्त हुआ।

(12)

सत्तायाः चिररक्षणाय यवनैः हा हन्त देशे तदा,
निष्पापः सरलश्च पावनमना हिन्दुसमाजस्तथा।
आघातप्रतिघातघातनिचयैनानाविधैदुःखदैः,
सन्तापैः परिपीडितः पुनरहो भूयोऽपि भूयो भुवि॥

अत्यन्त कष्ट से लिखना पड़ रहा है कि यवन शासकों ने चिरकाल तक सत्ता को बनाए रखने के लिए निष्पाप सरल एवं पवित्र हृदय वाले हिन्दुओं को आघात प्रतिघातादि प्रहारों के समूह से नाना प्रकार के दुःखों को प्रदान करने वाले सन्तापों से बार-बार परिपीड़ित किया।

(13)

हिन्दुत्वनाशाय कृतप्रयत्नैः,
वैदेशिकैः दानवयावनै र्नु।
कालक्रमैर्हा कवलीकृतेयं,
भव्या प्रिया भारतवर्षभूमिः॥

हिन्दुत्व के विनाश के लिए भरसक प्रयत्न करने वाले इन विदेशी क्रूर मुगल शासकों ने समयक्रम से सुन्दर एवं प्रिय भारत भूमि को निगल लिया।

(14)

भ्राष्ट्रेषु शास्त्राणि विनाशितानि,
नष्टीकृतान्यस्य सुमन्दिराणि।
धर्मस्य नाशश्चरितस्य नाशः,
को वा विनाशो विहितो न दुष्टैः॥

अत्युत्कृष्ट शास्त्रों को जलाया, सुन्दर मन्दिरों को नष्ट किया, सद्धर्म का नाश किया, सच्चरित्र का भी नाश किया, इन मुगल शासकों ने इस देश का क्या नाश नहीं किया।

(15)

अस्तित्वमासीत् परिशिष्टरूपं,
देशस्य रम्यस्य यदत्र किंचित्।
तस्यैव नाशाय महान् प्रयत्नः,
कृतस्तथैवांगलशासनेन ॥

इन मुगल शासकों की दृष्टि से बचकर भारत का जो भी अस्तित्व शेष बचा था, उसके विनाश के लिए अंग्रेजों ने महान् प्रयत्न किये।

(16)

गौराङ्गकैः कल्मषकूटकृत्यै-
दुष्टप्रवृत्तैश्चरितैः विचित्रैः।
स्वर्णप्रदा भूमिरियं समृद्धा,
हृता समस्तापि शनैः छलेन॥

अंग्रेजों ने अपने कलुषित क्रूरकर्म एवं निकृष्ट आचरण वाले विचित्र चरित्र के द्वारा सुख-समृद्धि से युक्त इस समस्त भारत भूमि को छल से धीरे-धीरे हर लिया।

(17)

भाषा हृता चारुचरित्रचित्रा,
कृत्यानि भव्यान्यपि तै र्हृतानि।
आचारसंस्कारविचारसाराः,
सर्वेऽपि तै र्भारततो हृता हा॥

इन अंग्रेजों ने सुन्दर चरित्र से चित्रित भारतीय भाषाओं को नष्ट किया और भारत वर्ष के उज्ज्वल चरित्र को दूषित किया। भारतीय आचार-विचार एवं पवित्र संस्कारों वाली शृंखला को ध्वस्त किया। इस प्रकार भारत के समस्त आदर्श चरित्र को सम्पूर्ण रूप से समाप्त करने का प्रयास किया।

(18)

आदर्शसंस्कारगुणैकपूता,
ज्ञानामृतैः गौरवगर्विता या।
सर्वोज्ज्वलेयं सुपरम्परा नः,
हा पामरैः सापि हृता समस्ता॥

आदर्श संस्कारों से परिपूत, ज्ञानामृत के गौरव से गर्वित हम भारतीयों की जो सर्वोज्ज्वल परम्पराएं थी, उन सबको इन निकृष्ट शासकों ने नष्ट कर दिया।

(19)

या संस्कृतिः भारतवैभवस्य,
संरक्षणं नित्यमहो करोति।
तस्याः विनाशाय कृतप्रयत्नैः,
किन्तैः कृतं नात्र महत्कुकृत्यम्॥

जो संस्कृति भारतीय वैभव का निरन्तर संरक्षण एवं सम्वर्धन करती थी, उसके विनाश के लिए प्रयत्नशील इन अंग्रेजों ने अपने कुकृत्यों द्वारा क्या-क्या नहीं किया।

(20)

वैदेशिकैस्तापविशेषदग्धं,
संवीक्ष्य हा भारतवर्षमेतत्।
देशानुरागैरनुबद्धचित्तं,
जातं जनस्यात्र महाप्रतप्तम्॥

विदेशियों के परिताप से विशेषरूप दग्ध इस भारत वर्ष को देखकर देशानुराग से अनुरक्त चित्तवाले देशभक्तों का हृदय अत्यन्त परितप्त हुआ।

(21)

तेष्वेकवीरः प्रबलोऽतिधीरः,
श्रीहेडगेवारपदाभिधानः।
बाल्यात्प्रभृत्येव किल प्रवृत्तो,
दुःशासनस्यास्य विनाशनाय॥

इन देशभक्तों में एक अत्यन्त धैर्यवान्, बलिष्ठ एवं परमवीर श्री बलिराम केशवराम हेडगेवार थे। यह महनीय व्यक्तित्व वाला हेडगेवार बाल्यकाल से अंग्रेजों के इस दुःशासन को नष्ट करने के लिए कृतप्रतिज्ञ हो गया।

(22)

दीनोऽप्यसौ बुद्धिमतां वरिष्ठः,
कर्तव्यनिष्ठो वचसा बलिष्ठः।
श्रेष्ठश्च शिष्टश्च जयेज्जगत्यां,
श्रीहेडगेवारपदेन पूज्यः॥

दीन होने पर भी बुद्धिमानों में अतिशयवरिष्ठ एवं वाणी के धनी, श्रेष्ठ, शिष्ट परमपूज्य श्री हेडगेवार संसार में विशेषोत्कर्ष से विराजमान हों।

(23)

दुःशासनैः भारतदुर्व्यवस्थां,
संवीक्ष्य चैतान्प्रति तस्य चित्तम्।
चाञ्चल्यभावं परिहाय बाल्यं,
विद्रोहरूपं त्वरितं जगाम॥

अंग्रेजों के दुःशासन से भारत की दुर्व्यवस्था को देखकर श्री हेडगेवार का मन बालचापल्य को छोड़कर इनके प्रति विद्रोहात्मक हो गया।

(24)

दुःशासनस्यास्य विनाशनाय,
संघर्षशीलाय च केशवाय।
देव्या भवान्या भुवने प्रदत्ता,
शक्तिश्च युक्तिश्च तथैव भक्तिः॥

माँ भगवती जगदम्बा ने संसार में अंग्रेजों के दुःशासन के विनाश के लिए संघर्ष करने के लिए श्री केशव को भक्ति, युक्ति एवं शक्ति प्रदान की।

(25)

दुस्तन्त्रतन्त्रात्मकपाशबद्धां,
विलोक्य सौम्यां निजमातृभूमिम्।
तन्मोचनार्थन्तु दृढप्रतिज्ञः,
बालो जयेत् केशवनामधेयः॥

दुःशासन परक शासन रूपी रस्सी से बंधी सौम्य एवं प्रिय अपनी मातृभूमि को देखकर उसकी मुक्ति के लिए दृढप्रतिज्ञ केशव नामक बालक विजयोत्कर्ष को प्राप्त करे।

(26)

विद्यालये बालकरूपतोऽपि,
स्वातन्त्र्यतन्त्रस्य विकासनाय।
आन्दोलनानि प्रचुराणि तेन,
संचालितानि ह्यतिकौशलेन॥

विद्यालय में अध्ययन करते हुए भी देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए बालक रूप में भी उस केशव ने अत्यन्त कुशलता से बहुत से आन्दोलनों का सञ्चालन किया।

(27)

गम्भीरभावेन च धैर्यवृत्या,
माधुर्यसम्मोहनवाक्यवृन्दैः।
देशानुरागाय विबोधयन्स,
सर्वत्रनिर्भीकधिया सुलग्नः॥

गम्भीर स्वभाव, धैर्यवृत्ति, मधुर एवं सम्मोहक वचनामृतों से देश-प्रेम के लिए जनता को जागृत करता हुआ वह सर्वत्र निर्भीक बुद्धि से देश सेवा में तत्पर दिखाई दिया।

(28)

विलोक्य कार्याणि भयावहानि,
स्वाधीनतायै ननु केशवस्य।
दुःशासनं भीतिपरं प्रजातं,
गौराङ्गकानामिह भारतेऽस्मिन्॥

श्री केशव के स्वतन्त्रताप्राप्तिपरक नाना प्रकार के भयावह कार्यों को देखकर इस भारत में अंग्रेजों का शासन भयभीत हो उठा।

(29)

अस्य क्रियासु प्रतिबन्धनाय,
युक्ताः नियुक्ताः सुचरास्तदात्र।
यातस्ततोऽयं पठनाय वङ्गान्,
प्राप्तुं चिकित्सापरकां सुशिक्षाम्॥

श्री केशव की शासन विरोधी गतिविधियों को देखकर उन पर प्रतिबंध लगाने के लिए अंग्रेज शासन ने सुयोग्य एवं उपयुक्त गुप्तचरों को नियुक्त किया। इस स्थिति को ध्यान में रखकर वह चिकित्साशास्त्र के अध्ययन हेतु बंगाल चले गये।

(30)

तत्रापि तेनाधिककौशलेन,
स्वातन्त्र्ययुद्धस्य कृतं सुकार्यम्।
येन प्रजारञ्जनकर्मकर्त्रा,
स्नेहप्रसादोऽत्र सपद्यवाप्तः॥

वहाँ भी श्री हेडगेवार ने अत्यन्त कुशलता से स्वतन्त्रता सम्बन्धी युद्ध का सुचारु रूप से सञ्चालन किया, जिससे प्रजानुरञ्जनकर्ता श्री हेडगेवार को वहाँ की जनता का अपार स्नेह प्राप्त हुआ।

(31)

सम्पूर्णशिक्षामधिगत्य मान्यः,
श्री हेडगेवारपदाभिधोऽयम् ।
कर्मस्थलं नागपुरं स्वकीयं,
सद्यो ययौ स्वात्मनि सन्निविष्टः ॥

माननीय श्री हेडगेवार बंगाल से चिकित्सापरक सम्पूर्ण शिक्षा को प्राप्त कर आत्मनिष्ठ होते हुए पुनः अपनी जन्मभूमि एवं कर्मभूमि नागपुर लौट आये।

(32)

उपगते किल नागपुरे पुरे,
विजयतां जयतात्प्रियकेशवः ।
ध्वनिभरैः मधुरैः वचनामृतैः,
जनवैररखिलैरभिनन्दितः ॥

श्री हेडगेवार के नागपुर शहर में पहुँचते ही समस्त नागपुर की जनता ने श्री केशव की 'जय हो जय हो' के उद्घोष के द्वारा तथा अपने मधुर वचनामृत से श्री केशव का हार्दिक अभिनन्दन किया।

(33)

निजसुतं परिवीक्ष्य चिकित्सकं,
प्रमुदिता जननी जनकोऽपि सः ।
त्रिदिवतोऽपि सुताय शुभाशिषो,
ददतुरस्यकृते पितरौ तदा ॥

अपने प्रिय पुत्र को सुयोग्य चिकित्सक के रूप में देखकर श्री केशव के माता-पिता परम प्रसन्न हुए, और स्वर्ग से ही उन्होंने अपने प्रिय पुत्र को शुभाशीर्वाद प्रदान किया।

(34)

गौरांगरोगात् परिपीडितोऽस्ति,
पूज्यः प्रियो भारतदेश एषः।
अवश्यमस्यैव मया चिकित्सा,
पूर्वं विधेयेति स निश्चिकाय॥

अंग्रेजों के रोग से वर्तमान में हमारा प्यारा भारत देश परिपीड़ित है, अतः इस रोग की चिकित्सा प्रथम मुझे करनी चाहिए ऐसा उसने निश्चय किया।

(35)

राष्ट्रस्य कल्याणपरम्परायाः,
वृत्तिं सुतस्यास्य विचार्य चित्ते।
आदिष्टवन्तौ पितरौ सुतं तं,
प्रसन्नभावैरिव देवलोकात्॥

हृदय में अपने प्रिय केशव की राष्ट्र के कल्याण-परम्परा की वृत्ति को विचारकर प्रसन्नचित से दोनों माता-पिता ने देवलोक से ही उसे शीघ्र ही राष्ट्र के कल्याण के कार्य की अनुमति प्रदान की।

(36)

पितरौ त्रिदिवंगतावपि,
चरितैस्स्वैः परितोषयन्सदा।
निजजीवनमुत्तमन्तदा,
त्वरितन्तेन तदर्थमर्पितम्॥

श्री केशव ने हृदय में राष्ट्र-सेवा भाव की वृत्ति से स्वर्गस्थ माता-पिता को सन्तुष्ट कर अपने अत्युत्तम जीवन को शीघ्र ही राष्ट्र के लिये समर्पित किया।

(37)

अथ भारतकीर्तिकीर्तनं,
जनतायाः ममतार्जनं पुनः।
अरिदुर्मदमानमर्दनम्,
प्रथमं कर्म स वेद केशवः॥

अपने देश के गौरव के गीतों का गायन करना, जनता की ममता प्राप्त करना, दुश्मनों के मद का मर्दन करना ही श्री केशव ने अपना प्रथम कर्तव्य समझा।

(38)

ननु कर्म कृतं सुनिष्ठया,
सुधिया ध्येयसुवृत्तिना तथा।
अपि शाश्वतमूल्यशालिना,
सुहृदा तेन सुराष्ट्रमालिना॥

विवेक से, निष्ठा से एवं ध्येय वृत्ति से शाश्वत मूल्यशाली इस राष्ट्रमाली ने पवित्र हृदय से शीघ्र ही लोक चिन्तन का कार्य प्रारम्भ किया।

(39)

अस्मिन्महान्दोलनसागरे तां,
प्रारम्भतश्चैव विलोक्य वृत्तिम्।
अत्यल्पसंख्यात्मकलोकतुष्टेः,
मनोऽस्य जातं नितरां वितृष्णम्॥

स्वतन्त्रता के आन्दोलनरूपी इस महासागर में प्रारम्भ से ही नेताओं की अल्पसंख्यक समूह को निरन्तर सन्तुष्ट करने की प्रवृत्ति को देखकर श्री केशव का मन ऐसे लोगों के प्रति वितृष्ण हो गया।

(40)

भारतस्यात्मभूतानां,
हिन्दूनां गौरवाय हि।
स्वयंसेवकसंघस्य,
स्थापना विहिता तदा॥

तदनन्तर श्री केशव ने भारत की आत्मा के रूप में विराजमान हिन्दुओं के गौरव के वर्धन करने के लिए राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की स्थापना की।

(41)

चरित्रस्य विकासाय,
सर्वभावेन सर्वदा।
संघोऽयं वर्तते लोके,
लोककल्याणकारकः ॥

मनुष्य के सर्वतोभावेन चरित्र के विकास के लिए निरन्तर प्रयत्नशील लोककल्याणकारी संघ है। यह उद्घोष श्री केशव ने किया।

(42)

नैतिकानां सुमूल्यानां,
साधूनां रक्षणाय च।
संघसिद्धान्त एवैष,
सम्मानसम्प्रदायकः ॥

नैतिक मूल्यों की एवं सज्जनों की रक्षा करना तथा समस्त मानव को सम्मान प्रदान करना ही संघ का प्रथम सिद्धान्त है।

(43)

दलिताः पीडितास्तप्ताः,
दुःखिताः येऽत्र हिन्दवः।
तेषां सम्मानवृद्ध्यर्थं,
संघः संस्थापितस्तदा॥

श्री केशव ने दलित, पीड़ित, परितप्त एवं दुःखित हिन्दुओं के मानवर्धन के लिए संघ की स्थापना की।

(44)

विश्वेऽस्मिन् पूजनीया या,
भारतीया सुसंस्कृतिः।
तस्याः संरक्षणार्थं हि,
संघः संस्थापितो मुदा॥

समस्त संसार में पूजनीय भारतीय संस्कृति के संरक्षण के लिये श्री केशव ने संघ की स्थापना की।

(45)

उत्तमां विमलां रम्यां,
मानवीयगुणोत्तमाम्।
श्रेष्ठां परम्परां पातुं,
संघः संस्थापितो भुवि॥

मानवीय गुणों से परिपूर्ण, उत्तम, विमल, सुन्दर एवं श्रेष्ठ जो भारतीय परम्परा है श्री केशव ने, उसके संरक्षण के लिए ही संघ की स्थापना की।

(46)

योगक्षेमायराष्ट्रस्य,
केशवेन महात्मना।
संघः संस्थापितो लोके,
सर्वोत्थानपरः परः॥

महान् तपस्वी श्री केशव ने भारत के सर्वतोभावेन योग-क्षेम के लिए संसार में सर्वोत्थानपरक संघ की स्थापना की।

(47)

महिमानन्तु संवीक्ष्य,
सर्वे भारतवासिनः।
संघसंघे समायाताः,
श्रद्धाभावसमन्विताः॥

संघ के महत्त्व को समझ कर समस्त भारतवासी श्रद्धाभाव से परिपूर्ण होते हुए संघ के समूह में सम्मिलित हुए।

(48)

बालाः वृद्धाः युवानश्च,
देशरागानुरञ्जिताः।
संघस्य सम्प्रचारार्थं,
शीघ्रमेव समागताः॥

देशानुराग से अनुरञ्जित भारत वर्ष के आबाल वृद्ध सभी शीघ्राति-शीघ्र संघ के प्रचार में कूद पड़े।

(49)

परं वैभवसम्पन्नं,
भारतं वीक्षितुं प्रियम्।
कृतं स्वात्मार्पणं सद्यः,
संघाय युवकैः समैः॥

अपने प्यारे भारत वर्ष को परम वैभव से सम्पन्न देखने की प्रिय भावना से समस्त भारतीय युवकों ने शीघ्र ही संघ के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया।

(50)

आर्यधर्मस्य रक्षार्थं,
प्राणिनां त्राणहेतवे।
संघः संस्थापितो लोके,
राष्ट्रभक्त्या विभूषितः॥

आर्य धर्म की रक्षा के लिये तथा प्राणिमात्र की सुरक्षा के लिये राष्ट्रीय भावों से परिपूरित संघ की स्थापना की गई।

(51)

देहे रोगविहीनत्वं,
मानसे स्वच्छता तथा।
आध्यात्मिकविकासश्च,
परमावश्यको भुवि॥

मनुष्य के शरीर में नीरोगता, मन में पवित्रता और आत्मा का विकास अर्थात् आध्यात्मिक उन्नति अत्यन्त आवश्यक है।

(52)

तदर्थं चिन्तितं तेन,
योगिना सूक्ष्मदृष्टितः।
केनोपायेन साफल्यं,
योजनैषा गमिष्यति॥

उस (कर्म) योगी ने बारीकी से सोचा कि ऊपर लिखी तीनों बातों को प्राप्त करने की योजना किस प्रकार सफल हो सकती है।

(53)

संघसेवकवृन्दानां,
मार्गसन्दर्शनाय च।
स्थाने स्थाने तु शिक्षार्थं,
शाखाः संघस्य योजिताः॥

उस (कर्म) योगी ने 'संघ' के स्वयं सेवकों को मार्गदर्शन देने के लिये स्थान-स्थान पर 'संघ' की शाखायें स्थापित की।

(54)

अहो लोके पूजा भवति यदि या व्यक्तिपरका,
महत्त्वाकांक्षां सा जनयति च वाञ्छां मदमपि।
अतः संघेनाङ्गीकृतमिहविधानं दृढतरं,
ध्वजस्यैवार्चा सा विलसतु सुशाखासु सततम्॥

संसार में क्योंकि व्यक्ति पूजा से महत्वाकांक्षा और अहंमन्यता का विकार उत्पन्न होता है, इसलिये 'संघ' ने दृढ़ता पूर्वक प्रावधान किया कि इसकी 'शाखाओं' में सदैव केवल (भगवा) ध्वज की ही पूजा देदीप्यमान हो।

(55)

चरित्रचिन्तां परिचिन्त्य चित्ते,
समस्तशाखासु तदर्थमत्र।
प्रशिक्षणं निश्चितमेव तेन,
प्रकल्प एष प्रथमः प्रकल्पितः॥

लोक-चरित्र की रक्षा के बारे में भली प्रकार विचार करके 'संघ' ने अपनी सभी 'शाखाओं' में प्रशिक्षण-शिविरों की मुख्य व्यवस्था की है।

(56)

शारीरिकस्वास्थ्यविवर्धनाय,
व्यायामशिक्षापरकप्रकल्पः।
शाखासु लोकस्य हिताय तेन,
निर्धारितः स्वास्थ्यपरस्तथैव॥

शारीरिक स्वास्थ्य बढ़ाने के लिये जनहित में 'संघ' ने अपनी सभी शाखाओं पर व्यायाम की निश्चित पद्धति (शिक्षण-क्रम) निर्धारित की।

(57)

आध्यात्मिकज्ञानविवर्धनार्थं,
शास्त्रीयचर्चापि नियोजितात्र।
यया स्वयंसेवकसज्जनानां,
बुद्धिः विकासं स्वयमेव याति॥

'संघ' द्वारा आध्यात्मिक ज्ञान बढ़ाने के लिये अपनी सभी 'शाखाओं' पर स्वयं सेवकों की बुद्धि विकास के निमित्त 'शास्त्रीय चर्चा' आयोजित की जाती है जिससे बुद्धि का विकास स्वतः ही हो जाता है।

(58)

अनुशासनमेव जीवनं,
परिचिन्त्य स्वयमेव सत्वरम्।
अनिवार्यमनेन कल्पितं,
निजशाखासु किलास्य पालनम्॥

जीवन में अनुशासन की महत्ता को देखकर, विचार कर 'संघ' ने अपनी शाखाओं में नियमों के पालन को (अनुशासन को) अनिवार्य कर दिया।

(59)

नियमैः विविधैः नियन्त्रिताः,
जनकल्याणपरम्परान्विताः ।
अपि सेवकभावभाविताः,
भुवि शाखाः सकलाःदृढीकृताः॥

अनेक प्रकार के (हितकारी) नियमों के कारण, लोक-कल्याण की भाव-परम्परा के कारण तथा सेवाभाव से परिपूरित होने के कारण सभी जगहों की सभी शाखाएं बहुत सुदृढ़ बनीं।

(60)

शाखामाध्यमतस्समस्तभुवने श्रीकेशवेनाधुना,
हिन्दूजागरणस्य भावविभवः सर्वत्र संचारितः।
राष्ट्रोत्थानविचारसारसरणी तेनैव तेषां हृदि,
सम्प्राप्ता परमोत्तमा दृढतरा हर्षोत्करा हर्षदा॥

श्री केशव (हेडगेवार) जी ने इन शाखाओं के माध्यम से सारे संसार में 'हिन्दू जागरण' के श्रेष्ठ भावों को संचारित किया जिससे सभी भारतीयों के हृदय में अपने राष्ट्र (भारत) के उत्थान के विचारों की भावना की प्रबलता जागी तथा इससे सभी के हृदयों में श्रेष्ठता, दृढ़ता एवं हर्षोत्कृष्टता जागृत हुई।

(61)

गौराङ्गैः सह युद्धकर्मनिरतैः स्वाधीनतासेवकैः,
कर्तव्यानि कृतानि यानि भुवने तैरेव साकञ्च तैः।
शाखादीक्षितसेवकैः बहुविधं दत्त्वा सुयोगं प्रियं,
राष्ट्रादर्शमयं स्वकीयचरितं शीघ्रं हि तै र्दर्शितम्॥

अंग्रेजों के साथ लड़ रहे (संघर्ष कर रहे) स्वाधीनता सेवकों के साथ शाखाओं में प्रशिक्षित 'संघ' के स्वयं सेवकों ने अनेक प्रकार से पूरा सहयोग किया और राष्ट्र के आदर्श स्वरूप अपने चरित्र का समुचित प्रदर्शन किया।

(62)

संघस्याप्रतिमं विलोक्य चरितं संघीयशक्त्यान्वितं,
गान्धीभीमसुभाषचन्द्रसदृशाः श्रीमालवीयादयः।
नेतारः सकला इमे प्रमुदिताः श्रद्धापराः सादरं,
प्रेम्णा तं त्वरितं स्तुवन्ति विविधैर्भावैरजस्रं मुदा॥

अनेकानेक शाखाओं की शक्ति से युक्त 'संघ' की इस अतुलनीय छवि को देखकर महात्मा गांधी, भीमराव अम्बेडकर, सुभाष चन्द्र बोस तथा श्री मदनमोहन मालवीय आदि प्रमुख नेता बहुत प्रसन्न हुए और सम्मान व प्रेम के साथ वे निरन्तर 'संघ' की सराहना करते रहे।

(63)

देशस्यास्य विभाजनोत्थविपदामेवं विधां कष्टदां,
राष्ट्रक्षीणकरां तथा क्षतिकरां दृष्ट्वा परां भीषणाम्।
रोद्धुं तामवसादरूपविपदं दुःखान्यनेकानि तैः,
सम्प्राप्तानि प्रतिक्षणं प्रतिफलं हा हन्त तस्मिन्क्षणे॥

इस देश (भारत) के विभाजन से उत्पन्न अनेक प्रकार की विपदाएं, देश को कमजोर करने वाली व हानि पहुंचाने वाली चेष्टाएं, क्रियाएं, इन सबको देखकर और इनको रोकने के लिये 'संघ' को तुरन्त अनेक प्रकार के दुःखों और कष्टों का सामना करना पड़ा।

(64)

हा दासतायाः निगडाद्विमुक्तिं,
गतोऽपि देशो न कषायितः किम्।
पपात चायं गृहयुद्धवह्नौ,
हा हन्त कष्टं किमतः परं स्यात्॥

पराधीनता की कड़ियाँ के टूट जाने पर भी देश (भारत) को कौन सा सन्ताप नहीं झेलना पड़ा? यह गृहयुद्ध की आग में घिर गया, इससे अधिक कष्ट और क्या होगा!

(65)

विभाजनीया महती प्रपीडा,
प्राप्ता स्वदेशेन तदैव तत्र।
कृत्येन हा भारतभूमिभक्ताः,
दुःखस्य कोटिं परमां प्रविष्टाः॥

भारत के विभाजन से देश को बहुत पीड़ा भोगनी पड़ी। इस कार्य से सभी देशभक्तों के मन को बहुत और हर तरह का कष्ट हुआ।

(66)

नानाभियोगैरपि तप्यमानः,
संघस्तथापि प्रजहौ न धैर्यम्।
असौ स्थितिज्ञो निजमातृभूमेः,
सेवाक्रियातो विचचाल नैव॥

नाना प्रकार के अभियोगों से संतप्त होते हुए भी 'संघ' ने कभी भी धैर्य नहीं छोड़ा और इसने कभी अपनी मातृभूमि (भारत) की सेवा से मुख नहीं मोड़ा।

(67)

प्रतिबन्धनिबन्धनादिकैः,
बहुकष्टैः परिपीडितोऽप्यसौ।
जनतार्चनराष्ट्रभक्तितः,
न हि संघश्चलितः कदाप्यसौ॥

'संघ' अपने पर लगी पाबन्दियों से, अपने स्वयं सेवकों के जेल में डाले जाने से, दिये गये तरह-तरह के कष्टों से पीड़ित होता हुआ भी अपनी राष्ट्रभक्ति से कभी विचलित नहीं हुआ है।

(68)

अयि किन्तु विचित्रतामयी,
समयस्यास्य गतिर्विलोक्यते।
अत एव यथास्थितिः स्थितिः,
पुनरेवास्य कृतात्र शासकैः॥

परन्तु समय की विचित्रता तो यह रही कि 'संघ' की इस अविचल राष्ट्रभक्ति की स्थिति को देखकर भारत सरकार ने फिर से संघ को यथास्थिति (पूर्व स्थिति) प्रदान कर दी।

(69)

अविरलगतिगीतैः राष्ट्रभक्त्यापरीतैः,
सुकृतकृतसुकार्यैः नैव हार्यैः सदार्यैः।
दिनमनुदिनमेष ज्ञानविज्ञानवेषो,
जयतु जयतु संघो सद्गुणौघस्त्वमोघः॥

राष्ट्रभक्ति से भरपूर निरन्तर प्रगति के गीतों से, अपने शुभ कार्यों से, सदा हिन्दुओं की विजयाकांक्षा से रात-दिन ज्ञान-विज्ञान का प्रचारक यह सद्गुणशाली और सार्थक संघ सदा विजयी हो।

(70)

अकालकाले विकरालजाले,
जनालवाले सकलप्रकाले।
सदोपकाराय समर्पितोऽयं,
संघालयो ह्याश्रयतां प्रयाति॥

बुरे समय में, भयंकर स्थिति में फंसे हुए लोगों की भलाई में सदा तत्पर संघस्थान दुखी एवं पीडितों को सुखद आश्रय प्रदान करता है।

(71)

क्षुधाकुलाः दीनजनाः समस्ताः,
यत्रापि कुत्रापि भवन्ति भूमौ।
संघः समागत्य ददाति साह्यं,
निष्पक्षभावेन सदैव तेभ्यः॥

धरती पर जहाँ कहीं भूख से पीड़ित गरीब लोग होते हैं, 'संघ' बिना किसी भेद-भाव के वहाँ पहुँच कर उनकी निःस्वार्थ सेवा करता है।

(72)

दलितजनहितानां चिन्तने दत्तदृष्टिः,
व्यथितमनुजपीडानाशने बद्धभावः।
भवति मनसि वाञ्छा भारतस्यैव भूत्यै,
जयतु जयतु संघः सेवकानां दलोऽयम्॥

पिछड़े हुए लोगों के हित का सदा चिन्तन व ध्यान रखने वाले, दुःखी लोगों की पीड़ा को नष्ट करने को कटिबद्ध, प्रतिदिन हिन्दुस्तान के हित के लिये सतर्क राष्ट्रीय स्वयं सेवकों का यह 'संघ' सदा विजयी हो।

(73)

अनावृष्ट्यां भूमौ प्रचुरतरवृष्ट्यामपि सदा,
स्वदेहस्नेहं ये त्वरितमयि संत्यज्य निपुणाः।
प्रयाताः सेवार्थं मुदितमनसा तत्र निखिलाः,
जयन्त्वेते सभ्याः सकलभुवि संघस्य युवकाः॥

'संघ' के उन नौजवान 'स्वयं सेवकों' की संसार में सदा जय हो, जो सभ्य हैं और अवसर आने पर प्रसन्न मन से शरीर के मोह को त्यागकर कुशलतापूर्वक भारत के उन लोगों की सेवा में तत्पर हो जाते हैं, जो अनावृष्टि व अतिवृष्टि के प्रकोप से परम पीड़ित होते हैं।

(74)

सिन्धोश्चक्रकुचक्रवातनिकरैः संत्रासिता त्रासिताः,
भूकम्पादिविचित्रकालगलितैः निष्कम्पिताः कम्पिताः।
झञ्झावातनिपातदुःखविकलैः निष्पीडिता मानवाः,
यञ्चाश्रित्य तदा भवन्ति सुखिनः संघाय तस्मै नमः॥

समुद्री बाढ़ के थपेड़ों से डरे हुए, भूचाल आदि प्राकृतिक प्रकोपों से सहमे हुए, आँधी तूफान आदि से पीड़ित लोगों ने जिस 'संघ' का आश्रय पाकर सुख प्राप्त किया, उस संघ को सादर नमस्कार है।

(75)

आतंकीयप्रकोपकोपकुपिताः शान्तिप्रियाः मानवाः,
भीताः साह्यविहीनतामुपगता आधारहीनास्तथा।
अत्रैते निजमातृभूमिसदने चिन्ताकुलाः निष्कुलाः,
तेषां रक्षणतत्परो विजयतां संघस्त्वयं सर्वदा॥

भारत के शान्तिप्रिय लोग आतंकवाद के प्रकोप से कुपित हुए, डर से सहमे, अपने को असहाय एवं आधारहीन समझने वाले, अपनी ही मातृभूमि में चिन्तित हुए, परिवारहीन हुए, ऐसे लोगों की रक्षा में सदा तत्पर 'संघ' सदा विजयी रहे।

(76)

हिन्दूनां पतनाय दुष्टचरितैरस्मिन्शुभे भारते,
भेदो जातिकृतो जनेषु विहितो यत्रापि कुत्रापि चेत्।
संघस्तत्र समानभावभरितं पाठं प्रियं पाठयन्,
यः सौहार्दमपूर्वमत्र तनुते संघाय तस्मै नमः॥

इस पवित्र भारत में हिन्दुओं के पतन के लिये दुराचारी लोगों ने जहाँ-कहीं जाति और वर्ण के आधार पर फूट डाली है, 'संघ' ने वहीं-वहीं सभी को समान भावना का प्रिय पाठ पढ़ाया और आपसी मित्रता व सुखद स्थिति उत्पन्न की है। ऐसे 'संघ' को सदा प्रणाम है।

(77)

समरससताया: पाठपाठे प्रवीणः, बहुकठिनपरीक्षायां जगत्यां सुतीर्णः।
परहितनिरतोऽयं संघसंघस्तरंगः, जयतु जयतु वर्णी सर्वदाकीर्णपर्णः॥

भारत के नागरिकों में सर्वत्र समान भाव (समरसता) की शिक्षा देने में चतुर, संसार की कठिन परीक्षा (सेवाकार्य) में उत्तीर्ण, दूसरों की भलाई में संलग्न, बहुत सी शाखाओं वाला फला-फूला यह 'संघ' रूपी वृक्ष निरन्तर विजय को प्राप्त करे।

(78)

यदि मानवमूल्यहीनता,
क्वचिदप्यत्र जनेषु दृश्यते।
प्रतियान्ति सुसंघसेवकाः,
प्रतिरोधाय तदा स्वभावतः॥

'संघ' के स्वयं सेवक जहां-कहीं भी नैतिक ह्रास, मनुष्यता के अहित की बात-को देखते हैं, वहीं उसे रोकने के लिये तुरन्त सुनियोजित ढंग से स्वतः पहुँच जाते हैं।

(79)

यदा यदा भारतभूमिभागः,
वैदेशिकैराक्रमितो ह्यनार्यैः ।
तदा तदानेन निजावदानं,
देशस्य रक्षाव्रतिना प्रदत्तम्॥

जब-जब भारत की भूमि पर विदेशी तत्त्वों ने आक्रमण किया, तब-तब 'संघ' ने अपने देश की रक्षा के लिए अपना पूरा योगदान दिया है।

(80)

चिकित्सया वापरसेवया च,
वर्धापनेनाथ मनोबलस्य।
रणाङ्गणे संघबलेन नित्यं,
सहायकृत्यं विहितं विशिष्टम्॥

युद्ध के दौरान 'संघ' ने पूरी तत्परता के साथ चिकित्सा के द्वारा, अथवा अन्यान्य सेवाओं के द्वारा, मनोबल बढ़ाने के द्वारा भारत के लोगों की विशेष सेवा की है।

(81)

चैनीययुद्धेऽपि च बंगयुद्धे,
तथान्ययुद्धेष्वपि संघवर्गैः।
प्राणर्पणैः भारतरक्षणस्य,
कार्याणि भव्यानि कृतानि नूनम्॥

चीन के साथ, बंगाल (पूर्वी पाकिस्तान) के साथ हुए युद्ध के दिनों में तथा अन्य भी संकट के दिनों में भारत की रक्षा के निमित्त 'संघ' ने जान जोखिम में डालकर भी अतीव उत्तम काम किये हैं।

(82)

खाद्यानि परमोत्तमव्यञ्जनानि,
वस्त्राणि रम्याणि बृहत्तराणि।
दत्तानि संघेन पवित्रभावैः,
स्वकीय राष्ट्रस्यसुरक्षणाय॥

अपने राष्ट्र (भारत) की सुरक्षा के लिये 'संघ' ने अतीव पवित्र भावना से लोगों तक उत्तमोत्तम भोजन, वस्त्र तथा कम्बलादि पहुंचाये।

(83)

स्वदेशभाषा निजसंस्कृतिश्च,
पुरातनी यात्र परम्परास्ति।
तस्याः दृढा रक्षणचित्तवृतिः,
संघस्य नित्यं परिवीक्ष्यते मे॥

जो अपनी (भारतीय) भाषा है अपनी संस्कृति है और जो अपनी प्राचीन परम्परा है उनकी रक्षा में संघ मनोयोग से लगा हुआ है, मुझे (कवि को) यही कार्य संघ के निरन्तर दिखाई देते हैं।

(84)

आपत्तिकालीयकुकालकाले,
प्रच्छन्नरूपेण विबोधिता या।
संघेन लोकस्य विशेषशक्तिः,
तस्याः प्रभावं भुवि को न वेत्ति॥

संकटपूर्ण आपातकालीन (एमर्जेंसी) के दुर्दिनों में 'संघ' द्वारा प्रछन्न रूप से कार्य करके भारत के लोगों में जगाई गई विशेष शक्ति (क्रान्ति भावना) के प्रभाव को दुनिया में कौन नहीं जानता है?

(85)

गोमांसविक्रयकुवृत्तिपरेण हन्त,
देशस्य तेन तदधिष्ठितशासनेन।
गोहत्यया सकलभारतमानसेऽस्मिन्,
वज्रप्रहार इव चात्र कृतो विचित्रः॥

'गोमांस' बेचकर धन कमाने वाली भारत (देश) की (केन्द्र) सरकार ने गोहत्या रूपी वज्र (अस्त्र) से सभी भारतवासियों के मन पर प्रबल प्रहार किया है। यह विचित्र बात है।

(86)

मातेति मत्वा परिपूजिता या,
प्रारम्भतो हिन्दुभिरत्र नित्यम्।
तस्याः कुहत्यां परिवीक्ष्य चेतो,
हिन्दूजनानां चलितं बभूव॥

आदि काल से हिन्दुओं ने गौ को माता के समान पूजनीया माना है। उस गौ की हत्या देखकर हिन्दुओं का चित्त विचलित हो गया।

(87)

गोहत्यायाः निरोधाय,
कृतभूरिपरिश्रमः ।
संघोऽयं जयताल्लोके,
सर्वरक्षारतः प्रियः ॥

'गोहत्या' को रोकने के लिये घोर परिश्रम करने वाले इस 'संघ' की संसार में सदा जय हो, जो यह (संघ) सभी की रक्षा में संलग्न रहता है।

(88)

अनुदानमनुग्रहादिकं,
नहि संघाय कदापि रोचते।
गुरुदक्षिणयैव सार्थिकी,
स्थितिरस्यैति सदैव पूर्णताम् ॥

किसी प्रकार का अनुदान या अनुग्रह प्राप्त करना (अहसान लेना) 'संघ' को कभी पसन्द नहीं रहा है। यहां तो केवल (कर्त्तव्य बुद्धि से प्राप्त) गुरुदक्षिणा से ही (संघ की) आर्थिक स्थिति सुनिश्चित बनी रहती है।

(89)

किमपि प्रतिबन्धबन्धनं,
न हि संघे परिलक्ष्यते क्वचित्।
परमत्र समर्पणं पणं,
दृढसंकल्पमयं प्रतीयते ॥

इस स्थिति में यहां किसी भी प्रकार के प्रतिबन्ध का बन्धन दिखाई नहीं देता है, यहाँ केवल अपने समर्पण का दृढ़ संकल्प ही सर्वोपरि प्रतीत होता है।

(90)

स्वजन्मभूमौ च निजे स्वदेशे,
हिन्दूजनानां परमप्रतीकः।
मनोभिरामः प्रियरामचन्द्रः,
बन्धीकृतोऽयं किल पामरैः हा॥

अपनी जन्मभूमि में और अपने ही देश में हिन्दुओं के सर्वाधिक मान्य प्रतीक स्वरूप मन मोहक प्रिय श्री रामचन्द्र को नीच दुष्टों ने बन्धक बना दिया। शिव, शिव।

(91)

इमां दशां चेतसि चिन्तयित्वा,
स्वधर्मरक्षामृतपायिनः ते।
आराध्यदेवस्य निवासभूम्यै,
मुक्तिं प्रदातुं सकलाः प्रवृत्ता॥

इस स्थिति को भली प्रकार सोचकर, अपने धर्म की रक्षा हेतु अमृत पीने वाले सभी (स्वयं सेवक) अपने आराध्य (इष्ट) देव की निवासभूमि (अयोध्या) को मुक्त कराने में लग गये।

(92)

आबालवृद्धैः निखिलैस्तदानीं,
संघीयलोकैः निजदेहदानैः।
कार्यं कृतं यन् न हि लोक एष,
वेत्तुं तथा चिन्तयितुं च शक्तः॥

उस समय संघ के सभी छोटे, बड़े, बच्चे तथा बूढ़े स्वयं सेवकों ने अपने शरीर का बलिदान करके वह कार्य कर दिखाया, जिसके बारे में यह दुनिया नहीं जानती है और सोच भी नहीं सकती है।

(93)

रामस्य कार्याय तदत्र पुर्य्यां,
प्राणार्पणं सेवकवृन्दवन्द्यैः।
यैः यैः कृतं तान्प्रति भक्तिभावैः,
श्रद्धाञ्जलिं सादरमर्पयामः॥

अयोध्या में श्री राम के कार्य के लिये अपने प्राण न्यौछावर कर देने वाले वन्दनीय स्वयं सेवकों के प्रति हम पूरी आस्था के साथ सादर श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

(94)

हिन्दुभ्यः किल शक्तिसञ्चयगुणं सौहार्दहार्दन्तथा,
कर्तव्यं सकलात्मनिर्भरयुतं धर्मस्यरक्षाव्रतम्।
सत्यासत्यविचारचिन्तनरतिं राष्ट्रस्वरोद्बोधनम्,
योऽयं यच्छति भव्यभावविभवं संघाय तस्मै नमः॥

उस 'संघ' को नमस्कार है, जो हिन्दुओं को निश्चित रूप से शक्ति संचय का गुण, सहृदयता, आत्मीयता, कर्मठता, आत्मनिर्भरता, धर्म रक्षा का व्रत, सच-झूठ की पहचान, विचार चिन्तन की लगन तथा अपने राष्ट्र की स्थिति का पूरा भावनामय ज्ञान प्रदान करता है।

(95)

हिन्दूनां विपदापदां बहुविधां सन्नाशने संरतः,
तेषां मूल्ययशः प्रतीकविभवप्रोद्भासने तत्परः।
सर्वेषां सुखदुःखयोरनुदिनं स्नेहानुभूतिप्रदः,
संघोऽयं जगतीतले विजयतां सत्सेवकानां दलः॥

हिन्दुओं की विभिन्न विपत्तियों के नाश करने में संलग्न, हिन्दुओं के प्रभाव को, यश को और ऐश्वर्य को बढ़ाने में तत्पर, सभी के सुख-दुःख में हमेशा साथ देने में अभिरत और श्रेष्ठ स्वयं सेवकों का यह दल-संघ संसार में सदा विजय प्राप्त करे।

(96)

विद्याबुद्धिविलासलास्यकुशलो ज्ञानाम्बुधिः सत्यभाक्,
धर्माधर्मविवेकबोधनिपुणो वागीश्वरीपूजकः।
कार्याकार्यविचारचिन्तनपटुः राष्ट्रस्य भक्त्यान्वितः,
संघोऽयं प्रतिभाति भाति भुवि यः तस्मै नमः सादरम्॥

संसार में अपनी विद्या, बुद्धि, चातुर्य, अगाध ज्ञान, सत्य वाणी, धर्माधर्मविवेक, वाणी की देवी सरस्वती (संस्कृति) की पूजा, अच्छे बुरे काम के विचार में कुशलता, अपने राष्ट्र (भारत) के प्रति भरपूर भक्ति के कारण शोभा व आदर प्राप्त कर रहे इस संघ को सादर प्रणाम है।

(97)

प्रेम्णा प्रेम्णा जनगणवरैः हेडगेवारवर्यैः,
गम्भीरेण प्रबलमनसा श्रद्धया भक्तितश्च।
संघाख्योयः तरुवरवटः रोपितो भारतेऽस्मिन्,
वृद्धिं सोऽयं गुरुवरवरैः प्रापितो मञ्जितश्च॥

परम श्रेष्ठ पुरुष श्री हेडगेवार जी द्वारा प्रेमपूर्वक आरोपित तथा पूरी गम्भीरता से, पूरे मनोयोग से, श्रद्धा और भक्ति से सिञ्चित यह 'संघ' नाम का 'वट वृक्ष' इस भारत में माननीय गुरुवर (श्री गोलवलकर जी) के द्वारा बढ़ाया और सक्रिय किया गया है।

(98)

एभिःसद्भिः विकसिततमस्संघवृक्षस्तदानीं,
श्रीमद्भिस्तैः मधुकरकरैः पालितः पोषितश्च।
नानाशाखानिकरलसितः साम्प्रतं पुष्पितोऽय-
मुत्कृष्टत्वं जगति लभते पूज्यराजेन्द्रसिंहैः॥

इन श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा विकसित, माननीय मधुकर जी आदि उत्तम लोगों द्वारा पालित और पोषित यह संघ-वृक्ष अब बहुत-सी शाखाओं से युक्त व पुष्पित रूप में पूज्य राजेन्द्र सिंहजी (रज्जू भैय्या) की छत्र-छाया में उत्कृष्टता को प्राप्त हो रहा है।

(९९)

पीडातापसुखादिकैश्च विविधैः दुःखान्वितैरद्भुतैः,
दीर्घैः दीर्घतरैः प्रियैरनुभवैः सद्भावबुद्ध्यान्वितैः।
श्रेष्ठैः सर्वगुणान्वितैः बुधवरैः सरसंघसञ्चालकैः,
मार्गो दर्शित उत्तमो ह्यधिगतो यैरत्र तेभ्यो नमः॥

उन परम पूजनीय सरसंघ चालकों को नमस्कार है, जिन्होंने तरह-तरह के पीडा-संताप, सुख-दुःख, छोटे-बड़े, प्रिय-अप्रिय, तर्क-वितर्क आदि अपने अनुभवों व पूर्णतः श्रेष्ठ गुणों से हमें इस उत्तम मार्ग का दर्शन कराया है और वर्तमान में करा रहे हैं।

(100)

संघस्य चारुचरितं विमलं मनोज्ञं,
सञ्चिन्त्य चेतसि पुनः पुनरेव भूयः।
सद्बोधगम्यसरसं रुचिरं सुकाव्यं,
भक्त्या मया विलिखितं कविनाधुनात्र॥

(राष्ट्रीय स्वयं सेवक) संघ के सुन्दर, पवित्र और मनोरंजक चरित को अपने चित्त में बार-बार सोचकर, विचारकर कवि के रूप में मुझ श्रीकृष्ण सेमवाल ने इस काव्य को पूर्ण आस्था के साथ लिखा है।

(101)

कालो गमिष्यति गमिष्यति जीवनञ्च,
यास्यन्ति सुस्थिरपदान्यपि दुर्लभानि।
वाणी कवीश्वरमुखान्निसृता धरित्र्यां,
चन्द्रार्कयोर्द्युतिनिभा न हि शाश्वती किम्॥

समय, जीवन और जीवन में प्राप्त सुनिश्चित ऊँचे पद तो स्थिर नहीं हैं, किन्तु श्रेष्ठ कवि के मुख से निकली वाणी चन्द्र और सूर्य की प्रभा की भाँति क्या पूर्णतः शाश्वत न ही है! अर्थात् अवश्य है।

भीमशतकम्

1. भीमशतकम्

भीमशतकम्

(1)

गौतमं प्रथमं नत्वा नत्वा सर्वान्गुणोत्तमान्।
लिखामि शतकं रम्यं भीमरावस्य साम्प्रतम्॥

महातपस्वी योगीश्वर भगवान् बुद्ध को प्रणाम कर तदनन्तर सभी श्रेष्ठ गुणशाली महापुरुषों को प्रणाम हुआ मैं वर्तमान में डा० भीमराव अम्बेडकर के व्यक्तित्व पर सुन्दर शतक काव्य लिख रहा हूं।

(2)

संस्कृतं प्रति श्रद्धासीत् यस्य चित्ते निरन्तरम्।
तस्यामेव सुवाण्यान्ते लिख्यते चरितं मया॥

जिस भीमराव के हृदय में संस्कृत भाषा के प्रति अपार श्रद्धा थी, उसी संस्कृत भाषा में मेरे द्वारा उसका चरित्र लिखा जा रहा है।

(3)

महाराष्ट्रप्रदेशेऽस्मिन् रम्यो रत्नगिरिः प्रियः।
मण्डलो लोकविख्यातस्तत्र ग्रामो मनोहरः॥

महाराष्ट्र प्रदेश में रत्नगिरि नामक एक लोक प्रसिद्ध जिला है। उस जिले में एक अत्यन्त सुन्दर ग्राम है।

(4)

धर्म-कर्मपरः श्रेष्ठः देवमन्दिरभूषितः।
आम्बाबडेपदेनैव सोऽयं ख्यातिं जगाम वै॥

धर्म-कर्म में संलग्न, उत्तम, देवताओं के मन्दिरों से सुशोभित आम्बाबडे नाम से वह गाँव प्रसिद्ध हुआ।

(5)

तस्मिन् ग्रामे समुत्पन्नः त्यागी धर्मधुरन्धरः।
पवित्रः प्रभुभक्तश्च रामनामजपे रतः॥

उस ग्राम में त्यागी धर्माचरण में अग्रणी, पवित्र, प्रभुभक्त एवं रामनाम के जाप में निरन्तर तल्लीन मालो जी सकपाल नाम का एक व्यक्ति हुआ।

(6)

पवित्रश्च सहिष्णुश्च गुणग्राही गुणान्वितः।
मालो जी सकपालाख्यो महारकुलभूषितः॥

महार कुल को सुशोभित करने वाला मालोजी सकपाल पवित्र, सहनशील, गुणग्राही एवं सर्वगुण सम्पन्न था।

(7)

विद्याविनयसम्पन्नः देवसेवापरायणः।
युद्ध-विद्याप्रवीणश्च देशभक्तश्च सैनिकः॥

मालोजी सकपाल विद्या एवं विनय सम्पन्न तथा देवताओं की सेवा में सदा तत्पर रहने वाला, युद्ध विद्या में प्रवीण देशभक्त सैनिक था।

(8)

वंशानुक्रमतो येन प्राप्तो भव्यः सुखप्रदः।
देवताराधनायाः वै त्वधिकारो महोत्तमः॥

श्री मालोजी सकपाल के परिवार को वंश परम्परा से सर्व प्रकार के सुख को प्रदान करने वाला महनीय एवं भव्य देवताओं की सेवा का अधिकार प्राप्त था अर्थात् देवताओं की पालकी ले जाने का अधिकार एकमात्र उन्हें ही प्राप्त था।

(९)

तेषां परमदेवानामाशिषैव च तद्गृहे।
धर्मानुरागी पुण्यात्मा प्रभुसेवापरायणः॥

उन परमोज्ज्वल देवताओं के आशीर्वाद से ही उनके घर में धर्मानुरागी, पुण्यात्मा एवं प्रभु सेवापरायण रामजीसकपाल का जन्म हुआ।

(10)

रामजी सकपालाख्यः पुत्रो जातस्तपोधनः।
बुद्धिमान् परमोदारो नम्रश्च विमलो बुधः॥

श्री मालोजी सकपाल का पुत्र रामजीसकपाल परम उदार, बुद्धिमान्, नम्र, स्वच्छ विचारों वाला अत्यन्त समझदार एवं तपस्वी व्यक्ति था।

(11)

रामचर्चापरो नित्यं धर्मरक्षारतोऽपि च।
दयालुश्च कृपालुश्च विनयी विप्रपूजकः॥

रामजी सकपाल निरन्तर राम की चर्चा में तल्लीन, धर्म की रक्षा के कार्यों में भी संलग्न रहते थे। और वे अत्यन्त दयालु, कृपालु, विनयी तथा विद्वानों की पूजा में व्यस्त रहते थे।

(12)

सोऽपि समुचिते काले सेनायां शिक्षके पदे।
आसीनः किल धर्मात्मा देशरक्षारतोऽभवत्॥

वह सकपाल भी उचित समय पर सेना में शिक्षक के पद पर नियुक्त हुआ और धर्म कर्म में प्रवृत्त होता हुआ देश रक्षा में तत्पर हुआ।

(13)

पित्राज्ञया कृतो येन विवाहः श्रद्धया मुदा।
गुणवत्या महादेव्या प्रियया भीमया सह॥

आदरणीय पिता की आज्ञा से रामजी सकपाल ने बड़ी श्रद्धा एवं प्रसन्नता से गुणशालिनी प्रिय भीमादेवी के साथ विवाह किया।

(14)

देवविप्रप्रसादेन तस्या एव सुकुक्षितः।
पूर्णचन्द्रनिभो दिव्यः पुत्रो जातः सुखप्रदः॥

देव-विप्रप्रसाद से उसी देवी की कोख से पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान दिव्य एवं सभी को सुख देने वाला पुत्र-रत्न पैदा हुआ।

(15)

पिता प्रसन्नतां यातो जननी च तथैव सा।
जाते सुतनये जाताः प्रसन्नाः सर्वबान्धवाः॥

पुत्ररत्न की प्राप्ति से पिता एवं माता तथा समस्त मित्र, बन्धु-बान्धव सभी परम प्रसन्न एवं हर्षित हुए।

(16)

आकाशो मुदितो जातो धरापि मुदिता समा।
मुदितस्सकलो लोको दिशश्च प्रदिशस्तथा॥

सकपाल के घर में पुत्ररत्न के उत्पन्न होने से आकाश प्रसन्न हुआ, पृथिवी प्रसन्न हुई, समस्त संसार एवं दिशाएं-उपदिशाएं सभी प्रसन्न हुई।

(17)

शोषिता मानवाः सर्वे दुःखिता दलितास्तथा।
मुदिताः प्रमुदिताः प्रेम्णा भूयोभूयः पुनः पुनः॥

सकपाल के घर में पुत्ररत्न के उत्पन्न होने पर समस्त शोषित, दलित, दुःखित व पीड़ित मानव प्रेम से परम प्रसन्नता को प्राप्त हुए।

(18)

भूमौ जन्मप्रदायैनं रत्नमत्यन्तमद्भुतम्।
ब्रह्मापि भारमुक्तोऽभूत् दलितानां हिते रतः॥

इस मानवरूपी अत्यन्त अद्भुत रत्न को पृथिवी पर जन्म देकर दलितों की भलाई में संलग्न ब्रह्मा भी भारमुक्त हो गया।

(19)

अनेकजन्मपुण्यानां फलेन भुवने ध्रुवम्।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टः प्रजायते॥

अनेक जन्मों के पुण्यों के फल से निश्चय ही पवित्र एवं श्री सम्पन्न लोगों के घर में योग-भ्रष्ट महामानव जन्म लेते हैं।

(20)

उक्तीयं फलिता जाता निश्चयेनास्य सद्मनि।
येनास्य जन्म संजातं बालकस्यास्य योगिनः॥

श्री सकपाल के घर में यह उक्ति निश्चय रूप से पूर्ण चरितार्थ हुई, जिसके कारण इनके घर में एक योगी स्वरूप बालक का जन्म हुआ।

(21)

भीमरावाभिधानेन भूतिमान् भव्यभावनः।
भीमादेवीसुतत्वेन ख्यातोऽयं भुवि बालकः॥

ऐश्वर्यशाली, भव्याकृति यह बालक भीमादेवी के पुत्र होने के कारण भीमराव के नाम से संसार में प्रसिद्ध हुआ।

(22)

पितुराज्ञापरो बालः श्रद्धाभावसमन्वितः।
विद्याध्ययनकार्येषु निष्ठया निरतोऽभवत्॥

श्रद्धा, स्नेहादिभावों से परिपूर्ण, पिता का आज्ञापालक पुत्र निष्ठा-पूर्वक विद्या के अध्ययन में संलग्न हो गया।

(23)

शालायां शिक्षकाणाञ्च छात्राणामपि प्रत्यहम्।
वृत्तिन्तु कुत्सितं दृष्ट्वा त्रस्तो बालो मुहुर्मुहुः॥

प्रतिदिन पाठशाला में शिक्षकों और छात्रों का कुत्सित व्यवहार देखकर भीमराव बार-बार दुःखित होता था।

(24)

वाप्यां कूपे गृहेष्वेवं मन्दिरेऽपि मठेऽपि वा।
भेदबुद्धिं विलोक्यात्र विचारं कृतवान्नसौ॥

बावड़ियों पर, कुओं पर, घरों में, मन्दिरों में, मठों में जातिवादी भेद-बुद्धि को देखकर इस बालक ने चिन्तन किया।

(25)

मानवाः मानवाः सर्वे समरक्ताः समक्रियाः।
कथमस्पृश्यता तत्र किमाश्चार्यमतः परम्॥

संसार में सभी मनुष्य समान रक्त एवं समान क्रियाशील हैं। फिर इनमें परस्पर अस्पृश्यता कैसे? इससे महान् आश्चर्य और क्या हो सकता है!

(26)

धरापि सैवास्ति नभस्तदेव, जलान्नवस्त्रादिकमेव तुल्यम्।
समानरूपेऽपि मनुष्यजातौ, कथं कुतोऽस्पृश्यविचार एषः॥

धरती भी वही है, आकाश भी वही है, जल, अन्न, वस्त्रादि सब कुछ वही है तो फिर मनुष्य जाति में यह अस्पृश्यता कैसे और कहाँ से आई है।

(27)

वाणी समाना गमनं समानं, दृष्टिः समाना हृदयं समानम्।
भावाः समानाः हसनं समानं, ह्यस्पृश्यभावश्च ततः कुतोऽयम्॥

संसार के सभी मनुष्यों का बोलना, चलना, देखना, सोचना, हँसना, रोना इतना ही नहीं हृदय भी समान है। फिर इस संसार में मनुष्य जाति में परस्पर यह अस्पृश्यता कैसे।

(28)

मृत्युः समानः जननं समानं, मैत्री समाना रिपुता समाना।
सौख्यं समानं विपदा समाना, ह्यस्पृश्यभावश्च ततः कुतोऽयम्॥

जन्म-मृत्यु, दोस्ती-दुश्मनी, सुख-दुःख आदि सभी क्रियाएं सभी मनुष्यों में समान हैं तो फिर संसार में परस्पर मनुष्यों में यह अस्पृश्यता कैसे।

(29)

गतिः समाना च मतिः समाना, रतिः समाना च कृतिः समाना।
पतिः समानः च यतिः समानः,ह्यस्पृश्यभावश्च ततः कुतोऽयम्॥

प्रत्येक मनुष्य की गति, मति, रति, कृति आदि सभी समान हैं। इतना ही नहीं पति तथा योगादि क्रिया भी समान हैं तो फिर संसार में परस्पर मनुष्यों में यह अस्पृश्यता कैसे।

(30)

सर्पादयो विषयुता भुवि जन्तवो ये,
सिंहादयश्च पशवो ह्यतिहिंस्रका ये।
अस्पृश्यता समुचितात्र नवा जनेषु,
किन्नो बुधैर्मनसि तत्र कृतो विचारः॥

संसार में विष धारण करने वाले सर्पादि समस्त जन्तु एवं सिंहादि समस्त हिंसक पशु अस्पृश्य हैं, जिनके स्पर्श मांत्र से प्राणिमात्र को हानि होती है। ऐसे हिंसक प्राणियों में अस्पृश्यता उचित है न कि मनुष्यों में, क्या इस विषय पर कभी विद्वानों ने विचार किया।

(31)

यत्रापि कुत्रापि विलोक्यते भृशं, शास्त्रेषु जातेस्तु विवेचनं भुवि।
मनुष्यरूपे च पशुस्वरूपे जातेस्समाख्यानमिहैव दृश्यते॥

शास्त्रों में जहाँ कहीं भी जाति शब्द का विवेचन दिखाई देता है, वहाँ सभी स्थानों पर जाति के समाख्यान में जाति से मनुष्य जाति एवं पशु जाति का ही बोध होता है।

(32)

अनेन बालेन विचारितं द्रुतं, गभीरभावेन च सूक्ष्मदृष्टितः।
कथं समाजे विषवल्लरीयं, वृद्धिं प्रयाता भरतार्यभूमौ॥

शीघ्र ही इस बालक ने अत्यन्त गम्भीरता एवं सूक्ष्मदृष्टि से इस प्रकरण पर विचार किया कि भरत की श्रेष्ठ भूमि वाले इस समाज में अस्पृश्यता रूपी विष कैसे फैला।

(33)

स्वकीयवैशिष्ट्यविभावनाय, विकासितोऽयं कुपथो विनाशी।
अतीवसत्तासुखभोगलिप्तैस्तैस्तैर्जनैः राजबलेन लोके॥

निरन्तर सत्ता के अधिकाधिक सुख को भोगने वाले मनुष्यों ने अपने वैशिष्ट्य की रक्षा के लिए शासन के बल पर इस विनाशकारी कुमार्ग को विकसित किया।

(34)

जातिप्रथायाः विकरालकालैः, दुष्पीडितोऽयं भुवि भीमरावः।
तन्नाशनायात्र कृतप्रतिज्ञः, तत् कर्मणि प्रीतिपरोऽभवद् वै॥

जाति प्रथा रूपी भयंकर सांपों से बुरी तरह डसे इस भीमराव ने संसार से इस प्रथा की समाप्ति की प्रतिज्ञा की। एतदर्थ वह अच्छे कार्य में दत्तावधान होकर प्रवृत्त हुआ।

(35)

आक्रोशपीडापरिपीडितोऽसौ, वहन्नशेषान्नपि दुःखजातान्।
विद्याविलासे नितरां प्रवृत्तः, विचार्य मुक्तेश्च तमेव मार्गम्॥

सामाजिक विद्वेष के आक्रोश की पीड़ा से पीड़ित होता हुआ वह अनेकों दुःखों को सहन करता हुआ भी विद्याध्ययन में निरन्तर तल्लीन रहा, क्योंकि विद्या के अध्ययन को ही अस्पृश्यता से मुक्ति का अम्बेडकर मुख्य मार्ग मानता था।

(36)

संसारसारस्तु विचित्र एव, रूढाश्च मूढाश्च विचारवन्तः।
भवन्ति भव्याः मनुजाः जगत्यां, तेनैव लोको ध्रुवमत्र याति॥

संसार का सार अत्यन्त विचित्र ही दृष्टिगोचर होता है इस संसार में रूढ़िवादी, मूर्ख, विद्वान् श्रेष्ठादि सभी प्रकार के मनुष्य जन्म लेते हैं। जिसके आधार पर संसार की प्रक्रिया चलती है।

(37)

आयाताः बहवोऽस्य जीवनपथे विज्ञा नयज्ञास्तथा,
दुष्टाश्चापि च सज्जनाः सुमतयस्तत्राप्यहो चादिमः।
मान्योऽम्बेडकरो बुधो द्विजवरो तच्छिक्षकस्सद्व्रती,
येनस्वात्मजतुल्यमेव सततं संलालितोऽयं सुधीः॥

इस अम्बेडकर के जीवन-पथ में बहुत से विद्वान्, नीतिमान्, दुर्जन-सज्जन और बुद्धिमान् व्यक्ति आये होंगे, परन्तु उनमें सर्वप्रथम उसके जीवन में अम्बेडकर नामक अत्यन्त बुद्धिमान् श्रेष्ठ एवं सदाचारी शिक्षक रूप में एक ब्राह्मण आया। जिसने इस विद्वान् बालक को पुत्रवत् प्यार दिया।

(38)

पूज्योऽम्बेडकरोऽददात्प्रियतरं नामापि यस्मै मुदा,
स्नेहेन प्रियभीमरावविदुषे हर्षप्रकर्षान्वितः।
तस्मादेव दिनात् प्रसिद्धिमगमन्नाम्नैव चानेन सः,
मान्यो ज्ञानगुणेन विश्वनिलये संजायते मानवः॥

पूजनीय गुरुचरण पण्डितवर श्री अम्बेडकर ने अत्यन्त स्नेह एवं प्रसन्नता से मेधावी प्रिय शिष्य भीमराव को अपना नाम प्रदान कर दिया। उसी दिन से वह भीमराव अम्बेडकर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। वस्तुतः विश्वनिलय में ज्ञानरूपी गुणों से ही मनुष्य माननीय होता है।

(39)

विद्याध्ययनभावेन पित्रा साकमसौ यतिः।
मुम्बयीनगरीं प्राप्तो धनाभावेऽपि सद्व्रती॥

यह सदाचारी एवं योगी भीमराव अम्बेडकर विद्यार्जन की भावना से धनाभाव के होते हुए भी पूज्यपिता के साथ बम्बई नगरी में पहुँचा।

(40)

तत्रापि यातनाः प्राप्ताः समाजाद् विविधाः भृशम्।
आक्रोशतप्तचित्तोऽपि न कदापि चलितोऽभवत्॥

अम्बेडकर को बम्बई नगर में भी नाना प्रकार की यातनाओं को भोगना पड़ा। यातनाओं के कारण आक्रोशित एवं दग्ध-चित्त होता हुआ भी वह अपने कर्त्तव्य-मार्ग से कभी भी विचलित नहीं हुआ।

(41)

निष्ठया ध्यानचित्तेन भीमेनाध्ययनं कृतम्।
तेनैव प्रथमं स्थानं कक्षास्वधिगतं सदा॥

अम्बेडकर ने निष्ठा एवं ध्यान मग्न चित्त से अध्ययन किया। जिसके कारण उसने सभी कक्षाओं में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया।

(42)

अस्य वैशिष्ट्यमत्यन्तं वीक्ष्य केलुस्करेण वै।
आशिषा दीक्षया प्रेम्णा भीमः सम्मानितो मुदा॥

इसकी प्रत्युत्पन्नमतिपरक विशिष्टता को देखकर केलुस्कर महोदय ने प्रसन्नतापूर्वक आशीर्वाद से, दीक्षा से व प्रेम से भीमराव को सम्मानित किया।

(43)

प्रारम्भीकृतवानेष शिक्षां स्वीयां महोत्तमाम्।
गुरोः केलुस्करस्यैव मार्गदर्शनतो द्रुतम्॥

श्री अम्बेडकर ने अपनी उच्च शिक्षा आदरणीय गुरुतुल्य कृष्णा-केलुस्कर के मार्गदर्शन में प्रारम्भ की।

(44)

युगानुरूपं भीमेन विवाहो विहितस्तदा।
रामाबाई महादेव्याः साकन्तु पितुराज्ञया॥

समय की स्थिति के अनुसार पिता की आज्ञा पालन की भावना से अम्बेडकर ने रामाबाई नामक देवी के साथ विवाह किया।

(45)

अर्थाभावेन संरुद्धं शिक्षणं तत्क्षणञ्च यत्।
बड़ोदाराज्यसाह्येन पुनः प्रारम्भतां गतम्॥

अर्थाभाव के कारण जो उच्च शिक्षण भीमाराव का रुक गया था, वह बड़ोदा के राजा के सहयोग से पुनः प्रारम्भ हो गया।

(46)

बी० ए० परीक्षा महताश्रमेण श्रीभीमरावेण मुदा तदानीम्।
उत्तीर्णता या च कृता सगर्वं, तेनात्र वंशो ननु धन्यतां गतः॥

आर्थिक सहायता प्राप्त होने पर भीमराव ने प्रसन्नता से अत्यन्त परिश्रम से सगर्व जो बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की उससे सारा वंश अपने को धन्य समझने लगा।

(47)

गेहस्य दयनीयदशां स्वकीयां, समीक्ष्य भीमे विकलेऽपि जाते।
तपोधनोऽयं चलितो न जातो, धीरस्य लोके गुण एष एव॥

अपने परिवार की दयनीय दशा को देखकर भीमराव के विकल होने पर भी तपस्वी भीमराव क्षणमात्र के लिए भी अपने कार्य से विचलित नहीं हुआ। संसार में धैर्यवान् व्यक्ति का यही गुण है।

(48)

आजीविकार्थं किल साधनानि, यद्यप्यनेकानिविधानि तत्र।
साह्यप्रदानप्रतिदानहेतोः, सेवाकृता तेन बड़ोदरायाम्॥

यद्यपि बम्बई में आजीविका के लिए नाना प्रकार के साधन थे, परन्तु अम्बेडकर ने बड़ोदा के राजा द्वारा प्रदत्त सहयोग के प्रतिदान निमित्त बड़ोदा के राजा के यहाँ आजीविका सम्बन्धी सेवा-कार्य करना स्वीकार किया।

(49)

अनेककष्टैश्च बड़ोदरायां, कृता सुसेवा नृपतेस्तदानीम्।
तत्रापि जातिग्रहग्रस्त एष, प्रपीडितोऽभूदपरैः जनैः नु॥

इसने अनेक कष्टों को सहन करते हुए बड़ोदा के राजा की सेवा की। परन्तु वहाँ भी वह जातिवादी ग्रह से ग्रस्त होता हुआ अन्य व्यक्तियों से अत्यन्त प्रताड़ित हुआ।

(50)

न वासयोग्यं भवनं सुलब्धं, न भोजनञ्चापि बड़ोदरायाम्।
न मानसम्मानविभाविकासः, स्नेहादिकस्यात्र कथापि नैव॥

अम्बेडकर को बड़ोदा में न निवासार्थ स्थान मिला, न ही भोजन की व्यवस्था ही हो सकी, और न ही मानसम्मान एवं व्यक्तित्व विकास का ही अवसर मिला। स्नेहादि की तो चर्चा भी नहीं थी।

(51)

पाखण्डकैस्तत्र मुहुर्मुहुः स, प्रताडितोऽयं गुणरत्नराशिः।
स्वकार्यवृत्तेश्चलितो न जातो, धैर्यस्य चैषा महती परीक्षा॥

पाखण्डी लोगों के द्वारा इस गुणरत्नराशि रूप अम्बेडकर को अनेकों बार वहाँ प्रताड़ित होना पड़ा। किन्तु तब भी वह स्वकार्य से विचलित नहीं हुआ, उसके धैर्य की यह बड़ी परीक्षा थी।

(52)

दयापरे शासनशासकेऽपि, दुष्कृत्यदक्षात्मचैररजस्रम्।
अतन्द्रितोऽपि त्वपमानितोऽसौ, बुद्धेर्निधानं प्रियभीमरावः॥

बड़ोदा के राजा के दयालु एवं उदार होने पर भी वहाँ के दुराचारी कर्मचारियों के द्वारा आलस्यरहित, कर्त्तव्यपरायण, बुद्धिमान् इस भीमराव को निरन्तर अपमानित किया जाता रहा।

(53)

कृतज्ञभावी प्रियभीमरावो, राज्यस्य सेवां प्रदधातुमिच्छन्।
न सम्प्रयातस्सफलत्वमत्र, विधेर्विधानन्तु यदन्यदेव॥

कृतज्ञभावी भीमराव राज्य द्वारा प्रदत्त सहायता के प्रतिदान के रूप में राज्य की सेवा को करने की इच्छा रखता हुआ सफल नहीं हुआ, क्योंकि भीमराव के सम्बन्ध में विधि का विधान कुछ अन्य ही था।

(54)

अपमानभरेण पीडितः, प्रतियातो नगरीं विहाय ताम्।
सकलाश्रयदायिनीं पुनः, सुखदां तत्र सुमुम्बयीमसौ॥

अपमान से पीड़ित हुआ अम्बेडकर बड़ोदा नाम की उस नगरी को छोड़कर सभी को समानरूप से आश्रय देने वाली तथा सुख देने वाली मुम्बई नामक नगरी में पुनः लौट आया।

(55)

अपमानस्य दुःखेन दग्धस्तप्तस्तपोधनः।
अस्पृश्यताविनाशार्थं दृढ़संकल्पपरोऽभवत्॥

अपमान के दुःख से जला एवं तपा वह तपोधन अस्पृश्यता के विनाश के लिए कटिबद्ध हो गया।

(56)

एतदर्थन्तु मुम्बय्यां सभा नैकास्तु योजिताः।
दलितानाञ्च चित्तेषु स्वाभिमानः प्रजाग्रतः॥

इस कार्य के लिए अम्बेडकर ने विभिन्न स्थानों पर अनेकों सभाओं का आयोजन किया। जिससे दलितों के हृदय में स्वाभिमान जागृत हुआ।

(57)

दीनानां दलितानाञ्च समुद्धारे रतोऽप्यहो।
विद्याव्यसनसंपृक्तो दृश्यतेस्म सदैव सः॥

दीन एवं दलित जनों के समुद्धार में तल्लीन होते हुए भी अम्बेडकर विद्यारूपी व्यसन में सदैव संपृक्त रहता था।

(58)

अनेन भावेन समन्वितोऽसौ गतो विदेशं प्रति वै यशोधनः।
समस्तशास्त्रं विधितत्त्वयुक्तं प्रत्यागतोऽधीत्य पुनःस्वदेशम्॥

विद्याध्ययन की आदर्श भावनाओं से जुड़ा हुआ वह यशोधन अम्बेडकर विधि शास्त्र के गम्भीर अध्ययन के लिए विदेश गया और वहाँ से विधि एवं अन्य शास्त्रों के अध्ययन के पश्चात् पुनः स्वदेश लौटा।

(59)

विदेशभूमौ विमलैस्सुहृद्भिः, कृतञ्च साह्यं बहुधा विशेषम्।
पाथेयमेनं हृदि सन्निधाय, समागतो जन्मभुवं प्रतीत्थम्॥

विदेश में पवित्र हृदय वाले मित्रों द्वारा अनेकों बार विभिन्न प्रकार से की गई सहायता रूपी पाथेय की गठरी को हृदय में समेटता हुआ अम्बेडकर अपनी जन्मभूमि भारत में लौटा।

(60)

मुम्बय्यां सम्प्रयातोऽसौ विद्याधनधनी यतिः।
आचार्यत्वेन शालायां शिक्षणे संरतोऽभवत्॥

बम्बई नगरी में पहुँचकर विद्या रूपी धन से धनी इस योगी ने आचार्य के रूप में महाविद्यालय में अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया।

(61)

प्रकाण्डं पाण्डित्यं गुणगणनिवासैकनिलयं,
निधानं विद्यानां वचनरचनावाचनमपि।
तवेदं सम्वीक्ष्य प्रमुदितजनस्त्वामभिरतो,
गुणाः पूजास्थानं न च गुणिषु लिङ्गं न च वयः॥

प्रकाण्ड पाण्डित्य, समस्त गुणों की एकमुस्त खान, विद्या का खजाना, एवं वाक्चातुर्य को भी तुममें देखकर समस्त समाज प्रसन्नता का अनुभव करने लगा। क्योंकि गुण ही पूजा के पात्र हैं। गुणवानों में वर्ग, आयु, लिंग आदि कुछ नहीं देखा जाता है।

(62)

शास्त्रमर्मज्ञतां प्राप्तो ज्ञानसूर्यसमो भुवि।
दीप्तिमान् भीमरावोऽयं लोके ख्यातिं समागतः॥

विधि शास्त्र की मर्मज्ञता प्राप्त कर परम ज्ञान रूपी सूर्य तुल्य भीमराव समस्त संसार में प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ।

(63)

स्वीकृतं गौणरूपेण कार्यमध्यापनात्मकम्।
दलितोद्धारकं कार्यं मुख्येनाङ्गीकृतं प्रियम्॥

अम्बेडकर ने अपने जीवन में अध्यापन का कार्य गौणरूप में ही स्वीकृत किया, किन्तु मुख्यरूप से जीवन का लक्ष्य दलितोद्धार ही उसने अङ्गीकार किया।

(64)

विद्वांसो बुद्धिमन्तश्च व्याख्यानं श्रोतुमुत्सुकाः।
सभास्थले प्रयान्ति स्म यत्र भीमेन भाष्यते॥

जहाँ–जहाँ भीमराव प्रवचन करने जाते, वहाँ–वहाँ तत्कालीन विद्वान् एवं बुद्धिमान् लोग श्री भीमराव के गम्भीर एवं तर्कपूर्ण व्याख्यानों को सुनने के लिए उनकी सभाओं में जाते थे।

(65)

यथा रोमाञ्चितं चित्तं सिंहस्य गर्जनं सदा।
कुरुते तथैव लोकेऽस्मिन् भीमस्य गर्जनं ध्रुवम्॥

जिस प्रकार सिंह की गर्जना से प्राणिमात्र का चित्त रोमांचित होता है, उसी प्रकार भीमराव की सत्य गर्जना समाज को रोमांचित करती थी।

(66)

अस्पृश्यताविनाशाय प्रयासा विविधाः कृताः।
उद्घाटितास्तु शिक्षार्थं शिक्षाया आलयाः प्रियाः॥

श्री भीमराव ने अस्पृश्यता के विनाश के अनेक प्रकार के उपाय किये। जिसमें सर्वप्रथम दलितों की शिक्षा के लिए विद्यालयों की स्थापना की।

(67)

गृहे गृहे स्वतो गत्वा दलितास्तेन बोधिताः।
सभ्याः भवन्तु विज्ञाश्च भूयांसः शास्त्रशालिनः॥

श्री भीमराव ने घर-घर जाकर दलितों को प्रेरित किया कि आप सभ्य बनो, विज्ञ बनो, अधिकाधिक शास्त्रों के ज्ञाता बनो।

(68)

जनसम्पर्कतश्चापि पत्रिकाव्याजतोऽपि वा।
दलिताः बोधितास्तेन भाषणैः कर्मभिस्तथा॥

भीमराव ने जनसम्पर्क से, पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से, अपने प्रभावशाली भाषणों और अपने अच्छे कार्यों से दलितों को निरन्तर प्रबोधित किया।

(69)

यत्र यत्र भवन्तिस्म दलितोद्धारिकाक्रियाः।
उत्साहं तत्र तन्वन्ति भीमरावस्य सत्क्रियाः॥

जहाँ-जहाँ जिस क्षेत्र में दलितोद्धारक कार्य होते थे, भीमराव उन सभी को तत्सम्बन्धी उत्तम कार्य के लिए उत्साह प्रदान करते थे।

(70)

कोल्हापुरीयराज्यस्य राजा दलितसेवकः।
तस्य कृतज्ञतां चित्ते भीमो वहति सर्वदा॥

कोल्हापुर राज्य का राजा दलितों का परम सेवक था, इसलिये उसके प्रति भीम के हृदय में हमेशा कृतज्ञता की भावना रहती थी।

(71)

दलिताराधने बाधां वीक्ष्य भीमेन सत्वरम्।
शालायाः शिक्षणं त्यक्तं लाभप्रदमपि प्रियम्॥

अध्यापन कार्य से दलितों की सेवा में भीमराव ने बाधा समझी। इसलिए उसने शीघ्र ही अत्यन्त लाभप्रद व सम्मानित शिक्षक के पद से त्यागपत्र दे दिया।

(72)

बहिष्कृताख्या हितकारिणी सभा, विकासिता तेन जगद्धिताय।
यस्याः प्रभावेण च शासकोऽपि, चिन्तापरोऽभूद् झटितीव तत्र॥

संसार के दलितों के हित के लिए भीमराव ने "बहिष्कृत हितकारिणी" नामक संस्था को विकसित किया। जिसके प्रभाव से शीघ्र ही वहाँ का शासक वर्ग भी चिन्तित हो उठा।

(73)

स्वातन्त्र्ययुद्धश्चलतिस्म तत्र, तत्रत्य वीरा अपि भीमबद्धाः।
अस्पृश्यतायाः शमने प्रवृत्ताः, श्रद्धाभरेणात्र हृदापि सर्वे॥

भीमराव के अस्पृश्यता आन्दोलन के समय स्वतन्त्रता-युद्ध का भी सर्वत्र प्रभाव था, उस युद्ध के योद्धा भी भीमराव की भावना से बंध गये और अस्पृश्यता के शमन में मन से एवं श्रद्धा से प्रवृत्त हो गये।

(74)

जातिप्रथायाः शमनाय नित्यं, सत्यप्रतिष्ठापरिवर्धनाय।
योग्यस्य मानाय तथा प्रियाय, किन्नो कृतं भीमवरेण लोके॥

जातिप्रथा के शमन के लिए, सत्य की प्रतिष्ठा के लिए, योग्य व्यक्तियों के सम्मान के लिए और अपने प्रिय दलित जनों के लिए भीमराव ने संसार में क्या नहीं किया।

(75)

अस्य प्रभावेण प्रबोधितेयं, सत्तापि तद्रक्षणतत्पराभूत्।
सर्वत्र सत्तासनभागधेयं, प्रदत्तमस्मै दलिताय शीघ्रम्॥

भीमराव के प्रभाव से प्रतिबोधित होती हुई सत्ता भी इनके संरक्षण के लिए तत्पर हुई और सत्ता में दलितों के लिए भागीदारी प्रदान की।

(76)

मानवस्याधिकाराणां गुञ्जने तत्कृते तदा।
दलिताः सबलाः जाताः अबुधाः बुद्धिशालिनः॥

भीमराव के मानवाधिकार सम्बन्धी चिन्तन के गुञ्जायमान होने पर दलित एवं दुर्बल व्यक्ति सबल एवं बुद्धिमान् हो गये।

(77)

हिन्दूनां जातिभेदस्य विनाशाय कृतश्रमः।
साफल्यं तत्र न प्राप्य भीमोऽयं व्यथितोऽभवत्॥

हिन्दुओं में व्याप्त जाति भेद के विनाश के लिए निरन्तर परिश्रम करने वाले भीमराव को सफलता न मिलने पर अत्यन्त कष्ट हुआ।

(78)

पाखण्डखण्डने दक्षः परपीडाप्रपीडितः।
भीमरावो महायोगी सर्वत्र जयताद् भुवि॥

पाखण्ड के खण्ड में दक्ष एवं दूसरों के दुःखों से दुःखी होने वाला महायोगी भीमराव समस्त संसार में विजय को प्राप्त करे।

(79)

स्वतन्त्रेभारते जाते दृष्ट्वास्य बुद्धिवैभवम्।
विधिमन्त्रिपदे श्रेष्ठे भीमरावः प्रतिष्ठितः॥

भारतवर्ष के स्वतन्त्र होते ही नेहरू आदि प्रतिष्ठित लोगों ने इनके बुद्धि-वैभव को देखकर विधिमन्त्री के श्रेष्ठ पद पर भीमराव को प्रतिष्ठित किया।

(80)

राष्ट्रवादी महानेष भारतीयो गुणोत्तमः।
पवित्रः शुद्धिचित्तश्च भीमरावो विलोक्यते॥

यह भीमराव महान् राष्ट्रवादी सर्वगुणसम्पन्न, सच्चा भारतीय एवं पवित्र तथा शुद्ध हृदय वाला व्यक्ति था।

(81)

हिन्दून्प्रति च विद्वेषे जातेऽपि मानसेऽनिशम्।
संविधानस्य निर्माणे विद्वेषो नास्य लक्ष्यते॥

श्री भीमराव के मन में हिन्दुओं के प्रति विद्वेष होने पर भी संविधान के निर्माण में यह भावना कहीं भी दिखाई नहीं दी।

(82)

गुरुता महतीत्येषा गरिम्णः परिदृश्यते।
येन न्यायपथो नित्यं रक्षितः पालितस्तथा॥

गरिमाशाली भीमराव का यह एक गौरवपूर्ण व्यक्तित्व है जो उसने हमेशा न्याय मार्ग का संरक्षण एवं परिवर्धन किया।

(83)

हिन्दूवर्गसमाख्यानं विधाने यत्र दृश्यते।
जैनाः बौद्धाश्च सिख्खाश्च सर्वे तत्र सुयोजिताः॥

भीमराव का हिन्दुत्व इसी से परिलक्षित होता है कि संविधान निर्माण में जब हिन्दुओं का वर्ग विभाजन उन्होंने किया तो जैन-सिख-बौद्धादि सभी को हिन्दुओं का अभिन्न अंग बताया।

(84)

धन्यो भीमश्च धन्या ते निश्चला सरला मतिः।
धन्यं कर्म त्वदीयन्तद् यत्र सत्यं समाश्रितम्॥

हे भीम! तुम धन्य हो, तुम्हारी निश्छल एवं सरल मति धन्य है, तुम्हारे समस्त शुभ कार्य धन्य हैं, जहाँ सर्वदा सत्य विद्यमान है।

(85)

हिन्दूनां व्यवहारेण संत्रस्तो भीमभैरवः।
तस्माद् धर्मपरित्यागे बद्धपरिकरोऽभवत्॥

हिन्दुओं के निन्दनीय व्यवहार से दुःखी होते हुए भीमराव ने हिन्दु धर्म के परित्याग का दृढ़ संकल्प किया।

(86)

राष्ट्रवादस्य भावेन भीमेन समलंकृतः।
हिन्दूनां भागरूपोऽयं बौद्धधर्मो न्वहिंसकः॥

राष्ट्रवाद की भावना से प्रभावित भीमराव ने हिन्दुओं के अंगीभूत अहिंसावादी बौद्ध धर्म को स्वीकार किया।

(87)

भीमभावसमायुक्ता भक्ता भक्तिसमन्विताः।
बौद्धधर्मपरा जाता भारते सर्व एव ते॥

भारतवर्ष में मान्य भीमराव की भावनाओं से जुड़े हुए उनके सभी समर्थकों ने भक्तिपूर्वक शीघ्र ही बौद्ध धर्म की दीक्षा ली।

(88)

लोककल्याणकृत्यानां करणे यो निरन्तरम्।
त्यागी गुणी च भीमोऽयं जयताज्जगतीतले॥

लोककल्याण के कार्यों में निरन्तर संलग्न, त्यागी एवं गुणात्मा यह भीमराव संसार में विशेषोत्कर्ष से विराजमान रहे।

(89)

ऋषीणां योगिनां चैव बौद्धधर्मानुसारिणाम्।
पन्थानमनुगच्छन्स स्वर्गलोकं गतो ध्रुवम्॥

बौद्धधर्म के मार्गानुगामी ऋषियों और योगियों के मार्ग का अनुसरण करता हुआ यह भीमराव स्वर्गलोग को प्राप्त हुआ।

(90)

त्वयि स्वर्गं प्रयाते ता ह्यनाथाः सकलाः प्रजाः।
श्रद्धापुष्पभरैः हस्तैः पूजयन्तिस्म भूरिशः॥

हे महामानव! तुम्हारे स्वर्गलोक को प्रस्थान करने से सारे दलित संसार ने अपने को अनाथ एवं असहाय समझते हुए श्रद्धारूपी पुष्पों से भरे हाथों से बार-बार तुम्हें श्रद्धांजलि अर्पित की है।

(91)

मूकाय वाणी भवता प्रदत्ता, निरक्षरेभ्योऽक्षरदानमत्र।
तन्निर्भयत्वं दलिताय दत्तं, किन्नो प्रदत्तं जनताहिताय॥

हे मान्य! तुमने मूक जनों को वाणी दी, निरक्षरों को अक्षर ज्ञान दिया और दलितों को तुमने अभयदान दिया। इतना ही नहीं अपनी प्रिय जनता के हित के लिए आपने अपना क्या कुछ अर्पित नहीं किया। अर्थात् अपना सर्वस्व समाज को अर्पित किया।

(92)

संघर्षपूरितमिदं तव जीवनन्नो,
सौख्यस्य मार्गममलं वितनोतु भूमौ।
आशामिमां हृदि निधाय ददाति तुभ्यं,
श्रद्धाञ्जलिं सुमनसा वचसा जनोऽयम्॥

हे महामानव! संघर्षों से परिपूर्ण तुम्हारा सम्पूर्ण जीवन संसार में सुख के एक प्रशस्त मार्ग को विकसित करे। इस आशा और विश्वास को हृदय में धारण करता हुआ मैं सहृदय मन से काव्य-पुष्पांजलि द्वारा सादर श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं।

(93)

हा हन्त सीदति मनो नितरां मदीयं,
सम्वीक्ष्य वर्गरहितस्य समाजकर्तुः।
वर्षेऽधुना सुविमले सकले शताब्द्याः,
संघर्षवर्गपरकः परिवीक्ष्यतेऽत्र॥

हा! कष्ट है कि वर्ग रहित समाज की संरचना के सूत्रधार डा० भीमराव अम्बेडकर की जन्मशती पर आज उनके प्यारे भारतवर्ष में भयंकर वर्ग-संघर्ष दिखाई दे रहा है, जिससे मेरा मन दुःखित हो रहा है।

(94)

स्वर्गे स्थितोऽम्बेडकरोऽपि दृष्ट्वा, वर्गाग्निदग्धां निजमातृभूमिम्।
सन्तापतापे परितप्यमानः, कष्टानुभूतिं कुरुते यतीन्द्रः॥

स्वर्ग में विराजमान श्रद्धेय डा० भीमराव अम्बेडकर भी अपनी प्यारी मातृभूमि को इस वर्ग-संषर्ष रूपी अग्नि में जलता हुआ देखकर सन्ताप के ताप से परितप्त होता हुआ अत्यधिक कष्ट का अनुभव कर रहा है।

(95)

दलितजनहिताय सर्वसौख्यं विहाय,
विकटपथविशेषस्वीकृतो येन भव्यः।
सकलजनसमाना चिन्तनस्यास्यधारा,
प्रवहतु भुवनेऽस्मिन् सर्वदा तत् सुखाय॥

जिस महामानव ने दलित जनों के कल्याण के लिए अपने सभी सुखों को त्याग कर संघर्ष के अत्युत्कृष्ट एवं विकट मार्ग को अपनाया। समस्त मानव मात्र को समान रूप से मानने वाले भीमराव की चिन्तनधारा संसार में प्राणिमात्र के सुख के लिए बहती रहे।

(96)

गुणिगणगणनायां योऽग्रणी माननीयः,
सहृदयहृदयानां स्नेहपात्रं विशिष्टम्।
सकलमनुजपीडापीडितो दीनबन्धुर्,
जयतु जयतु लोके भीमरावो यतीन्द्रः॥

जो माननीय गुणियों की गणना में अग्रणी, सहृदयवान् व्यक्तियों का विशेष स्नेहभाजन, सम्पूर्ण प्राणियों के पीड़ा से पीड़ित और दीनबन्धु है, वह योगीराज भीमराव संसार में विशेषोत्कर्ष से विराजमान रहे।

(97)

सदयहृदय मित्र? श्रूयतां मे वचांसि,
सकलभुवनमध्ये यस्तुमार्गस्त्वयात्र।
व्यथितजनहितार्थं दर्शितस्त्यागतो वै,
स भवतु विजयी मे प्रार्थनैषा पवित्रा॥

अयि सहृदय मित्र! मेरे वचनों को सुनो। दीनदलित एवं व्यथित जनों के लिए समस्त संसार में त्यागभावना से युक्त जो मार्ग भीमराव ने दिखाया है वह मार्ग समस्त संसार में विशेषोत्कर्ष से रहे। यही मेरी पवित्र प्रार्थना है।

(98)

राष्ट्रस्य भाषा भरतस्य भूमौ, गीर्वाणवाणी भवताद् विचारः।
चित्ते सदा यस्य विराजते स्म, सोऽयं जयेद् भीमवरो जगत्याम्॥

भारतवर्ष में राष्ट्रभाषा संस्कृत हो, इस प्रकार की भावना जिसके मन में सदा विराजमान रहती थी, वह डा० भीमराव अम्बेडकर संसार में विशेषोत्कर्ष से विराजमान रहे।

(99)

येनेदं पठयते काव्यं भीमशतकमुत्तमम्।
विपदस्तस्यनश्यन्ति सौख्यं मिलति सर्वदा॥

जो व्यक्ति इस भीमशतकनामक उत्तम काव्य का पाठ करता है उसकी समस्त विपत्तियां नष्ट होती हैं और निरन्तर सुख की प्राप्ति होती है।

(100)

प्रदेशेह्युत्तराख्ये वै चमोलीमण्डलः प्रियः।
तत्रत्यकविना काव्यं लिखितं भीमबोधकम्॥

उत्तरप्रदेश में चमोली नामक मण्डल के निवासी कवि ने डा० भीमराव अम्बेडकर के व्यक्तित्व को प्रकट करने वाले इस काव्य को लिखा है।

(101)

देववाण्याः प्रचाराय रक्षणाय च साम्प्रतम्।
श्रीकृष्णसेमवालेन रचितं शतकं शुभम्॥

वर्तमान में देववाणी संस्कृत भाषा के प्रचार एवं संरक्षण के लिए कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवाल ने इस उत्तम शतक को लिखा।

प्रियदर्शिनीयम्

1. कीर्तिखण्डः

2. संघर्षखण्डः

3. महाप्रयाणखण्डः

कीर्तिखण्डः

(1)

परमपावनं शक्तिपूजकं, कविवरोत्तमं ज्ञानसागरम्।
मम मतेस्तमस्स्तोमनाशकं, गुरुवरं शुभं नौमि भास्करम्॥

अत्यन्त पवित्र, शक्ति के उपासक, श्रेष्ठ कवियों में उत्तम, ज्ञानसागर, मेरी बुद्धि के अन्धकार को दूर करने वाले पूज्य गुरुवर श्री भास्करानन्द मैठाणी जी को मैं सादर प्रणाम करता हूँ।

(2)

द्रुहिणसेवितां वेदवर्णितां, सुजनपूजितां भाष्यभाषिताम्।
कविजनार्चितां शास्त्रशासिकां, विबुधभारतीं नौमि सादरम्॥

ब्रह्मा के द्वारा आराधित, वेदों में व्याख्यायित, सज्जनों द्वारा पूजित भाष्यों में भाषित, कविजनों द्वारा अर्चित, शास्त्रों को शासित करने वाली देववाणी संस्कृत भाषा को मैं सादर प्रणाम करता हूँ।

(3)

सकलसंस्कृतेरग्रगामिनं, निखिलदेहिनां मार्गदर्शकम्।
शबलतामयञ्चाद्‌भुतात्मकं, तमिह नीवृतं नौमि भारतम्॥

समस्त विश्व की संस्कृतियों के अग्रगामी, प्राणिमात्र के मार्ग-दर्शक, विविधतापूर्ण एवं अद्‌भुत इस भारत देश को मैं सादर प्रणाम करता हूँ।

(4)

विपिनवाटिकापुष्पभूषिते, गिरिगुहागुरुग्रामगर्विते।
सरससागरागारराजिते, मधुरिमाञ्चिते भव्यभारते॥

विविध प्रकार के वन-वाटिका एवं पुष्पों से सुशोभित पर्वतों, गुफाओं एवं श्रेष्ठ गाँवों से गौरवान्वित, जल से परिपूर्ण, समुद्रों से विराजित, माधुर्य से परिपूर्ण भारत वर्ष में श्रीमती इन्दिरा गांधी का जन्म हुआ।

(5)

ऋषिभिरर्चिते विद्वदञ्चिते, कविभिरादृते नेतृभूषिते।
गुणिगणान्विते शान्तिशोभिते, जनवरार्थिते सुप्रयागके॥

ऋषियों द्वारा पूजित, विद्वानों से शोभित, कवियों द्वारा समादृत, राजा और नेताओं द्वारा विभूषित गुणवानों के समूह से युक्त, शान्तिपूर्ण एवं श्रेष्ठजनों द्वारा सम्मानित प्रयाग में श्रीमती इन्दिरा गांधी का जन्म हुआ।

(6)

गगनचुम्बनोत्कण्ठिते शुभे, सुललिते वरे चूर्णलेपिते।
जनवराश्रये भव्यतायुते, भुवनभासितानन्दसद्मनि ॥

गगन को चुम्बित करने के लिए उत्कण्ठित, मंगलमय, सुललित, श्रेष्ठ सुचूर्णलेपित एवं श्रेष्ठजनों के आश्रय से संसार में देदीप्यमान आनन्दभवन में श्रीमती इन्दिरा गांधी का जन्म हुआ।

(7)

सुकृतसंचयैश्चैव नेहरोः, विमलसद्मनि ज्योतिरुत्तमम्।
अजनि या प्रिया सातिविश्रुता, 'प्रिय(सु)दर्शिनी' लोक इन्दिरा॥

पुण्यों के सञ्चय से श्री जवाहरलाल नेहरू के पवित्र घर में जो उत्तम ज्योति प्रज्ज्वलित हुई, वह प्रियदर्शिनी संसार में इन्दिरा गांधी के नाम से प्रसिद्ध हुई।

(8)

जगति मातृभूकार्यसाधिका, सततहर्षिणी द्रव्यवर्षिणी।
जलधिगर्भतो या रमा-समा, समजनीन्दिरा मातृकुक्षितः॥

संसार में मातृभूमि के मंगलमय कार्यों की साधिका, निरन्तर प्रसन्न रहने वाली, धन धान्यादि दान करने वाली श्रीमती इन्दिरा गांधी मातृकुक्षि से समुद्र से लक्ष्मी के समान उत्पन्न हुई।

(9)

विविधदेवतातत्त्वसंयुता-, भगवतीशिवाशक्तिसन्निभा ।
अयि महोज्ज्वले! बाल्यजीवनाद्, भुवि शुभा प्रभा ते प्रकाशते॥

समस्त देवताओं के तत्त्वों से संयुक्त होती हुई भगवती जगदम्बा की तरह निखिल विश्व में बाल्य जीवन से ही तेरी प्रभा प्रकाशित हो रही है।

(10)

जनहिते रताद् भारतप्रियाद्, बुधवरार्चिताच्छ्रीजवाहरात् ।
बहुविधा विधा देशरक्षिका-, अधिगतास्त्वया बाल्यजीवने॥

प्राणिमात्र के हित में संलग्न, भारत के प्रिय, विद्वानों द्वारा सम्मानित श्री जवाहरलाल नेहरू से बाल्य जीवन में ही श्रीमती इन्दिरा गांधी ने देश रक्षापरक अनेक विद्याएं सीखीं।

(11)

स्वपितुराशिषा ज्ञानसंयुतां, निखिलधीमतां हर्षवर्द्धिनीम् ।
जनहितार्थिनीमिन्दिरामयं-, नमति सादरं लोकमातरम्॥

अपने पूज्यपिता के आशीर्वाद से, ज्ञान से परिपूर्ण बुद्धिमानों के हर्ष को बढ़ाने वाली लोककल्याणकारिणी लोकमाता श्रीमती इन्दिरा गांधी को यह संसार प्रणाम करता है।

(12)

बहुविदेशिनां शासने स्थितं, विमलभारतं दुःखपीडितम्।
नयनगोचरीकृत्य सत्वरं, स्वयमपीन्दिरा दुःखिताऽभवत्॥

बहुत काल तक विदेशियों के शासन में शासित, दुःख पीड़ित पवित्र भारत को शीघ्र ही दृष्टिगत करती हुई स्वयं इन्दिरा गांधी अत्यन्त दुःखित हुई।

(13)

सितवपुष्मतां नाशहेतवे, रिपुरहस्यभिन्नाम वानरी।
शिशुजनैर्युता धर्षिणीचमूः, वयसि नूतने निर्मिता त्वया॥

तुम्हारे द्वारा बचपन में अंग्रेजों के नाश के उद्देश्य से दुश्मनों के रहस्यों का भेदन करने वाली छोटे बच्चों की वानरी नाम की शत्रुभेदनाशक सेना गठित की गई।

(14)

प्रथितधीमतां पार्श्ववर्तिनां, शुभसुयोगतो बाल्यजीवने।
हितकरीं महाशक्तिमैश्वरीम्, उपगतैव या तां नमाम्यहम्॥

प्रख्यातनामा बुद्धिमानों के सत्संग के कल्याणकारी सुयोग से जिस इन्दिरा गांधी ने बाल्यकाल में ही हितकारी ईश्वरीय महाशक्ति को प्राप्त किया, उस इन्दिरा गांधी को मैं प्रणाम करता हूँ।

(15)

परमपण्डिताच्छास्त्रपारगाद्, अधिगतो यया ज्ञानसञ्चयः।
निपुणता त्वया प्रापि नीतिषु, प्रखरता मतौ चैव सत्वरम्॥

शास्त्रपारंगत प्रसिद्ध पण्डितों से जिसने ज्ञानार्जन किया और शीघ्र नीति शास्त्र में निपुणता एवं बुद्धिवैभव में प्रखरता प्राप्त की।

(16)

निजमतेरियं वर्द्धनच्छलाद्, गतवती भुवो ज्ञानसद्मसु।
अतितरामभूद् धीमतीन्दिरा, जनहितैषिणी लोकमण्डले॥

श्रीमती इन्दिरा गांधी अपने बुद्धि वैभव के विकास के व्याज से विभिन्न ज्ञान-मन्दिरों में शिक्षा प्राप्त करने गई। जिससे यह विश्व मण्डल में लोक कल्याणकारिणी छवि के रूप में प्रसिद्ध हुई।

(17)

निजधरामिमां वीक्ष्य दुःखितां, सुखरसैः सदा पूरितं प्रियम्।
कुसुमितं नवं यौवनं त्वया, झटिति पातितं क्रान्तिवाडवे॥

अपनी प्यारी भारतभूमि को दुःखी देखकर समस्त सुखों से परिपूर्ण एवं अपने कुसुमित नव-यौवन को क्रान्तिरूपी वाडवाग्नि में झोंक दिया।

(18)

सितशरीरिणां द्रोहकारणाद्, मुहुरयादियं कृष्णमन्दिरे।
विचलिता न तु क्रान्तिभास्वती, स्थिररसा धृतिर्भाति ते हि सा॥

अंग्रेजों के विरुद्ध आन्दोलनों के आयोजनों से अंग्रेजों ने द्रोहवश बार-बार श्रीमती इन्दिरा गांधी को कारागार में डाला। किन्तु क्रान्ति से देदीप्यमान यह जरा सी भी विचलित नहीं हुई। जिससे आपका स्थिर धैर्य सर्वत्र शोभायमान हो रहा है।

(19)

सुरगृहादपि श्रेष्ठतामयी, भवति सर्वदा जन्मदायिनी।
अयि! ततश्च ते मातृमृत्युना, किमभवन्न वै दुःखदारुणम्॥

देवगृह स्वर्ग से भी जन्म देने वाली माता श्रेष्ठ होती है, इसलिए हे इन्दिरा गांधी! क्या तुम्हें अपनी माता की मृत्यु से दारुण दुःख नहीं हुआ? अर्थात् अवश्य हुआ।

(20)

सरलशैशवं चञ्चलं प्रियं, सुखमये यदङ्केऽतिपावने।
परमनायि किं तन्मृतिश्च ते, परमकष्टदा नात्र संशयः॥

सरल चंचल एवं प्रिय शैशव जिस माँ की पवित्र गोद में जिसने व्यतीत किया क्या उसकी मृत्यु तेरे लिए कष्ट देने वाली नहीं हुई? अर्थात् अत्यन्त कष्टदायी हुई, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

(21)

द्विजकुलं निजं जन्मना यया, विबुधसेवितं पावितं प्रियम्।
तदपि भूतले नूतना दिशा, परिणयेन वै दर्शिता त्वया॥

देवताओं द्वारा भी सेवित प्रिय ब्राह्मणकुल को जिसने अपने जन्म से पवित्र किया तो भी अपने विवाह के द्वारा विश्व को तुमने एक नई दिशा प्रदान की।

(22)

द्युमणिचन्द्रयोस्तुल्यतां गतौ, गुणविशेषयोः सर्वमान्ययोः।
ललितपुत्रयोर्जन्मदायिनीं, नमति सादरञ्चेन्दिरां जगत्॥

विशेष गुणों के द्वारा सूर्य और चन्द्रमा के समान सर्वमान्य सुन्दर दो पुत्रों को जन्म देने वाली इन्दिरा गांधी को सारा विश्व आदरपूर्वक प्रणाम करता है।

(23)

हृदयवासिनः पूज्यस्वामिनो, निधनवेदना चातिकष्टदा।
असमयेऽप्यभूद् वज्रदारुणा, धृतिगुणेन तां सोढवत्यसौ॥

हृदयवासी पूज्य स्वामी की वज्र के समान दारुण अत्यन्त कष्टदायी असामयिक मृत्युजन्य पीड़ा को इन्दिरा गांधी ने अत्यन्त धैर्य से सहन किया।

(24)

नयविदः पितुः प्रेमतो यया, निखिलनीतयः शिक्षिताः पुराः।
भ्रमणकारिणीं विश्वमण्डले, नयविदुत्तमां तां नमाम्यहम्॥

प्रारम्भ से नीतिशास्त्र में निपुण पूज्य पिता जी ने प्रेमपूर्वक जिस इन्दिरा गांधी को समस्त राजनीति के पाठ पढ़ाये, ऐसी नीति-शास्त्र में दक्ष समस्त भूमण्डल में भ्रमणशील श्रीमती इन्दिरा गांधी को मैं प्रणाम करता हूँ।

(25)

तव गुणोत्तमां वीक्ष्य योग्यतां, दलसुदिग्गजैः देशनेतृभिः।
अयि! नियोजिता त्वं तदैव हि, जनसमादृतेऽध्यक्षसत्पदे॥

उत्तमगुण युक्त तुम्हारी योग्यता को देखकर कांग्रेस के दिग्गज नेताओं के द्वारा इन्दिरा गांधी को शीघ्र ही लोक पूजित (कांग्रेस) पाटी के सर्वोच्च अध्यक्ष पद पर नियुक्त किया गया।

(26)

जनकनेहरोः मृत्युदुःखजं, कठिनतामयं कष्टमप्रियम्।
न गणितं त्वया धैर्यशालिनि!, धृतिमयं मनो धन्यमस्ति ते॥

हे धैर्यशालिनी इन्दिरा गांधी! तुमने पूज्य पितृचरण नेहरू की मृत्यु से उत्पन्न अत्यन्त अप्रिय कष्टकारी एवं कठिन डगर की परवाह न कर लोकहित में अपना मन लगाया। इस तरह तुम्हारा धैर्यशाली मन धन्य है।

(27)

भरतभूशुभे शासने स्थिताः, बुधवरा यदा शास्त्रिणस्तदा।
मतिमतीन्दिरा मन्त्रितां गता, महति विश्रुते सूचनालये॥

महाराजा भरत की इस पुण्यभूमि भारत में जब परम विद्वान् श्री लालबहादुर शास्त्री प्रधानमन्त्री थे, तब श्रेष्ठ बुद्धिमती श्रीमती इन्दिरा गांधी ने प्रसिद्ध एवं विशाल सूचना मन्त्रालय में मन्त्रीपद को सुशोभित किया।

(28)

अहितबुद्धिभिः पाकशासकैः-, सह रणक्षणे भीतिकारणे।
विमलया धिया सूचनालयः, सफलतां गतश्चालितस्त्वया॥

अहितकारी बुद्धि वाले पाकिस्तानी शासकों के साथ भयंकर युद्ध के समय हे इन्दिरे! तुम्हारे द्वारा निर्मल बुद्धि से सूचना मन्त्रालय का सफलतापूर्वक संचालन किया गया।

(29)

तव करेऽर्पितः सूचनालयो, हितकरस्तदा जातवान्महान्।
अतिमनोज्ञया धन्यया धिया, प्रकटितं यशस्ते महोज्ज्वलम्॥

तुम्हारे हाथ में समर्पित सूचना मन्त्रालय उस समय भारत के लिए अत्यधिक लाभदायक सिद्ध हुआ और अतिसरल एवं श्रेष्ठ बुद्धि के कारण तुम्हारा स्वच्छ यश प्रभासित हुआ।

(30)

उपगतो यदा ताशकन्दके, सुमनसा सदा शान्तिसेवकः।
परहिते रतः श्रीबहादुरः, उपरतस्तदा हा जनप्रियः॥

सर्वदा शान्ति के प्रयासों के लिए क्रियाशील, दूसरों की भलाई में रत, सहृदय श्री लालबहादुर शास्त्री जब ताशकन्द में सम्मेलनार्थ गये, हाय, दुःख है कि लोकप्रिय जनसेवक वहीं दिवंगत हो गये।

(31)

विकलता तथाऽनाथभावना, विषमतापि चात्यन्तहेयता।
विवशता तदा म्लानतापि वा, जनमनस्सु हा भारतेऽभवत्॥

हाय खेद है कि, उस समय भारतीय जन मानस में व्याकुलता, अनाथ होने का भाव, उद्विग्नता, अत्यन्त हीनता, किंकर्त्तव्यविमूढत्व तथा निराशा उत्पन्न हो गयी थी।

(32)

उपरते बुधे श्रीबहादुरे, निखिलनायकाः सङ्गतास्तदा।
निपुणतां नये वीक्ष्य तेऽतुलां, प्रमुखमन्त्रिणस्ते पदं ददुः॥

परमज्ञानी श्री लालबहादुर शास्त्री के दिवंगत हो जाने पर देश के सभी नेता उस समय एकत्र हुए और उन्होंने नीति-ज्ञान में तुम्हारी अनन्य कुशलता को देखकर भारत के प्रधानमन्त्री का पद तुम्हें सौंप दिया।

(33)

प्रमुखमन्त्रिणस्त्वां पदे प्रिये, नयनगोचरीकृत्य नायकाः।
मुदमितास्तदा देशवासिनः, सकलभारते त्वज्जयोऽभवत्॥

प्रधानमन्त्री के लोकप्रिय पद पर तुम्हें देखकर देश के नेता और निवासी सभी अत्यन्त हर्षित हुए और सम्पूर्ण भारत में तुम्हारी जय-जयकार हो उठी।

(34)

तिलकगोखलेगान्धिनां यया, सुमतमुत्तमं पूरितं सदा।
जगति मातृभूकार्यसाधिका, विजयतामियं सेन्दिरा वरा॥

जिसके द्वारा बाल गंगाधर तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले और महात्मा गांधी के उत्कृष्ट सिद्धान्त सर्वदा क्रियान्वित हुए, संसार में अपनी मातृभूमि भारत के कार्यों को सिद्ध करने वाली उस श्रेष्ठ यश वाली इन्दिरा की सर्वदा विजय हो।

(35)

विबुधमन्दिरं विद्वदाश्रयं, विमलभारतञ्चातिशोभनम् ।
सुखमयं दृढं धान्यसंयुतं, कृतमहो त्वया स्वार्यकर्मभिः॥

अहो! आश्चर्य है कि तुमने अपने श्रेष्ठ कार्यों के द्वारा भारत को बुद्धिमानों का धाम, विद्वानों का आश्रय स्थल, स्वच्छ, अत्यन्त सुशोभित, सुखमय, मजबूत और धनधान्य से सम्पन्न बना दिया।

(36)

निजहिते रतान् स्वार्थतत्परान्, कुटिलनायकान् वीक्ष्य सत्वरम्।
निजदलात् पृथक् कृत्य तांस्त्वया, सुखदशासनं भारते कृतम्॥

सर्वदा अपनी भलाई में लगे हुए स्वार्थी कुटिल नेताओं का निरीक्षण कर उनको तुरन्त अपने दल से पृथक् करके तुम्हारे द्वारा भारत में सुखद शासन की स्थापना की गयी।

(37)

विधिविधानतो राष्ट्रभूपतेः, चयनकर्मणि द्रोहकारिणाम्।
अयि! कृतं त्वया हृत्सु पीडनं, विजयतां गते श्रीगिरेरिह॥

हे इन्दिरे! विधिपूर्वक किये जाने वाले राष्ट्रपति के चुनाव कार्य में विद्रोह करने वाले नेताओं के हृदयों की आकांक्षाएं तुम्हारे द्वारा पीड़ित की गयीं जब श्री वी. वी. गिरि राष्ट्रपति के पद पर विजयी हुए।

(38)

प्रमुखनायकान् देशसेविनः, प्रतिनियोजिता देशरक्षणे।
निजधिया त्वया भारतं तदा, रिपुसमूहतो रक्षितं खलु॥

भारत के सच्चे सेवक प्रमुख नेताओं को देश की रक्षा में प्रतिनियुक्त करके, तुम्हारे द्वारा उस समय अपनी बुद्धि से दुश्मनों के समूह से भारत की रक्षा की गयी।

(39)

तव विरोधिनश्चाततायिनो, वितथभाषिणः छद्मकारिणः।
प्रतिगता गुहाभ्यन्तरं जनाः, तिमिरवत् समे भास्करोदये॥

तुम्हरे विरोधी, क्रूर, मिथ्याभाषी, षडयन्त्रकारी लोग गुफाओं के अन्दर वैसे ही छिप गये जैसे सूर्य के उदय होने पर अन्धकार छिप जाता है।

(40)

सकलकर्मसु प्रायशः स्थिरो, धृतिमति! त्वया बुद्धिवैभवैः।
हितकरो जयः प्राप्त इन्दिरे! प्रकटयत्ययं ते सुदक्षताम्॥

हे धैर्यशालिनी श्रीमती इन्दिरा! तुमने अपने बुद्धिवैभव के द्वारा विशेषतः सभी कार्यों में स्थिर और कल्याणकारी विजय प्राप्त की, इससे तुम्हारी कार्यदक्षता प्रकट होती है।

(41)

अतुलकर्मभिः सौम्यवृत्तिभिः, सुदृढनिश्चयैः कूटनीतिभिः।
विफलिताः कृताः शत्रवो यया, विजयतां सदा धीमतीन्दिरा॥

जिसने अपने अद्वितीय कार्यों, सौम्य संस्कारों, दृढ़ निश्चय और कूटनीति से शत्रुओं को विफल कर दिया, वह बुद्धिमती इन्दिरा सदा विजय प्राप्त करे।

(42)

सबलशासकैः भ्रष्टतायुतैः, धनिजनैः कृतं रक्तशोषणम्।
जनगणस्य वै वीक्ष्य दीनतां, धनगृहाः कृताः राष्ट्रसम्पदः॥

भ्रष्टाचारी बलशाली शासकों और धनिक जनों के द्वारा जन सामान्य का रक्त शोषण और जन-समुदाय की गरीबी को देखकर तुमने बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया।

(43)

अहितकारकं साम्यबाधकं, बहुतरं तथा भारवर्द्धकम्।
नृपतिसौविधं लोकहेतवे, निजधिया त्वया तद् व्यपाकृतम्॥

देश के लिए अहितकारी, साम्यवाद मे बाधक, खर्चीली और भारकारी राजाओं की सौकर्य वृत्ति को तुमने बुद्धिमत्ता पूर्वक लोक कल्याण के लिए बन्द कर दिया।

(44)

अभिमतं प्रति द्वेषकारिणः, सदसि तांश्च विश्वासघातिनः।
नयनगोचरीकृत्य सत्वरं, पुनरकारि निर्वाचनं त्वया॥

संसद में विश्वासमत के प्रति द्वेष रखने वाले विश्वासघाती नेताओं का निपुणता पूर्वक निरीक्षण करके तुमने तुरन्त दुबारा चुनाव करवा दिये।

(45)

सकलभारते देशवासिभिः, जनहिते रतं बुद्धिसंयुतम्।
निपुणतामयञ्चातिनिर्मलं, बहु समर्थितं ते दलं तदा॥

उस समय समस्त भारत में देशवासियों के द्वारा लोक कल्याण में रत, बुद्धि पूर्वक कार्य करने वाले योग्यता से परिपूर्ण और स्वच्छ छवि वाले तुम्हारे दल को अत्यधिक समर्थन दिया गया।

(46)

प्रमुखमन्त्रिणोऽभ्युन्नते पदे, निखिलनायकैः त्वं नियोजिता।
मुदमितास्तदा देशवासिनः, जनवराः समे सौख्यवाञ्छकाः॥

सभी नेताओं ने देश के प्रधानमन्त्री के उच्च पद पर तुम्हें नियुक्त किया। तब देश का सुख चाहने वाले सभी भारतवासी श्रेष्ठ लोग अति प्रसन्न हुए।

(47)

अवनतेर्महत् कारणं परं, धनविहीनतां वीक्ष्य भारते।
प्रतिदिनञ्च तां हर्तुमिन्दिरे! स्थिरधिया त्वया योजनाः कृताः॥

भारत में गरीबी को अवनति का सबसे बड़ा कारण मान कर हे इन्दिरे! तुम्हारे द्वारा स्थिर चित्त से उस गरीबी को दूर करने के लिए प्रतिदिन विविध योजनाएं बनायीं गयीं।

(48)

दलितदीनवर्गाल्पसंख्यकान्, हरिजनान्प्रति सौम्यतामयी।
विमलभावना वर्तते सदा, मनसि वाचि ते कर्मसु प्रिया॥

दलित, गरीब, अल्पसंख्यक और हरिजन वर्ग के प्रति अनुराग रखने वाली तुम्हारे मन, वचन और कर्म मे सर्वदा प्रियकारिणी निर्मल भावना रहती है।

(49)

विमलभारतं भा-रतं भुवि, सततमीक्षितुं पार्श्ववर्तिभिः।
सबलशासकैः साकमुत्तमा, बहुविधाः कृतास्सन्धयस्त्वया॥

संसार में विस्तृत भारत के निर्मल यश को निरन्तर अवलोकन करने जो पड़ोसी देशों के समर्थ शासक भारत में आये, उनके साथ तुमने देश के कल्याण के लिए विभिन्न उत्तम सन्धियाँ कीं।

(50)

प्रगतिमिन्दिरे! भारतस्य ते, द्रुततरामिमां वीक्ष्य मञ्जुलाम्।
मुगलशासकः पाकनायकः, रिपुरभूदसौ कारणं विना॥

हे इन्दिरे! तुम्हारे भारत की त्वरितगति से होती हुई सुन्दर प्रगति को देखकर मुस्लिम शासक पाकिस्तान का राष्ट्रपति बिना कारण भारत का दुश्मन हो गया।

(51)

विमलवङ्गभूव्याजतः सदा, विकलकारकः पाकनायकः।
समधिकं त्वया दण्डितश्शुभे! न तु कदाप्यसौ विस्मरिष्यति॥

निर्मल बांग्लादेश के माध्यम से तुमने पाकिस्तान के शासक को अत्यन्त पीड़ा पहुँचाने वाले दण्ड से दण्डित किया। जिसे वह कभी नहीं भूल सकेगा।

(52)

सुखसमृद्धिभिः ज्ञानराशिभिः, विमलकान्तिभिः मान्यतादिभिः।
सपदि पूरितं भारतं यया, विजयसे सदा सैव चेन्दिरे॥

हे इन्दिरे! जिसके द्वारा भारत को सुख समृद्धि, ज्ञान राशि, स्वच्छ कान्ति और मान्यताओं से एक साथ पूरित किया गया, वह तुम ही हो और तुम सर्वदा विजय प्राप्त करो।

(53)

विधिकृपान्विता मानवाः समे, स्ववयवैः समैः तुल्यतां गताः।
इति निरीक्षितं दर्शनं यया, विजयते तया भारतं भुवि॥

प्रभु की कृपा से सभी मनुष्य शरीरादि अवयवों के समान है जिससे जाति एवं वर्ग भेद नहीं होना चाहिये, इस प्रकार के दर्शन को जिसने प्राणिमात्र में देखा है उसके द्वारा भारत विजय को प्राप्त कर रहा है।

(54)

जगति याऽखिले वर्गभिन्नता, मतविभिन्नता सौख्यनाशिका।
मनसि निर्मले नास्ति ते ह्यतः, निजगुणैर्बुधैः पूज्यसे सदा॥

जो समस्त संसार में प्रचलित वर्ग भेद, मत विभेद और सौख्य नाशक प्रवृत्तियाँ हैं वे तुम्हारे स्वच्छ मन में नहीं है। इसीलिए अपने गुणों के कारण तुम विद्वानों द्वारा हमेशा पूजी जाती हो।

(55)

प्रतिदिनं नवं सूचनाप्रदं, विचरणात्मकं स्वार्यभट्टकम्।
प्रियमुपग्रहं प्रेष्य व्योम्नि वै, विहितमुन्नतं भारतं त्वया॥

प्रतिदिन नयी सूचनाओं को प्रदान करने वाले विचरणशील, उत्तम और प्रिय आर्यभट्ट उपग्रह को अन्तरिक्ष में भेजकर तुम्हारे द्वारा भारत को समुन्नत किया गया।

(56)

अणुपरीक्षणं शक्तिसूचकं, कृतमहो त्वया यन्मरुस्थले।
अयि सुसौख्यदे! तेन भारतं, भुवनमण्डले गौरवायते॥

हे सौख्यदायिनि! तुम्हारे द्वारा मरुस्थल में जो शक्ति सूचक, आश्चर्यजनक परमाणु परीक्षण किया गया, उससे भारत सम्पूर्ण संसार में गौरव को प्राप्त हो रहा है।

(57)

कुटिलतायुतै वञ्चकै जनैः, विमलतायुतं कीर्तिमण्डितम्।
चरितमुज्ज्वलं ते गुणैर्युतं, कलुषतायुतं कर्तुमीप्सितम्॥

तुम्हारे गुणों से युक्त, यश से मण्डित, स्वच्छता से युक्त, उज्ज्वल चरित्र को दुष्ट स्वभाव वाले वञ्चक लोगों के द्वारा कलुषित करने का प्रयत्न किया गया।

(58)

सकलभारतादागतैः जनैः, विहितमुत्तमं सौहृदात्मकम्।
तव समर्थनं दूषयत्यहो, सततमेव तान् वञ्चकान् जनान्॥

आश्चर्य है कि समस्त भारत से आये हुए लोगों के द्वारा सम्पूर्ण सहयोगात्मक तुम्हारा उत्तम समर्थन उन वञ्चक लोगों को उद्वेलित कर रहा है।

(59)

निजधरां दृढां वीक्षितुं त्वया, सुखकरी स्थितिश्चञ्चलापदः।
इयमहो महालाभकारिणी, सकलभारते घोषिताऽधुना॥

अपनी भूमि को दृढ़ बनाने के लिए तुम्हारे द्वारा समस्त भारत में विपत्ति को दूर करने वाली, सुख देने वाली अत्यधिक लाभदायक अत्यन्त क्षणिक इस आपातृस्थिति को आपने समस्त भारत में तुरन्त घोषित किया।

(60)

तव मतेः महोदारतामहो, सहनशीलतां वीक्ष्य ये शठाः।
विमलभारते दुष्टतां गता, सपदि ते त्वया दण्डिता जनाः॥

प्रसन्नता का विषय है कि तुम्हारे बुद्धि की अत्यधिक उदारता और सहनशीलता को देखकर जो दुष्ट इस निर्मल भारत में दुष्टता को प्राप्त हुए, वे तुम्हारे द्वारा तुरन्त दण्डित किये गये।

(61)

दृढपरिश्रमो दूरवीक्षणं, स्थिरविचारिता स्वानुशासनम्।
तव समे विचारा इमेऽधुना, भवहितार्थमुद्घोषिता जनैः॥

दृढ़ परिश्रम, दूरदर्शिता, दृढ़विचार, आत्मानुशासन तुम्हारे ये सभी विचार लोगों के द्वारा लोक कल्याण के लिए उद्घोषित किये गये।

(62)

अभिनवा त्वया क्रान्तिदर्शिका, जनहितार्थमत्यन्तमद्भुता।
विपदि सौख्यदा सूत्रविंशतेः, झटिति घोषिता कार्यपद्धतिः॥

तुम्हारे द्वारा लोक कल्याण के लिए नूतन क्रान्तिदर्शी अत्यन्त अद्भुत, विपत्ति में सौख्य देने वाली बीस सूत्रीय कार्य पद्धति अतिशीघ्र घोषित की गयी।

(63)

प्रमुदिता जनाश्शान्तिसंयुता, नियमिता जनाः कार्यसंरताः।
दृढतरा जनाः सत्यसंयुताः, सकलभारते सन्ति साम्प्रतम्॥

इस समय समस्त भारत में लोग प्रसन्न, शान्ति सम्पन्न, नियमित, कार्यशील, दृढ़चित्त और सत्यनिष्ठ हैं।

(64)

सरणिभद्रता गेहशुभ्रता, विपणिनम्रता कार्यदक्षता।
तरणितीव्रता सर्वसौम्यता, भवति भव्यता भारतेऽधुना॥

इस समय भारत में मार्ग में कल्याण, घर में तेज, बाजार में विनम्रता, कार्य में दक्षता, सूर्य के समान तीव्रता, सब जगह सौम्यता तथा भव्यता है।

(65)

भवति हाटके मूल्यन्यूनता, जनमनस्सु वै छद्मशून्यता।
तव सुशासने दुष्टदीनता, भवति भारते जातिहीनता॥

भारत में तुम्हारे उत्कृष्ट शासन के अन्तर्गत बाजार में मूल्य में न्यूनता, जनमानस में छल का अभाव, दुष्टों की दरिद्रता और सर्वत्र जाति विहीनता हो गयी है।

(66)

कुशलताऽऽगता कार्यपद्धतौ, दलितभारते सम्पदागता।
मनुजताऽऽगता श्रेष्ठताऽऽगता, तव सुशासने का च नागता॥

तुम्हारे उत्तम शासन काल में कार्य पद्धति में कुशलता आ गयी, दलित भारत में सम्पत्ति, मानवता और श्रेष्ठता आ गयी, ऐसी कौन सी उन्नति है जो तुम्हारे शासन में नहीं आयी? अर्थात् सभी प्रकार की उन्नति आयी।

(67)

प्रखरताऽऽगता स्थैर्यसंयुता, सरलताऽऽगता दक्षतामयी।
तव कृपान्वितौ नीतिपद्धतौ, नव दिशाऽऽगता ते सुशासने॥

तुम्हारे सुशासन के समय भारत में स्थिरता युक्त तीव्रता और दक्षता युक्त सरलता आ गयी। तुम्हारे संरक्षण में सम्पन्न नीति पद्धति में नयी दिशा आ गयी।

(68)

विवशता गता दीनता गता, कुटिलता गता हीनता गता।
चपलता गता रूढिता गता, तव सुशासने क्षुद्रता गता॥

तुम्हारे उत्तम शासन काल में विवशता, गरीबी, दुष्टता, हीनता, चंचलता, रूढ़िवादिता आदि बुराइयां भारत से चली गयीं।

(69)

मलिनता गता तस्करी गता, शिथिलता गता क्लिष्टता गता।
कृपणता गता धूर्तता गता, तव सुशासने नीचता गता॥

तुम्हारे सुशासन काल में भारत से मलिनता, ढीलापन, काठिन्य, कंजूसी, धूर्तता और नीचता जैसी बुराइयां दूर चली गयीं।

(70)

कृषिरताश्च हा भूमिवञ्चिताः, कृषकमानवाः दुःखपीडिताः।
अयि कृपापरे! भूमिसंयुताः, प्रकटयन्त्यमी ते कृतार्थताम्॥

कृषिकार्य में लगे भूमिहीन दुःखी किसानों को तुमने भू स्वामी बनाया। हे कृपापरायणे! ये कार्य तुम्हारे परमार्थी व्यक्तित्व को प्रकट करते हैं।

(71)

परिणयक्षणे विघ्नवर्द्धिनी, दुहितृकष्टदा चातिदूषिता।
क्रयणपद्धतिः साम्प्रतं त्वया, वरजनस्य सा नाशिता शुभे!

हे मंगलकारिणि! विवाह के समय विघ्न बढ़ाने वाली, पुत्री को कष्ट पहुंचाने वाली और अत्यन्त दूषित (लड़की के पिता द्वारा) दूल्हा खरीदने की प्रथा इस समय तुमने बन्द कर दी है।

(72)

अशनदायकं नीतिरक्षकं, वसनदायकं भीतिनाशकम्।
व्यसननाशकं शक्तिदायकं, विजयतां सदा ते सुशासनम्॥

भोजन देने वाला, नीतियों की रक्षा करने वाला, वस्त्र देने वाला, भय को मिटाने वाला, व्यसनों को नाश करने वाला और शक्तिदायक तुम्हारा शासन सर्वदा विजय को प्राप्त हो।

(73)

अमलचेतसां सौख्यवर्द्धिनीं, महितमानुषामोदकारिणीम्।
मधुरभाषिणीं ज्ञानदायिनीं, नतिततिः प्रियामिन्दिरां प्रति॥

निर्मल चित्त वाली, सुख-समृद्धि में वृद्धि करने वाली, जनकल्याण करने वाली, आनन्ददायिनी मधुरभाषिणी, ज्ञान देने वाली उस श्रेष्ठ इन्दिरा गांधी के प्रति मेरी विनम्र प्रणामाञ्जलि है।

(74)

गुणवती प्रभोश्चिन्तने रता, गुणिगणार्चिता सत्यवादिनी।
जनहितार्थिनी मानवर्द्धिनी, जयतु सेन्दिरा लोकपूजिता॥

प्रभु के चिन्तन में दत्तचित्त, गुणवती, गुणीजनों के द्वारा मान्य, सत्य बोलने वाली, लोक कल्याण चाहने वाली, सम्मान बढ़ाने वाली और जनता द्वारा पूजित वह इन्दिरा विजय प्राप्त करे।

(75)

विभववर्द्धिनी विश्वमोहिनी, विषयधर्षिणी हर्षवर्षिणी।
स्थितिविचारिणी धैर्यधारिणी, जयतु ते मतिः कष्टहारिणी॥

समृद्धि को बढ़ाने वाले, विश्व का ध्यान आकर्षित करने वाली, दुर्व्यसनों को नाश करने वाली, हर्ष की वर्षा करने वाली, स्थितियों पर विचार करने वाली, धैर्य धारण करने वाली और कष्टों को दूर करने वाली तुम्हारी बुद्धि विजय प्राप्त करे।

(76)

प्रतिपलं चलद् वायुवेगवन्, मतिगतिर्न ते ज्ञायते बुधैः।
द्रुततरा तथा सूक्ष्मरूपिणी, मतिरहो महाश्चर्यकारिणी॥

वायु के वेग के समान प्रतिपल तीव्र चलने वाली तुम्हारी बुद्धि की गति विद्वान् भी नहीं जान पाते हैं। किन्तु आश्चर्य है कि तुम्हारी तीव्र गति वाली बुद्धि अत्यन्त सूक्ष्म रूपिणी है, जो सबको अचम्भित करने वाली है।

(77)

भुवनभास्करा राजनायकाः, मतिमतां वरा नीतिधारकाः।
धृतिमतीं परां वीक्ष्य ते मतिं, ननु नमन्ति त्वां श्रद्धया समे॥

पृथ्वी पर अन्य देशों के शासक, राजनेता, बुद्धिमान् नीति निर्धारक सभी श्रेष्ठजन तुम्हारी धैर्य शालिनी कुशाग्र बुद्धि को देखकर निश्चय ही तुम्हें श्रद्धा के साथ प्रणाम करते हैं।

(78)

विमलतामयं चित्तहारकं, कलुषितं प्रति क्रोधदर्शकम्।
सरलतामयं सूक्ष्मदर्शकं, जयतु वीक्षणं ते सुधामयम्॥

स्वच्छता से युक्त, चित्त को आकर्षित करने वाला, दुष्प्रवृत्तियों के प्रति क्रोध प्रदर्शक, सरलता से युक्त, सूक्ष्मदर्शी अमृतमय तुम्हारा निरीक्षण विजय प्राप्त करे।

(79)

कुमतिमज्जनाः पामरा अपि, सुखरसात्मिकां पावनीं शुभाम्।
अयि! निशम्य ते भारतीमिमां, तव समर्थकास्ते भवन्ति हि॥

हे (इन्दिरे!) मतिभ्रष्ट, कृतघ्न लोग भी तुम्हारी सुख प्रदान करने वाली, कल्याणकारिणी, पवित्र और रसयुक्त भाषा को सुनकर निश्चित रूप से तुम्हारे समर्थक हो जाते हैं।

(80)

सकलसम्पदस्त्यागतो यया, बहुविधा जगन्मङ्गलक्रियाः।
परमहर्षतः सर्वदा कृताः, जयतु सेन्दिरा त्यागशोभिता॥

जिसके द्वारा अपनी समस्त सुख-सम्पत्ति का त्याग किया गया और अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक कई प्रकार से लोक कल्याण के कार्य सम्पन्न किये गये। ऐसी त्याग की मूर्त्तिमती इन्दिरा सदा विजय प्राप्त करे।

(81)

मनसि ते दया वर्ततेऽनिशं, प्रकटसौहृदं सज्जनं प्रति।
हृदि विराजते धर्मभीरुता, विदितमुत्तमं ते यशो भुवि॥

तुम्हारे मन में सर्वदा दया रहती है, (व्यवहार में) सज्जनों के प्रति सहृदयता प्रकट होती है। हृदय में धर्म का भय विराजमान रहता है, इस प्रकार का तुम्हारा उत्तम यश लोकप्रसिद्ध है।

(82)

अतिदयान्वितां लोकपूजितां, प्रमुदितां शुभां भव्यभाविनीम्।
जनपदाश्रितां स्वप्रकाशिता-, मयमहञ्चतां नौमि सादरम्॥

अत्यधिक दया से युक्त, जनता द्वारा सम्मानित, प्रसन्नचित्त, मंगलकारिणी, उत्कृष्ट विचार शील, जनपद की आश्रय, स्वतः सत्कर्मों के द्वारा प्रकाशित होने वाली उस इन्दिरा गांधी को मैं सादर प्रणाम करता हूँ।

(83)

अमृतवर्षिणी सौम्यदर्शिनी, विजयकारिणी दुःखहारिणी।
अरिविमर्दिनी लोकहर्षिणी, जयतु सेन्दिरा क्रान्तिरूपिणी॥

अमृत की वर्षा करने वाली, मधुर दर्शन वाली, विजय प्रदान करने वाली, दुःख दूर करने वाली, दुश्मनों का नाश करने वाली, जनता को हर्ष देने वाली, क्रान्ति रूपिणी वह इन्दिरा विजय प्राप्त करे।

(84)

सुमतिदायिनी दैन्यहारिणी, प्रबलमानिनी सुप्तबोधिनी।
तिमिरनाशिनी सत्प्रकाशिनी, विभवशालिनी सेन्दिरा जयेत्॥

सुमति देने वाली, दीनता को दूर करने वाली, अत्यन्त सम्माननीया, सोए हुए को जगाने वाली, अन्धकार का नाश करने वाली, सत्य को उजागर करने वाली, शक्तिशालिनी वह इन्दिरा विजय प्राप्त करे।

(85)

शुभविधायिनी साम्यवादिनी, विभुविकाशिनी रैप्रदायिनी।
प्रणवनादिनी शान्तिदायिनी, दलितसेविनी सेन्दिरा जयेत्॥

कल्याण करने वाली, साम्यवाद का विस्तार करने वाली, ज्ञान का प्रसार करने वाली, लक्ष्मी प्रदान करने वाली, ओंकार मन्त्र का जाप करने वाली, शान्ति प्रदान करने वाली और दलितों की सेवा करने वाली इन्दिरा विजय प्राप्त करे।

(86)

पलितपालिनी राष्ट्रमालिनी, ललितलालिनी शक्तिशालिनी।
स्खलितचालिनी दुष्टदालिनी, सुकृतिशालिनी सेन्दिरा जयेत्॥

वृद्धों की सेवा करने वाली, राष्ट्र की शोभा, लालित्य को प्रश्रय देने वाली, शक्तिशालिनी, गिरे हुए को चलाने वाली, दुष्टों का संहार करने वाली, पुण्यशालिनी वह इन्दिरा विजय प्राप्त करे।

(87)

सुपथगामिनीं मान्यमानिनीं, विभवभाविनीं चन्द्रशोभिनीम्।
कनकहासिनीं मातृसेविनीं, सुमतिवर्द्धिनीं नौमि चेन्दिराम्॥

सत्पथ पर चलने वाली, श्रेष्ठ जनों के द्वारा सम्मानित होने वाली, चन्द्रमा के समान शोभा वाली, कनक हास्य वाली, भारत माता की सेवा करने और सद्बुद्धि को बढ़ाने वाली इन्दिरा को मैं प्रणाम करता हूँ।

(88)

स्मितसुहासिनी चारुभासिनी, हृदयवासिनी सुप्रशासिनी।
शुभविलासिनी सौम्यदर्शिनी, विजयते जनैरर्चितेन्दिरा॥

मधुर हास्य वाली, सुन्दर भाषा वाली, जनता के हृदयों में रहने वाली, उत्तम शासन करने वाली, शुभकार्य करने वाली, सौम्य दर्शन वाली, जनता द्वारा सम्पूजित इन्दिरा विजय प्राप्त करे।

भुवनपालने विष्णुरूपिणी, लयकरक्षणे रुद्ररूपिणी।
अबलरक्षणे मातृरूपिणी, जयतु सेन्दिरा चित्ररूपिणी॥

जनता के पालन में विष्णुरूपिणी लक्ष्मी के समान, परिवर्तन में रुद्ररूपिणी देवी के समान, निर्बलों की रक्षा करने में माता के समान विविध सद्रूपों वाली इन्दिरा विजय प्राप्त करे।

(90)

यतिवराय या योगदायिनी, कलुषिताय या कष्टदायिनी।
अधनिकाय या द्रव्यदायिनी, जयतु सेन्दिरा हर्षदायिनी॥

जो तपस्वीजन को योग देने वाली है, कलुषित हृदय वालों को कष्ट देने वाली है, निर्धनों को धन देने वाली है, वह हर्ष प्रदान करने वाली इन्दिरा विजय प्राप्त करे।

(91)

तपनतापने वर्षणेऽथवा, प्रकृतितोऽस्ति किं नो समानता।
तव कृपापि भो विद्यते तथा, जननि! सर्वदा सर्वदा क्षितौ॥

सूर्य प्राणिमात्र को तपन में समानता प्रदर्शित करता है तथा वर्षा भी वर्षण में समानता प्रदर्शित करती है, क्या यह उनका स्वाभाविक धर्म नहीं है अर्थात् है। हे जननि! उसी तरह इस भूमि पर हमेशा सबको अभीष्ट प्रदान करने वाली आपकी कृपा भी है।

(92)

मनसि वर्ततेऽगाधता सदा, जलनिधेःसमा धैर्यशालिनि!
हृदि महोच्चता ते गिरेरिव, कृतिगतिस्तथा विद्युतः समा॥

हे धैर्यशालिनि! तुम्हारे मन में हमेशा सागर के समान अगाधता है, हृदय में पर्वत के समान ऊँचाई और क्रियाशीलता में विद्युत् के समान गति है।

(93)

मनसि सत्यता वाचि वक्तृता, हृदि पवित्रता कर्मनिष्ठता।
विपदि धीरता देशबन्धुता, तव मनोज्ञता लोकविश्रुता॥

मन में सच्चाई, वाणी में वाक्कौशल, हृदय में पवित्रता, कर्म में विश्वास, विपत्ति में धैर्य, देश के प्रति प्रेम, तुम्हारे मन की इस प्रकार की विशिष्टता लोकप्रसिद्ध है।

(94)

कविजनप्रियं श्रेष्ठतायुतं, बुधजनार्चितं पुण्यदायकम्।
पतितपावनं वृत्तमुज्ज्वलं, दिशतु दिव्यतां सर्वदा जने॥

हमेशा कविजनों का प्रिय, श्रेष्ठता से युक्त, ज्ञानी जनों के द्वारा पूजित, पुण्यदायी पतित-पावन उज्ज्वल तुम्हारा चरित लोक में दिव्यता का सन्देश दे।

(95)

गुणिगणार्चिते! ते कथामृतं, श्रवणमात्रतो भक्तिभावतः।
नयति सत्पथं सर्वदा जनं, पतितमप्यहो त्रायतेऽनिशम्॥

हे गुणीजनों के द्वारा पूजित इन्दिरे! तुम्हारी यह अमृतरूपी कथा भक्ति भाव पूर्वक श्रवणमात्र से ही मनुष्य को सन्मार्ग की ओर प्रवृत्त करती है। आश्चर्य है कि यह पतितों की भी हमेशा रक्षा करती है।

(96)

प्रियकरञ्च ते लोकरञ्जकं, चरितचिन्तनं यः करोति चेत्।
मलिनता सदा तस्य चेन्दिरे! सपदि दूरतां याति भूतले॥

हे इन्दिरे! तुम्हारे कल्याणकारी लोक-मानस को आह्लादित करने वाले जीवन चरित का जो चिन्तन करता है, संसार में उसकी मानसिक मलिनता शीघ्र ही दूर हो जाती है।

(97)

अतिमनोहरं चारुचिन्तकं, तव कथामृतं पापनाशकम्।
विमलया धिया कर्णयोर्गतं, बुधवरार्चिते! मङ्गलायते॥

हे ज्ञानीजनों के द्वारा सम्मानिता इन्दिरे! तुम्हारी अतिमनोहर सुन्दर चिन्तन से युक्त अमृत रूपी कथा पाप को नष्ट करने वाली है। निर्मल बुद्धि से सुने जाने पर मंगल का विस्तार करती है।

(98)

विविधतायुतश्चातिनिर्मलः, विमलचन्द्रिकातुल्यभासकः।
तव मनोरमो भावनामयो, दिशतु दिव्यतां ज्ञानसञ्चयः॥

विविधता से युक्त, अत्यन्त निर्मल, स्वच्छ चन्द्रिका के समान कान्ति वाला, भावनामय तुम्हारा मनोरम ज्ञानसंचय (संसार में) दिव्यता का विस्तार करे।

(99)

अयि महोत्सवे! प्रार्थयेऽनिशं, परमपावनाद् विश्वशासकात्।
दिशि-दिशि प्रिया कीर्तिरुत्तमा, प्रसरतात्सदा ते गुणैर्युता॥

हे महोत्सवे! मैं परमपावन विश्वशासक परमेश्वर से हमेशा प्रार्थना करता हूँ कि तुम्हारी सद्गुणों से युक्त प्रिय और उत्तम कीर्ति प्रत्येक दिशा में फैले।

(100)

भरतभूमहाशासनस्य ते, प्रगतिसूचके रम्यहायने।
सुदशके मया निर्मितं प्रियं, शतकमिन्दिरा-छन्दसा युतम्॥

भारत भूमि में तुम्हारे उत्कृष्ट शासन काल के प्रगति सूचक, प्रियवर्द्धक उत्तम दशक में मेरे द्वारा इन्दिरा छन्द में ही छन्दोबद्ध प्रिय इन्दिरा शतक नामक काव्य रचा गया।

संघर्षखण्डः

(1)

कमलनिर्मलं शान्तिदायकं,
विविधतायुतं लोकरञ्जकम्।
दलितपोषकं हर्षदं प्रियं,
गरलपायिनं नौमि शङ्करम्॥

कमल के समान निर्मल, शान्ति प्रदान करने वाले, विविधताओं से युक्त, संसार का रंजन करने वाले, दलितों के पालन कर्ता, हर्ष के दाता, विष पीने वाले परमप्रिय भगवान् शंकर को मैं नमस्कार करता हूँ।

(2)

आपत्कालस्यकालेऽस्मिन्,
लोककल्याणहेतवे ।
विविधा योजना देव्या,
कृताः सर्वत्र सर्वदा॥

आपात्काल के समय में देवी इन्दिरा के द्वारा लोककल्याण हेतु निरन्तर भारत के सभी भागों में विभिन्न प्रकार की योजनाएँ बनायी गयी।

(3)

इन्दिराशासने मित्र,
धीरता दृढता तथा।
कार्येषु द्रुतताप्यत्र,
सर्वत्र समवेक्ष्यते॥

हे मित्र! इन्दिरा-शासन में सर्वत्र धैर्य, स्थायित्व तथा कार्यों में शीघ्रता दिखायी देती है।

(4)

नियमाचारसंयुक्ता,
देशस्यकर्मचारिणः ।
कर्तव्यबोधसंशक्ताः,
दृश्यन्ते सकला मुदा॥

देश के सभी कर्मचारी नियम, सदाचार, कर्तव्य बोध से युक्त और प्रसन्नचित्त दिखायी देते हैं।

(5)

सामान्यजनता हृष्टा,
दृष्ट्वैवं कार्यपद्धतिम्।
इन्दिरां प्रति कार्तज्ञं,
प्रकटयन्ति पुनः पुनः॥

सामान्य जनता इस प्रकार की कार्य पद्धति को देखकर प्रसन्नता से श्रीमती इन्दिरा गांधी के प्रति निरन्तर अपनी कृतज्ञता प्रकट करती है।

(6)

शान्तिं सौख्यं विकासञ्च,
संवीक्ष्य भारते तदा।
प्रतिपक्षिजना व्यग्रा,
नानाभावैः निरन्तरम्॥

भारत में उस समय शान्ति, सौख्य और विकास देखकर विपक्षी लोग निरन्तर विविध भावों से बेचैन हो गये।

(7)

विविधैः दुष्प्रचारैश्च,
क्रियाभिः वृत्तिभिस्तथा।
विरोधो विहितो नित्यं,
छद्मवृत्या तु तैस्तदा॥

उस समय उन विरोधियों के द्वारा नाना प्रकार के कुप्रचार दूषित क्रिया कलाप, दुर्व्यवहार ओर छद्मवृत्ति से विरोध किया गया।

(8)

शालासु सर्वभावेन,
परिवारनियोजने ।
छात्राः कृता भयत्रस्ताः,
किमाश्चर्यमतः परम्॥

विद्यालयों में परिवार-नियोजन के प्रति उनके द्वारा पूर्णरूप से छात्र भयभीत किये गये। इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या हो सकता है?

(9)

परिवारयोजनप्रश्ने,
शालासु सर्वतस्तदा।
दुष्प्रचारः कृतःसद्यः,
ह्यसत्यं महदद्भुतम्॥

परिवार-नियोजन के प्रशन पर विद्यालयों में उन विरोधियों के द्वारा शीघ्र ही नितान्त असत्य दुःप्रचार किया गया।

(10)

स्वास्थ्यलाभप्रदानार्थं,
छात्रेभ्यो यत् प्रदीयते।
औषधन्तत्र सर्वत्र,
भारते तत्क्षणेऽनिशम्॥

भारत में सर्वत्र विद्यालयों में सर्वदा स्वास्थ्यवर्धन हेतु छात्रों को जो औषधि दी जाती है।

(11)

नपुंसका भविष्यन्ति,
तेन बालाः समे प्रियाः।
तादृशेन प्रचारेण,
भीता विद्यालयं प्रति॥

उस औषधि से सभी प्रिय बालक (छात्र) नपुंसक हो जायेंगे। ऐसे प्रचार से डरे हुए (बालक) विद्यालय जाने के लिए भय करने लगे।

(12)

गन्तुं हि नोद्यता बालाः,
किमाश्चर्यमतः परम्।
इत्थं वृत्तं निशम्यात्र,
बुधाः सर्वेऽपि चिन्तिताः॥

इससे छात्र विद्यालय जाने के लिए उद्यत नहीं हुए इससे बढ़कर आश्चर्य अन्य क्या हो सकता है? इस प्रकार के समाचार को सुनकर सभी बुद्धिजीवी लोग चिन्तित हो गये।

(13)

हरिश्चन्द्रस्य देशेऽस्मिन्,
हन्त किं जायतेऽधुना।
समुत्पन्नस्तु प्रश्नोऽयं,
पौनः पुन्येन तद् हृदि॥

सत्यवादी हरिश्चन्द्र के इस देश में यह क्या हो रहा है? उन बुद्धजीवियों के हृदय में इस प्रकार का प्रश्न बार-बार उठ रहा था।

(14)

अस्याः कल्याणकारिण्याः,
योजनायास्तदाप्यहो ।
कीदृशो दुष्प्रचारस्तै,
सत्वरं विहितोऽप्रियः॥

आश्चर्य है, उस समय इस कल्याणकारिणी योजना का शीघ्र ही उनके द्वारा किस प्रकार का अप्रिय कुप्रचार किया गया।

(15)

इत्थमेव कृतो नैव,
दुष्प्रचारस्तु तैस्तदा।
अपरमपि कार्यन्तैः,
विहितं तत्क्षणं हृदा॥

उन विरोधियों के द्वारा उस समय न केवल इस प्रकार कुप्रचार किया गया अपितु (कपटपूर्ण) हृदय से उनके द्वारा तुरन्त अन्य कार्य भी किये गये।

(16)

शालासु शासनश्चैत्,
क्लैव्यसम्पादनाय हि।
पादतलौषधं तेभ्यः,
सूचिकया प्रदीयते॥

इस शासन के द्वारा विद्यालयों में छात्रों को निश्चित रूप से पुंसत्व के नाश करने के लिए पैर के नीचे सुई द्वारा औषधि (इंजेक्शन) दी जा रही है।

(17)

श्रुत्वैतद् दुष्करं वृत्तं,
सर्वत्र भारते तदा।
माता भीता पिता भीतः,
भीतः परिजनस्तथा॥

यह कठोर अप्रिय समाचार सुनकर उस समय भारत में सर्वत्र माता, पिता और सम्बन्धी भयभीत हो गये।

(18)

शुद्धं सुशासनं भूयात्,
मनसि भावनामिमाम्।
सञ्चिन्त्य शासका देव्या,
तदा नीता नियन्त्रणम्॥

देश में शुद्ध एवं स्वच्छ शासन हो इस भावना को हृदय में धारण करके देवी इन्दिरा ने तुरन्त भारत शासन के उच्चाधिकारियों पर अपना नियन्त्रण किया।

(19)

समीप इन्दिरादेव्याः,
दुःखितः पीडितो यदा।
जनः संयाति देशस्य,
तस्य साह्यं करोति सा॥

देवी इन्दिरा गांधी के पास जब भी देश का कोई दुःखी पीड़ित व्यक्ति जाता है, वह उसकी सहायता करती है।

(20)

परं धूर्तैश्च दुष्टैश्च,
तत्रापि शासकैः कृतः।
निर्णयः प्रतिकूलो हा,
तज्जनं प्रति सत्त्वरम्॥

किन्तु फिर भी धूर्त और दुष्ट अधिकारियों के द्वारा श्रीमती इन्दिरा गांधी के प्रति छद्मभाव रखने वाले लोग इन्दिरा गांधी के कल्याणकारी निर्णय का विपरीत अर्थ लेकर उस दुःखी व्यक्ति को दण्डित करवाने लगे।

(21)

केन्द्रीभूते तु सत्तायाः,
दलसामान्यनेतृभिः ।
उपयोगो हि सत्ताया-,
नोचितो विहितस्तदा॥

सत्ता के केन्द्रीभूत होने पर दल के सामान्य (छुट भैय्या) नेताओं के द्वारा उस समय सत्ता का अनुचित उपयोग किया गया।

(22)

राजनीतेस्तु दूरेऽपि,
परस्पर विरोधिनः।
गृहवैरेण ते सर्वे,
कारागारे निपातिताः॥

इन छुट भैय्या नेताओं ने राजनीति से दूर अपने जो व्यक्तिगत विरोधी थे उनको भी व्यक्तिगत बैर के कारण जेल में डलवा दिया।

(23)

भ्रष्टैरुत्कोचसंलिप्तैः,
शासकैः सह सत्वरम्।
दुष्टाश्च लुण्ठकाः सर्वैः,
प्रतिपक्षिजनास्तदा ॥

भ्रष्ट, रिश्वतखोरी में लिप्त अधिकारियों के साथ शीघ्र ही दुष्ट, लुटेरे एवं विपक्षी आदि सभी ने कांग्रेस की राष्ट्रीय पोशाक खादी के वस्त्र पहन लिये।

(24)

खादीवस्त्राणि सर्वाणि,
परिधाय परस्परम्।
कांग्रेसस्य दले सर्वै-,
रन्तर्भूता हि सत्वरम्॥

परस्पर उपर्युक्त सभी व्यक्तियों ने खादी के सम्पूर्ण वस्त्रों को पहन कर ये सभी व्यक्ति कांग्रेस दल में अन्तर्भूत हो गये (मिल गये)।

(25)

एतैः सर्वैः मिलित्वा हि,
गुप्तरीत्या निरन्तरम्।
अनाचारो दुराचारः,
कृतो देशे प्रतिक्षणम्॥

ऐसे सभी व्यक्तियों ने मिलकर गुप्त रूप से निरन्तर देश में प्रतिक्षण अनाचार और दुराचार किये।

(26)

उच्चसत्तासने सर्वैः,
श्रद्धाभावेन शासनम्।
चालयन्तोऽपि जनतायाः,
कोपभाजनतां गताः॥

उच्च सत्ता के आसन पर रहते हुए उन सबके द्वारा श्रद्धाभाव से शासन चलाया गया किन्तु फिर भी इस देश में उपर्युक्त छद्मवेशधारियों के कारण वे जनता के कोप के भाजन हुए।

(27)

इन्दिराशासने जनता,
सौख्यं सम्प्राप्य सर्वदा।
तथापि दुष्प्रचारै र्हा,
रुष्टैषाजनताऽभवत्॥

इन्दिरा-शासन में जनता सर्वदा सौख्य को प्राप्त करते हुए भी प्रतिपक्ष के कुप्रचारों के द्वारा रुष्ट हो गयी।

(28)

एवंभूतः प्रचारोऽपि,
विरोधिभिः कृतस्तदा।
निर्वाचनं न देशेऽस्मिन्,
भविष्यति कदाप्यहो॥

उस समय विरोधियों के द्वारा इस प्रकार का प्रचार भी किया गया कि इस देश में कभी भी चुनाव नहीं होगा।

(29)

निश्चिते समये देव्या,
निर्वाचनमिदं प्रियम्।
घोषितं त्वरितं कृत्वा,
भव्यादर्शः प्रदर्शितः॥

देवी इन्दिरा गांधी के द्वारा निश्चित समय पर देश का चुनाव तुरन्त घोषित करके उत्कृष्ट आदर्श प्रस्तुत किया गया।

(30)

इन्दिरायाः विरोधार्थं,
भिन्नभावमता दलाः।
एकीभूताः समायाता-,
अस्मिन् निर्वाचने समे॥

इस चुनाव में श्रीमती इन्दिरा गांधी के विरोध के लिए अलग-अलग विचारों और मतों के सभी दल एक हो कर (जनता के सामने) आये।

(31)

कुप्रचारैः विपक्षस्य,
तस्मिन् निर्वाचने तदा।
पराजितेन्दिरा जाता,
स्वदलेन सहैव हा॥

उस समय चुनाव में विपक्ष के कुप्रचारों के द्वारा वह श्रीमती इन्दिरा गांधी अपने दल के साथ ही स्वतः भी पराजित हो गयीं।

(32)

जनादेशं स्वदेशस्य,
तया स्वीकृत्य सत्वरम्।
सत्ता समर्पिता प्रेम्णा,
विपक्षाय मुदा हृदा॥

शीघ्र ही इस (श्रीमती इन्दिरा गांधी) ने अपने देश के जनादेश को हृदय से स्वीकार कर प्रेमपूर्वक प्रसन्न हृदय से सत्ता विपक्ष को सौंप दी।

(33)

प्रशासनाद् मुक्तिमवाप्य सद्यः,
कृतं तया स्वात्मविचिन्तनं हि।
विनम्रभावेन पुनस्तदानीं,
व्रतं गृहीतं जनतार्चनाय॥

प्रशासन से मुक्त हो जाने पर उस (श्रीमती इन्दिरा) के द्वारा आत्मचिन्तन किया गया। तदनन्तर पुनः श्रीमती इन्दिरा ने विनम्रता-पूर्वक जनता की सेवा का व्रत लिया।

(34)

प्रतिदिनं प्रभुचिन्तन-चिन्तनं,
पुनरहो पुनरेव विधाय सा।
जनसमर्चनतत्परतां गता,
भुवि हृदैव तदा जननीन्दिरा॥

उस समय जननी इन्दिरा प्रतिदिन बारम्बार प्रभु का चिन्तन कर पुनः देश में जनता की सेवा के लिए हृदय से तत्पर हुई।

(35)

प्रातरेव निजे वासे,
लोकल्याणकर्मसु।
प्रवृत्ता जननी चैषा,
श्रद्धाभावैरहर्निशम्॥

प्रातःकाल ही यह जननी अपने आवास पर रात-दिन श्रद्धादिभावों से युक्त होकर लोक-कल्याण के कार्यों में प्रवृत्त हुई।

(36)

तस्याः कार्यस्य निष्ठां तां,
विलोक्य प्रतिपक्षिणः।
विभिन्नैः दुष्कृतैरेतां,
जाताः पीडनतत्पराः॥

उसके कार्य की उस निष्ठा को देखकर विपक्षी लोग उसको विभिन्न दुष्कृत्यों के द्वारा पीड़ा देने के लिए तत्पर हुए।

(37)

प्रतिशोधपरायणैस्तदा,
सकलैस्तैश्च विताडितेन्दिरा।
चलिता न तदापि सा दृढा,
धृतिरस्याः परिवीक्ष्यतेऽद्भुता॥

उन सब (विपक्षियों) के द्वारा प्रतिशोध परक वृत्ति से प्रताड़ित वह धैर्य शालिनी इन्दिरा फिर भी विचलित नहीं हुई। इस (इन्दिरा) की धृति अद्भुत दिखायी देती है।

(38)

आरोपैर्विविधैर्देवी,
तै र्नित्यं हि विनिन्दिता।
तथापि मौनमाश्रित्य,
सर्वं शुश्राव धैर्यतः॥

उन (विपक्षियों) के द्वारा वह देवी विविध आरोपों से प्रताड़ित की गयी, किन्तु फिर भी वह मौन का आश्रय लेकर धैर्य पूर्वक सुनती रही।

(39)

सर्वमसत्यमारोपं,
संगृह्य दुष्टशासकैः।
तामिन्दिरां प्रयाताः तैः,
कारागारैः निपातितुम्॥

दुष्ट शासकों के द्वारा इन्दिरा गांधी के विरोध में असत्य आरोपों को एकत्रित करते हुए उसे कारागार में डालने के लिए प्रयास किये गये।

(40)

यदा लाकैः श्रुतं वृत्तं,
दृष्टं वा कर्म तादृशम्।
विचलिता तदा जाता,
विरोधे जनता हृदा॥

जब जन सामान्य ने यह समाचार सुना और (जनता ने) वैसा कार्य देखा तब जनता सच्चे मन से (प्रशासकों के) विरोध में चलायमान हो गयी।

(41)

आक्षेपान् विविधान् चापि,
धृत्या श्रुत्वेन्दिरा मुदा।
लोकसेवार्चनासक्ता,
निष्ठयाऽभवदिन्दिरा ॥

विविध आक्षेपों को भी धैर्य से, प्रसन्नता से सुनकर श्रीमती इन्दिरा गांधी लोक सेवा रूपी अर्चना के लिए निष्ठा से तत्पर हुई।

(42)

सत्तालोभैश्च सम्पृक्ताः,
सत्ताधीशाः निरन्तरम्।
स्वार्थमोहधनाकृष्टा,
योद्धुकामाः परस्परम्॥

सत्तारूढ़ शासक निरन्तर सत्ता के लोभों से युक्त होकर, स्वार्थ, मोह और धन के आकर्षण में परस्पर युद्ध के इच्छुक हो गये।

(43)

विभिन्नैः मतसंयुक्तैः,
भिन्नभावविचारकैः ।
निर्मिता जनतापार्टी,
लोभजालसमावृतैः ॥

विभिन्न मनों से संयुक्त उन विविध भावों के विचारक नेताओं द्वारा लोभ रूपी पाश के बंधनों से युक्त जनता पार्टी का गठन किया।

(44)

परस्परकलहाक्रान्ताः,
स्व-स्व स्वार्थसमाकुलाः ।
सत्तायाः सुखसम्प्राप्तौ,
जनतामपि विस्मृताः ॥

परस्पर कलह से आक्रान्त अपने-अपने स्वार्थ से व्याकुल उन शासकों ने सत्ता के सुख की प्राप्ति के लिए जनता को भी भुला दिया।

(45)

सत्तायाञ्च समासीनाः,
स्वार्थलोभसमाकुलाः ।
परस्परं विनिन्दन्ति,
निन्दास्वादसुखान्विताः ॥

स्वार्थ और लोभ से व्याकुल सत्ता में बैठे हुए वे शासक निन्दा के स्वाद में सुख समझते हुए परस्पर निन्दा करते रहे।

(46)

जनसेवां परित्यज्य,
शासकाः सकलास्तदा।
स्वदलस्य सुलाभाय,
सततं संरता हृदा॥

जनता की सेवा को छोड़कर उस समय वे सभी शासक हृदय से अपने दल के लाभ के लिए निरन्तर प्रयासरत हो गये।

(47)

अव्यवस्था तदा देशे,
सर्वभावेन सर्वतः।
सञ्जाता किल सर्वत्र,
शासकानां कुकुर्मभिः॥

उस समय देश में सर्वतोभावेन पूर्णरूप से शासकों के कुकर्मों के द्वारा सर्वत्र अव्यवस्था हो गयी।

(48)

दशामेतां समालोक्य,
मौनभावेन संस्थिता।
इन्दिरा सक्रिया जाता,
राष्ट्रसेवाव्रतान्विता॥

मौन भाव से रहने वाली श्रीमती इन्दिरा गांधी (देश की) इस दशा को देखकर राष्ट्रसेवा के व्रत के भाव से पूर्ण हो कर सक्रिय हो गयी।

(49)

जनदुःखविनाशार्थं,
भ्रमन्ती भरतावनौ।
दशां विलोक्य लोकस्य,
दुःखिता परमाभवत्॥

जनता के दुःख का विनाश करने के लिए (श्रीमती इन्दिरा गांधी) भारत भूमि पर घूमती हुई जनता की दशा को देखकर अत्यन्त दुखी हुईं।

(50)

क्वचिद् बिहारे क्वचिदुत्कले वा,
क्वचिच्चबंगेष्वथ केरले वा।
तथोत्तरेवापि च दक्षिणेऽपि,
परिभ्रमन्ती जनताहिताय॥

जनता के कल्याण के लिए घूमती हुई वह कहीं बिहार में, कहीं बंगाल में, कहीं उड़ीसा में तो कहीं केरल में, कभी उत्तर में तो कहीं दक्षिण में जाती रहीं।

(51)

भिन्नभाववतां लोके,
ह्यैक्यं भवति नश्वरम्।
ततस्ते कलहायन्ते,
सत्तायां संस्थितेऽप्यहो॥

विभिन्न भावों पर आधारित एकता नश्वर होती है, आश्चर्य है कि बाद में सत्ता में रहते हुए भी वे परस्पर कलह करते हैं।

(52)

भारतस्योन्नतिस्तस्मा-,
दवरुद्धाभवत्तदा ।
जनतारोषमापन्ना,
शासनं प्रति तत्क्षणम् ॥

उसके कारण भारत की उन्नति सब ओर से अवरुद्ध हो गयी, जिससे तुरन्त जनता शासन के प्रति नाराज हो गयी।

(53)

इन्दिराकूटनीत्या च,
धैर्यवृत्या तथैव च।
अल्पीयसैव कालेन,
सत्ता ह्येषा विखण्डिता ॥

श्रीमती इन्दिरा गांधी की कूटनीति और उनकी धैर्य वृत्ति के द्वारा थोड़े ही समय में यह सरकार भंग हो गयी।

(54)

अकाल एव देशेऽस्मिन्,
निर्वाचनमहो पुनः।
आगतं भारकारि तत्,
येन रुष्टा प्रजा पुनः ॥

अकस्मात् ही इस देश में पुनः व्ययकारी चुनाव हो गया जिससे जनता फिर नाराज हो गयी।

(55)

प्रचुरो जनतास्नेहः,
तया देव्यार्जितः पुनः।
सत्तासीना ततो जाता,
भारते त्वरितं हि सा॥

उस देवी (इन्दिरा) के द्वारा पुनः जनता का अत्यधिक स्नेह अर्जित किया गया, उसके बाद शीघ्र ही वह भारत में सत्तासीन हो गयी।

(56)

प्रभुचरणकृपाभिः विश्वविश्वासभावैः,
पुनरपि पुनरेवं लोकसंराधनाय।
भरतभुवि नवाशां सम्प्रदातुं हि सद्यः,
प्रमुदितमनसेयं शासनाधिष्ठिताभूत्॥

ईश्वर के चरणों की कृपा और प्रजा के विश्वासजनित भावों से पौनः पुन्येन जनता की सेवा के लिए यह प्रसन्न हृदया (इन्दिरा) नयी आशा का संचार करने के लिए तुरन्त ही भारत देश में शासनारूढ़ हो गयीं।

(57)

सघनवननिवासादागते रामचन्द्रे,
स्तुतिरतिमधुरा या नागरैस्तत्र पुर्याम्।
सहृदयहृदयेन स्नेहतो भक्तितोऽपि,
तदनुसरणमस्यै चेन्दिरायै कृतं हि॥

घने जंगलों में निवास करने के पश्चात् श्रीरामचन्द्र के अयोध्या आने पर, जैसी स्तुति वहाँ के नागरिकों के द्वारा की गयी, वैसे ही भावपूर्ण हृदय से, स्नेह और भक्ति से इस इन्दिरा गांधी की स्तुति विजय प्राप्ति पर जनता द्वारा की गयी है।

(58)

विविधकुसुमगुच्छैः धूपदीपादिभिश्च,
निखिलभरतभूमेः मानवैस्तत्क्षणं हि।
अभिनवनवरीत्या मन्त्रगीतादिभिश्च,
कृतमतिमुदितैस्तैः स्वागतं तत्र तस्यै॥

नाना प्रकार के पुष्प गुच्छों द्वारा धूप दीपादि के द्वारा समस्त भारत के मानव मात्र ने शीघ्र ही नवीन-नवीन पद्धति के द्वारा प्रसन्न हृदय से उस इन्दिरा का स्वागत किया।

(59)

नानादलदले मग्नं,
शासनं शिथिलायितम्।
तन्निरोद्धुं तया देव्या,
प्रयासाः प्रथमं कृताः॥

विभिन्न दलों के द्वारा भ्रष्ट और शिथिल किये गये शासन को नियन्त्रित करने के लिए उस देवी के द्वारा सर्वप्रथम अनेक स्तर पर प्रयास किये गये।

(60)

भारतं भारतं भूयात्,
हेतुनानेन सम्प्रति।
उद्योगा विविधा देव्या,
पुनः संस्थापिता मुदा॥

भारत आभा से देदीप्यमान हो, उसी लक्ष्य के लिए तब देवी (इन्दिरा) के द्वारा प्रसन्नता पूर्वक फिर से विभिन्न उद्योग स्थापित किये गये।

(61)

शिक्षाक्षेत्रे तथान्यत्र,
सर्वत्र प्रगतौ रताम्।
सुमान्यामिन्दिरां नौमि,
मनसा वचसाप्यहम्॥

शिक्षा तथा अन्य सभी क्षेत्रों के विकास में रत माननीय इन्दिरा को मैं मन और वाणी से प्रणाम करता हूँ।

(62)

भूयो भूयो विलोक्यात्र,
विकासं महदद्भुतम्।
सर्वे विचलिता जाताः,
प्रतिपक्षिजनाः तदा॥

बारम्बार (भारत का) अद्भुत विकास देखकर उस समय सभी विपक्षी लोग विचलित हो गये।

(63)

ततोऽधुना तत्र विरोधिभिः पुनः,
कृताः क्रियाः शान्तिविनाशहेतवे।
विभिन्नपक्षैः भरतावनौ सखे,
हृदि प्रपीडा महती प्रयाता॥

हे मित्र! तदनन्तर पुनः उन विरोधियों के द्वारा विभिन्न स्तर पर भारत वर्ष की शान्ति के विनाश के उद्देश्य से नाना प्रकार के क्रियाकलाप किये गये। जिससे प्रत्येक भारतवासियों के मन में अत्यन्त वेदना हुई।

(64)

सीमाप्रदेशेषु विदेशतोऽत्र,
कृता ह्यशान्ति विविधैः प्रकल्पैः।
तस्याः फलं हन्त विलोकयध्वं,
मृत्युः विचित्रा जननीन्दिरायाः॥

यहां विदेश से लगे हुए सीमा क्षेत्रों में विभिन्न प्रयासों से अशान्ति उत्पन्न की गयी, परम दुःख है कि उसी के कारण जननी इन्दिरा की विचित्र दुःखद मृत्यु देखी गयी।

महाप्रयाणखण्डः

(1)

संसारस्थितिनाशपालनरतं विश्वेश्वरं पावनं,
हर्षाक्रोशवियोगशोकनिलयं ध्यात्वा प्रभुं सादरम्।
पूज्यां तां प्रियदर्शिनीं च जननीं नत्वा प्रियामिन्दिरां,
श्रद्धायाः कुसुमाञ्जलिः सुमनसा तस्यै मया दीयते॥

संसार के उत्पत्ति, नाश एवं विकास में तत्पर, विश्व के स्वामी, पवित्र, हर्ष, आक्रोश, वियोग एवं शोक के स्थान, सभी प्राणियों के आश्रयभूत एवं शान्तिदाता उस परब्रह्म परमात्मा का ध्यान करते हुए पूजनीया मातृरूपा प्रियदर्शिनी श्रीमती इन्दिरा गांधी को मैं श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

(2)

वाणी वाक्यविहीनतामुपगता पाणिक्रिया शून्यतां,
बुद्धिश्चञ्चलतां गता जननि हे पादौ स्थिरौ संगतौ।
नेत्रे वै तमसावृते प्रतिगते मातर्हतायां त्वयि,
हा हा सर्वविधैव सम्प्रति गता निश्चेतना मे गतिः॥

हे माँ! तेरी मृत्यु की सूचना प्राप्त होने पर मेरी वाणी में गूँगापन, हाथों मे शून्यता, बुद्धि में चंचलता और पैरों में स्थिरता आ गयी तथा आँखों में अन्धेरा छा गया, इस प्रकार मेरी समस्त क्रियाविधि निश्चेतन हो गयी।

(3)

लोके ते विमलं यशोऽनवरतं प्रोद्भासतां दीप्यता-,
मित्थं चेतसि चिन्तयञ्जननि हे धृत्वा धृतिं तत्क्षणम्।
श्रद्धायास्सुमनोऽञ्जलिः सुमनसा भक्त्यार्पयन् सत्कविः,
काव्ये भावनिबन्धनाल् लिखति स श्रद्धाञ्जलिं सादरम्॥

हे माँ! संसार में तेरा स्वच्छ यश निरन्तर देदीप्यमान होता रहे, इस भावना को हृदय में विचार कर इस गहरे दुःख में शीघ्र धैर्य को धारण करके श्रद्धारूपी पुष्पांजलि को पवित्र मन से भक्ति पूर्वक अर्पित करता हुआ मैं काव्य में अपनी श्रद्धामयी भावनाओं को बाँधकर श्रद्धांजलि रूप में इस काव्य को सादर लिख रहा हूँ।

(4)

आकाशे परिलक्ष्यते मलिनता नम्रा दिशोऽपि ध्रुवं,
म्लानत्वं भुवि पादपादिषु तथा वायोर्महावक्रता।
रम्या हा धरणी विवर्णवदना सन्दृश्यते साम्प्रतं,
हा हा ब्रूहि किमद्य चात्र भवति ह्येतन्महानर्थकम्॥

आकाश में मलिनता, दिशाओं में नम्रता, पेड़-पौधों में मुर्झायापन, वायु में वक्रता और पृथ्वी में खिन्नता दिखायी दे रही है। अरे! बताओ आज संसार में ऐसा कौन सा अनर्थ हो गया है, जिससे सारी प्रकृति प्रतिकूल दिखायी पड़ती है।

(5)

इत्थं चिन्तयता तदैव कविना संरुद्धकण्ठेन हा!,
दुःखेनातिविवर्णभावमनसा चाकाशवाण्या तया।
मन्दामन्दतया श्रुतं निगदितं कैश्चित्विमूढैर्जनैः,
हत्या भारतगौरवस्य विहिता मान्येन्दिराया भुवि॥

ऐसे सोचते हुए कवि ने उसी समय अवरुद्ध कण्ठ से अत्यन्त दुःख एवं खिन्न भाव से धीमी-धीमी एवं त्वरित ध्वनि में आकाशवाणी से कही हुई आवाज सुनी कि "किन्हीं मूर्ख लोगों ने भारत की गौरवभूत प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की हत्या कर दी है"।

(6)

वृत्तं निशम्य तदिदं समभूत्तदानीं,
नेत्रान्धता भुवि जनस्य मनःसु पीडा।
वक्षः प्रताड्य मनुजो विललाप भूयः,
हा हा हता सुजननी मम सेन्दिरराद्य॥

इस समाचार को सुनकर समस्त लोगों की आँखों में अन्धेरा छा गया तथा मन को गहरा सदमा पहुँचा और वे 'आज मेरी माँ इन्दिरा मर गयी है' ऐसा कहते हुए छाती पीट-पीट कर रोये।

(7)

निश्चेतना भुवि लुठन्ति जनाश्च केचित्,
केचित् क्वचित् व्यथितमानसमानवाश्च।
विक्षिप्ततामुपगता व्यपहाय धैर्यं,
वृत्तं निशम्य मरणस्य तवाद्य मातः॥

हे माँ इन्दिरे! तुम्हारी मृत्यु के अप्रिय समाचार को सुनकर कुछ लोग अचेतन होकर जमीन पर लुढ़क गये और कहीं कोई अत्यंत दुःखी होकर समस्त धैर्य को त्यागकर पागल से हो गये।

(8)

यस्याः प्रभाभरितभारतवर्षमेतत्,
लोके विकासपथमत्यधिकं प्रयातम्।
सा मातृभूहितरता जगदम्बिकाद्य,
क्रूरैर्हतात्र विहितं ननु निन्द्यकर्म॥

जिस श्रीमती इन्दिरा गांधी की प्रतिभा से परिपूर्ण होता हुआ भारतवर्ष अत्यन्त उन्नति को प्राप्त हुआ, उस मातृभूमि की सेवा में संलग्न, समस्त संसार की मातृरूपा श्रीमती इन्दिरा गांधी की आज क्रूर पापियों ने हत्या कर अत्यन्त निन्द्य कार्य किया।

(9)

या भारतस्य महते हितचिन्तनाय,
दत्तावधनहृदया नितरां प्रवृत्ता।
अत्यन्तपूतहृदया किल सेन्दिराद्य,
हा हा विमूढमतिभिर्निहता कृतघ्नैः॥

जो इन्दिरा गांधी भारतवर्ष की भलाई के लिए एकमत होकर हमेशा तल्लीन रहती थी, उस पवित्र हृदय श्रीमती इन्दिरा गांधी की मूढमति लोगों ने आज हत्या कर दी।

(10)

प्रातः प्रयाणमतुलं जनताहिताय,
गेहात्कृतं सपदि हृष्टहृदा ययाद्य।
मार्गे विवेकरहितैः जननी हता सा,
हा भारतं विनिहतं निहतं धरायाम्॥

जिस श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अत्यन्त प्रसन्नचित्त से आज लोकहित के लिए प्रातःकाल ही घर से अतुलनीय प्रस्थान किया था, अत्यन्त कष्ट है कि मार्ग में ही नासमझों ने श्रीमती इन्दिरा गांधी की हत्या करके मानों सम्पूर्ण विश्व में भारत की हत्या कर दी हो।

(11)

यस्या उदारचरितं हृदयं विलोक्य, प्रेम्णा भ्रमन्ति भवने सततं हि तस्याः।
विश्वासभूहृदयधारिणि मातृरूपे, तैरेव तत्र निहता त्वमयीन्दिरे हा॥

जिस श्रीमती इन्दिरा गांधी के उदार हृदय को देखकर के प्रेम से जन तेरे भवन में निरन्तर घूमते रहते थे, अत्यन्त विश्वास को हृदय में धारण करने वाली मातृरूपा हे इन्दिरा गांधी! अत्यन्त कष्ट है कि उन्होंने तुम्हें तुम्हारे ही घर में मार दिया।

(12)

भव्याकृतिः परमपावनपावनी सा,
सौम्याकृतिः जनमनस्सु विनोदिनी सा।
भूमौ यदा निपतिता मृदुलेन्दिरा सा,
किं नो विकम्पितवती धरिणी समस्ता॥

उत्कृष्ट आकृति, अत्यन्त पवित्र, सरल स्वभाव, प्राणिमात्र के मनों को आनन्दित करने वाली, कोमल देहधारिणी वह इन्दिरा गांधी जब पृथ्वी में गिरी होगी तब क्या पृथ्वी कम्पायमान नहीं हुई होगी? अर्थात् पृथ्वी कम्पायमान अवश्य हुई होगी।

(13)

हे हे भुशुण्डि! गलिता प्रथमं कथन्न,
हे गोलिकाः! किमिति नो पतिता हि भूमौ।
हे हे विवेकरहिता च तथान्यमूर्खाः,
यूयं कथन्न विरता निजनिन्द्यकृत्यात्॥

हे बन्दूक! तुम इन्दिरा गांधी पर प्रहार करने से पूर्व ही गल क्यों नहीं गयी और हे गोलियो! तुम श्रीमती इन्दिरागांधी के शरीर पर लगने से पहले जमीन पर क्यों नहीं गिर गयीं? हे निन्दनीय चरित्र वालो तथा इसी प्रकार के अन्य सहयोगी मूर्खों! तुम लोग अपने निन्द्य कृत्य से क्यों नहीं विरत हो गये?

(14)

परं विधातुस्तु विधानमेतद्,
विचित्रमेव प्रतिभाति लोके।
अहो करोत्येष समस्तकार्यं,
जनस्तु तत्प्रेरणयैव नित्यम्॥

किन्तु इस संसार में विधाता का विधान विचित्र ही दिखाई देता है। संसार का प्राणी उससे ही प्रेरित होकर समस्त कार्य करता है।

(15)

छिन्नद्रुमा इव यदा जननीन्दिरा सा,
भूमौ शुभा निपतिता मृदुलस्वभावा।
जातं तदा धरणि ते बहुकष्टमद्य,
नो वर्णनस्य करणे कविरत्र शक्तः॥

कटे हुए वृक्षों के समान जब लोक-कल्याणकारिणी, कोमल स्वभाव वाली मातृरूपा वह इन्दिरा गांधी भूमि में गिरी होगी, तब हे पृथ्वी तुम्हें जो कष्ट हुआ होगा उसका वर्णन करने में कवि समर्थ नहीं है।

(16)

निपतिता यदा श्रीमतीन्दिरा,
सपदि ते प्रिये क्रोडसीमनि।
अयि धरे कथन्त्वं विदीर्णतां,
न हि गता तदा मातृरूपिणि॥

हे धरे! आदरणीया श्रीमती इन्दिरा गांधी जब तुम्हारी गोद में धड़ाम से गिरी होगी, तब क्या हे मातृरूपिणी पृथ्वी तुम्हारा दिल विदीर्ण नहीं हुआ होगा? अर्थात् अवश्य हुआ होगा।

(17)

परमहो यदा विश्वमण्डले,
न हि समाश्रयं यच्छति प्रजा।
अयि धरे तदा स्वाङ्कसीमनि,
त्वमयि यच्छसि स्नेहसौहृदम्॥

परन्तु आश्चर्य है कि संसार में जब कोई भी प्राणी आश्रय नहीं देता है अर्थात् प्राणी मृत्यु को प्राप्त होकर निराश्रित हो जाता है, तब हे पृथ्वी! तुम ही एक ऐसी हो जो अपनी निर्मल गोद में स्नेह और सौहार्द प्रदान करती हो।

(18)

यदि धरातले मातृरूपिणीं,
परमपावनीमिन्दिरामिमाम्।
न हि सुरक्षितुं सक्षमो जनो,
वद न कस्त्वदन्या समाश्रयेत्॥

यदि संसार में मातृरूपिणी परमपावनी श्रीमती इन्दिरा गांधी को कोई भी व्यक्ति सुरक्षा देने में समर्थ नहीं है तो तुम ही बताओ उन्हें तुम्हारे अलावा कौन आश्रय दे सकता है? अर्थात् कोई नहीं।

(19)

धरणि वेद्मि ते तां व्यथाकथां,
कुटिलपापिनो धर्मचारिणः।
भुवनभाविनः पुण्यधारिणः,
त्वमयि यच्छसि स्वाङ्कनिर्मलम्॥

हे पृथ्वी! मैं तुम्हारी उस व्यथाकथा को जानता हूँ कि तुम्हें कुटिल, पापी, धर्माचारी, लोक-कल्याणकारी, पुण्यधारी सभी प्राणियों को अपनी गोद में आश्रय देना पड़ता है।

(20)

धरणि धार्यते किं त्वया नहि,
कुटिलसन्ततिः पापकारिणी।
परमहो त्वया किं विधीयते,
ननु समाश्रयस्त्वं हि वर्तसे॥

हे पृथ्वी! क्या तेरे द्वारा कुटिल सन्तान को आश्रय नहीं दिया जायेगा अर्थात् अवश्य दिया जायेगा, क्योंकि तुम भी क्या कर सकती हो क्योंकि तुम सब प्राणियों को आश्रय देने वाली हो, इसलिए इन्हें भी तुम्हें आश्रय देना पड़ेगा।

(21)

परमहो जगन्मृत्युना यया,
सपदि कम्पितं तत्क्षणं हि यत्।
प्रकटयत्यमुं श्रीमतीन्दिरा-,
गुणगणान्वितं गौरवं महत्॥

किन्तु जिस श्रीमती इन्दिरा गांधी की मृत्यु से शीघ्र ही समस्त संसार कम्पित हो उठा, इस प्रकार संसार का कम्पित होना ही तेरे महान् गुण गौरव को स्वतः प्रकट कर रहा है।

(22)

अयि महोज्ज्वले ते मृतौ द्रुतं,
विविधतामयी चित्रतापरा।
भरतभूरियं शोकविह्वला,
सपदि संगतानाथतां भुवि॥

हे अत्यन्त उज्ज्वल चरित्रशालिनी श्रीमती इन्दिरा गांधी! तेरी हत्या होने पर विविधतामयी और चित्र-विचित्र रूपधारिणी यह भारत भूमि शोक से विह्वल होकर आज संसार में अनाथ हो गयी है।

(23)

निधनतापरं वृत्तमप्रियं, श्रवणयोर्यदा संगतं तव।
हृदयतन्त्रिका शून्यतां गता, निखिलदेहिनां मर्मभेदिनी॥

हे मातृरूपा इन्दिरा गांधी! तुम्हारे मृत्युपरक अप्रिय समाचार के कानों तक पहुँचते ही मर्मभेदी समस्त प्राणियों की हृदयतन्त्री शून्यता को प्राप्त हो गयी।

(24)

विश्वे शासनदक्षतामुपगता या शासने शासिका,
सम्पूर्णा भरतावनिः भुवितले संरक्षिता पोषिता।
तस्यास्तन्निलये कृतां कलुषितां संश्रुत्य हत्याकथां,
सम्प्राप्तं भयमद्भुतं जनहृदि श्रुत्वा दशां कष्टदाम्॥

जो इन्दिरा गांधी समस्त विश्व में अपने कुशल शासन के द्वारा लोकप्रियता को प्राप्त हो गयी थी, जिसने अपने सम्पूर्ण भारतवर्ष को बड़े प्यार और निष्ठा से पाला और पोसा, उसके ही घर में किये गये हत्या के कलुषित वृत्तान्त को सुनकर समस्त संसार विचलित हो गया।

(25)

यस्याः शासनमागतं विकसितं भव्यं प्रियं भारतम्,
सर्वोत्थानपरम्परां प्रतिगतं सर्वप्रकारेण यत्।
तस्यास्तन्निलये निशम्य निधनं सर्वात्मना कष्टदं,
संजातो मम मानसे ह्यतितरां खेदो हि मर्मान्तकः॥

जिन श्रीमती इन्दिरा गांधी के शासनकाल में भारतवर्ष सभी प्रकार से फला, फूला, विकसित हुआ, उस इन्दिरा गांधी का उसके ही घर में सभी प्रकार से कष्ट प्रदान करने वाला निधन का समाचार सुनकर मेरे मन में अत्यन्त मर्मान्तक दुःख हुआ।

(26)

देशोत्थानमतिः प्रिया हितकरी श्रद्धास्पदा भाविनी,
सर्वैश्वर्यकरी सदा सुखकरी पुण्यप्रदा शोभना।
श्रीभिस्संवलितेन्दिरा विनिहता गेहे च या साम्प्रतं,
तेनैवात्र मनोऽतिदुःखितमिदं सद्यःमदीयं गतम्॥

देश के उत्थान के लिए प्रवृत्त बुद्धि वाली, प्रिय एवं हितकारी, श्रद्धास्पद आनन्ददायिनी, सभी ऐश्वर्यों को प्रदान करने वाली और सुख देने वाली, पुण्य को प्रदान करने वाली, ऐश्वर्य से सम्पन्न श्रीमती इन्दिरा गांधी को आज घर में ही मार डाला है, इसी कारण मेरा मन आज अत्यन्त दुःखित हुआ।

(27)

भुवनमण्डलमण्डनमण्डने,
जननि ते निधनस्य कथाश्रुतौ।
वसुमती सकला ननु दृश्यते,
सघनदुःखपरा तमसावृता॥

समस्त संसार की शोभा रूप हे माँ इन्दिरा गांधी! तुम्हारे निधन के समाचार को सुनकर सम्पूर्ण पृथ्वी अपने को अत्यन्त दुःखी एवं अन्धकार से घिरी हुई अनुभव कर रही है।

(28)

नयनवारिझरैः परिपूरिता,
हृदयशोकभरा व्यथितास्तथा।
युवतयो युवका विलपन्ति हा,
पुनरहो पुनरेव पुनः पुनः॥

आँखों में आँसुओं की धारा, हृदय में शोक का सागर लिए अत्यन्त दुःखी समस्त युवक एवं युवतियाँ बार-बार विलाप करने लगीं।

(29)

भुवनकार्यविधेर्न हि सन्ति ये,
किमपि बोधपराश्च तथाप्यहो।
सरलभावयुता भुवि बालकाः,
तव वियोगपरा विलपन्ति हा॥

संसार की क्रियाविधि का जिनको लेशमात्र भी ज्ञान नहीं है, तब भी सरल स्वभाव वाले संसार के बालक तुम्हारे विरह में विलाप करते हैं।

(30)

पलितकेशपराः सकला नराः,
निखिलनार्य इमा व्यथितास्समाः।
अहह ता विलपन्ति मुहुर्मुहुः,
विमलवक्षविताडनतत्पराः ॥

अत्यन्त वृद्ध एवं समस्त विश्व की नारियाँ अपनी छाती को पीट-पीट कर तुम्हारे निधन पर बार-बार विलाप कर रही हैं।

(31)

भुवनमण्डलमानव एव हि,
जननि ते निधनेन विलोक्यते।
भयपरो व्यथितोऽपि च दुःखितो,
बहुविधश्चलितोऽपि च दृश्यते॥

हे माँ! समस्त संसार का मानव मात्र तुम्हारे निधन से अत्यन्त दुःखित, भयपीड़ित, व्यथित और चंचल भी दिखायी दे रहा है।

(32)

दिशस्समस्ताः प्रदिशस्समस्ताः, नभोऽपि भूमिश्च जगत्समस्तम्।
श्रुत्वेन्दिराया निधनस्य वृत्तं, वियोगभूमिं प्रति संगतं हा॥

समस्त दिशाएँ एवं प्रदिशाएँ, आकाश और पृथ्वी तथा समस्त संसार श्रीमती इन्दिरा गांधी के आकस्मिक निधन को सुनकर अत्यन्त वियोग को प्राप्त हो गया।

(33)

विलपन्ति दिशः प्रदिशश्च तथा, गगनं विलपत्यतितारखैः।
विलपत्यतिकष्टहृदा भुवनं, निधनेन तवासमये जननि॥

हे माँ! तुम्हारे असमय निधन के कारण दिशाएँ विलाप करने लग गयीं, सारा आकाश ऊँचे स्वर में विलाप करने लग गया। इतना ही नहीं, समस्त भूमण्डल अत्यन्त कष्ट से विलाप करने लग गया।

(34)

विलपन्ति खगाः पशवोऽपि नगा, विलपन्ति च कीटपतङ्गदलाः।
तरवो विलपन्ति वियोगभरा, निधनेन तवासमये जननि!॥

हे माँ! तुम्हारे आकस्मिक निधन से दुःखी होती हुई दिशाएँ प्रदिशाएँ, पशु पक्षी, कीट, पतङ्ग, पेड़, पौधे आदि समस्त संसार वियोग से दुःखी होता हुआ विलाप कर रहा है।

(35)

अयि ते मरणं विलोक्य हे, पवनश्चापि विरामतां गतः।
विभया प्रभयापि चन्द्रमाः, प्रतियातो भुवि मन्दतां द्रुतम्॥

हे माँ तेरी मृत्यु को देखकर के हवा भी रुक गयी और चन्द्रमा अपनी विभा एवं प्रभा से मन्दता को प्राप्त हो गया।

(36)

भुवने तपनस्य तापनं, शिथिलत्वं तु तदा गतं ध्रुवम्।
जननी जनवल्लभा यदा, प्रतियाता तु दिवं प्रतीन्दिरा॥

संसार में सूर्य का तेज भी तुम्हारी मृत्यु को देखकर शिथिल हो गया, क्योंकि समस्त संसार की लोकप्रिय माँ आज स्वर्ग सिधार गयीं।

(37)

अयि काल! दयामयीं शुभां, कुशलां शासनशासिकामिमाम्।
जननीं भरतावनेः प्रियां, हरतः किन्नु दयागता न वा?॥

हे मृत्यु! दयामयी, कल्याणकारिणी, कुशलशासिका, भारतभूमि की प्यारी माँ श्रीमती इन्दिरा गांधी को हरते हुए क्या तुमको दया नहीं आयीं?

(38)

निजजन्मभुवः कृते यया, सकलं जीवनमर्पितं प्रियम्।
हरतः किल चेन्दिराञ्च तां, मरण! ब्रूहि दयागता न वा॥

जिस माँ इन्दिरा ने अपनी मातृभूमि के लिए अपना समस्त जीवन आद्योपान्त अर्पित कर दिया, उस इन्दिरा को हरते हुए है मौत! बताओ क्या तुम्हें दया नहीं आयी।

(39)

असहायधरामिमां प्रियां, परिहाय क्व गतासि सम्प्रति?
भुवनभ्रमनाशकारिणि, सपदि ब्रूहि दयामयीन्दिरे॥

हे दयामयी इन्दिरे! इस प्यारी पृथ्वी को असहाय छोड़कर तुम कहाँ चली गयी हो? हे संसार के भ्रम को नाश करने वाली इन्दिरे! शीघ्र हमें बताओ।

(40)

अयि यत्सुनिमेषमात्रतो, भयभीताः प्रभवन्ति शासकाः।
अनिमेषमिमं विलोक्य ते, हृदयं मे परिपीड्यतेऽधुना॥

अयि इन्दिरा गांधी! जिस तुम्हारे निमेष मात्र से ही सारे संसार के शासक भयभीत होते थे, ऐसी तुम्हें आज अनिमेष देखकर मेरा हृदय अत्यन्त पीड़ा को प्राप्त हो रहा है।

(41)

प्रथमं तु समाश्रयस्त्वया, सकलेभ्यस्तु सदैव दीयते।
परमद्य निराश्रया सती, पतिता सा भुवि कीदृशीन्दिरा॥

पहले जिस इन्दिरा गांधी के द्वारा संसार के प्राणिमात्र को पवित्र आश्रय दिया जाता था, वही आज तुम आश्रयविहीन हो करके पृथ्वी में किस तरह गिरी हो।

(42)

कथमत्र विधे त्वयि द्रुतं, जननीं तां प्रति वक्रता गता।
यदियं जनसौख्यदायिनी, सहसा चैव हृता मनस्विनी॥

हे विधाता! तुम श्रीमती इन्दिरा गांधी के प्रति शीघ्र ही इस तरह कैसे वक्र हो गये हो, जो तुमने समस्त प्राणियों को सुख प्रदान करने वाल मनस्विनी श्रीमती इन्दिरा गांधी को सहसा ही हर लिया है।

(43)

प्रकृतेर्नियमोऽत्र वर्त्तते, भुवि यो जन्म दधाति मानवः।
स हि याति विलीनतामपि, नियमः स्वीकृत एष किन्त्वया॥

इस संसार में प्रकृति का नियम है कि जो मनुष्य संसार में जन्म लेता है, वह अवश्य ही विलीनता को प्राप्त होता है। हे इन्दिरे! क्या तुमने इसी नियम को स्वीकार किया है?

(44)

मनसा वचसापि कर्मणा,
मनुजैर्विश्वनिवासिभिस्समैः ।
सुमनोञ्जलिभिः प्रपूज्यते,
चरणस्ते सततं हि भक्तितः ॥

मन से, वाणी से एवं कर्म से संसार के समस्त प्राणी अत्यन्त श्रद्धा से तुम्हारे चरणों में सुमनांजलि अर्पण करते हैं।

(45)

मातस्त्वदीयचरणाम्बुजभक्तिभावाः,
स्नेहाश्रुपूरितपराः प्रियभारतीयाः ।
स्वप्नेऽपि विस्मृतिपथं न कदापि लोके,
नेष्यन्ति चारुचरितं तव पावनं तत् ॥

हे माँ! तुम्हारे कमलरूपी चरणों के प्रति भक्तिभाव से परिपूर्ण स्नेहाश्रु से द्रवीभूत समस्त भारतीय तुम्हारे सुन्दर एवं पवित्र चरित्र को स्वप्न में भी नहीं भूलेंगे।

(46)

संघर्षपूरितमिमं तव जीवनं हे,
मातस्सदा दिशतु लोकहिताय शिक्षाम्।
त्वद्दर्शितं जननि पूज्यपथप्रयाणं,
श्रद्धाञ्जलिश्चरणयोः स हि तेऽत्र मान्यः ॥

संघर्ष से परिपूर्ण लोकहितकारी तुम्हारा जीवन संसार में लोक-कल्याण की शिक्षा प्रदान करता रहे और तुम्हारे द्वारा लोकहित के लिए प्रदर्शित पूजनीय मार्ग पर चलना ही तुम्हारे चरणों में सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

(47)

किं किं त्वया नहि कृतं जननीन्दिरे हे,
हा भारतस्य यशसे महते हिताय।
तस्माद्धि भारतमिदं मनसा स्मरत्ते,
श्रद्धाञ्जलिं चरणयोः वितनोति भक्त्या॥

हे माँ! तुमने भारत की भलाई के लिए क्या-क्या नहीं किया? उन्हीं सत्कार्यों को मन से स्मरण करता हुआ सारा भारतवर्ष आपके चरणों में श्रद्धांजलि अर्पण कर रहा है।

(48)

देशाय वै वीरगतिं गताया, रक्तस्य यस्याः पतिताः कणाः ये।
ते ते भविष्यन्ति सदैकतायाः, प्रतीकरूपा जगतीतलेऽस्मिन्॥

उस श्रीमती गांधी के देश के लिए वीरगति को प्राप्त होते हुए उसके शरीर से जितनी भी खून की बूँदें इस धरती पर गिरी होंगी, वे सभी संसार में हमेशा राष्ट्रीय एकता की प्रतीक होंगी।

(49)

युगं विलीनन्तु सह त्वयैव, हे मातृरूपे जगदम्ब भव्ये।
विश्वेतिहासे तव शासनस्य, ह्यद्यावधि किन्न मनोरमं हा॥

हे मातृरूप कल्याणकारिणी श्रीमती इन्दिरा गांधी! विश्व के इतिहास में आज तुम्हारे शासन का सुन्दर एक युग तुम्हारे साथ ही विलीन हो गया।

(50)

अखण्डतायै भुवि भारतस्य, त्वदीयमेतद् बलिदानमत्र।
स्वर्णाक्षरैस्ते रजतस्य पट्टे, लेखिष्यतीति प्रियनाम मातः॥

हे माँ! भारतभूमि की अखण्डता के लिए तुम्हारा यह बलिदान चाँदी के पट्ट पर सोने के अक्षरों में निश्चय रूप से लिखा जायेगा।

(51)

महाप्रयाणं भुवनात्तवेदं,
न विस्मरिष्यन्ति कदापि लोकाः।
प्रणम्य भक्त्या हृदि निष्ठयापि,
समर्चयिष्यन्ति पदाम्बुजं ते॥

हे माँ! संसार से तुम्हारे इस महाप्रयाण को संसार कभी भी नहीं भूलेगा और भक्ति एवं श्रद्धा से प्रणाम करता हुआ तुम्हारे कंमलरूपी चरणों की हमेशा पूजा करेगा।

(52)

यावच्चन्द्रदिवाकरौ विलसतो यावच्च वायुस्तथा,
यावद्व्योम विराजते जननि हे यावद्धरा शोभते।
यावद्विश्वमिदं विभाति सकलं यावज्जलं निर्मलं,
तावत्कीर्तिरतीव भव्यविमला ते राजतां भ्राजताम्॥

हे जननि! इन्दिरे! जब तक सूर्य और चाँद शोभायमान हैं, जब तक वायु, आकाश, पृथ्वी, जल एवं विश्व विद्यमान हैं, तब तक तुम्हारी अत्यन्त उज्ज्वल एवं स्वच्छ कीर्ति संसार में देदीप्यमान होती रहे।

(53)

श्रद्धाञ्जलिमिमां भक्त्या श्रद्धाभावसमन्वितः।
इन्दिरायै प्रणम्यायै कविरेष समर्पये॥

श्रद्धाभाव से समन्वित होता हुआ यह कवि श्रीकृष्णसेमवाल भक्तिपूर्वक इस श्रद्धांजलि को वन्दनीय इन्दिरा जी के चरणों में अर्पित करता है।

हिमाद्रिपुत्राभिनन्दनकाव्यम्

1. हिमाद्रिपुत्राभिनन्दनकाव्यम्

हिमाद्रिपुत्राभिनन्दनकाव्यम्

(1)

संसारनाटककलावरसूत्रधारं,
विश्वेश्वरं हि जगतां परमार्थसारम्।
ध्यात्वा वयं प्रमुदिताः सकला प्रकुर्मो,
विद्यावतो बहुगुणस्य चरित्रचर्चाम्॥

संसार रूपी नाटक के कुशल सूत्रधार, जगत् के परमतत्त्व और नियामंक परमेश्वर का ध्यान करके हम सभी प्रसन्नचित्त होकर विद्यावान् एवं सर्वगुण सम्पन्न हेमवतीनन्दन बहुगुणा के सुन्दर व्यक्तित्व का वर्णन करते हैं।

(2)

प्रणतपालिनीं शक्तिशालिनीं,
परमपावनीं विश्वभाविनीम्।
विजयकारिणीं दुःखहारिणीं,
त्रिपुरसुन्दरीं नौमि सादरम्॥

भद्रजनों की रक्षा एवं पालन करने वाली, शक्तिशालिनी अत्यन्त पवित्र, विश्वनिर्माणकर्त्री, विजयदात्री एवं दुःखों को नष्ट करने वाली भगवती त्रिपुरसुन्दरी देवी की मैं सादर वन्दना करता हूँ।

(3)

पवित्रदेशे गढभूप्रदेशे,
सम्प्राप्य जन्मात्र सुपुण्यरूपः।
आसेतु यश्चापि समस्तदेशे,
जातः प्रियो हैमवतीव सोऽयम्॥

अत्यन्त पुण्यशाली बहुगुणा जी पवित्र गढ़वाल भूमि में जन्म लेकर उसी प्रकार समस्त देश में प्रिय हैं जिस प्रकार गढ़वाल से समुत्पन्न गंगा पूज्य एवं प्रिय है।

(4)

हिमाद्रिकुक्षेर्गढभूप्रदेशात्
यथा स्रुतो जह्नुसुताप्रवाहः।
करोत्यमन्दं भुवनं पवित्रं,
कुर्यादयं हेमवती तथैव॥

जिस प्रकार हिमालय की गोद में बसे गढ़वाल से निकलता हुआ गंगा का प्रवाह सम्पूर्ण संसार को निरन्तर पावन एवं उपकृत करता है उसी प्रकार गढ़वाल की पवित्र भूमि में जन्म लेने वाले श्री बहुगुणा सभी के उपकार में सतत रत रहें।

(5)

बुघाणीग्रामे यस्सकलगढ़वालस्य विमले,
गृहीत्वा सज्जन्म प्रकृतिकृतसौरम्यविभवे।
शिशोश्चापल्येऽपि प्रकृतिगुरुता येन पठिता,
सदा सोऽयं लोके दिशतु महिमानं गुणमयम्॥

प्रकृति के अनुपम सौन्दर्य युक्त वैभव-से विभूषित गढ़वाल मण्डल के अन्तर्गत बुघाणी ग्राम में जन्म लेकर बाल सुलभ चपलता में भी जिसने प्रकृति से गुरुता का पाठ पढ़ा वे बहुगुणाजी संसार में उस गौरवमयी महानता का दिग्दर्शन कराते रहें।

(6)

सकलनयविदां यो माननीयो वरिष्ठः,
प्रथितवरचरित्रो दुष्टदर्पस्य हन्ता।
अजनि बहुगुणोऽयं चारुपात्रं गुणानां,
परमविमलगेहे रेवतीनन्दनस्य॥

निखिलनीतिशास्त्रमर्मज्ञो में वन्दनीय, श्रेष्ठ चरित्र, दुष्टों के दर्प को शमन करने वाले एवं गुणागार श्रीबहुगुणा ने पण्डितप्रवर श्री रेवतीनन्दन जी के पवित्र घर में जन्म लिया।

(7)

षट्सप्त्या नवदशशतादूर्ध्वया वैक्रमाब्दः,
संख्यातो यः सकलभुवने राधमासस्य तस्य।
एकादश्याः सुविमलतिथौ शुक्लपक्षस्य तत्र,
कुक्षेर्जातः प्रियबहुगुणः कर्कलग्ने स्वमातुः॥

विक्रमी सम्वत् 1976 के वैशाख मास की शुक्ल पक्षीय एकादशी की पुण्य तिथि पर कर्क लग्न में माता की कुक्षि से बहुगुणा जी ने जन्म लिया।

(8)

हृदयनन्दनश्चारुचन्दनः,
मृदुलभावनो मान्यमानवः।
अनुजतां गतो यस्य यः क्षितौ,
विधिकृपाफलं वर्तते ध्रुवम्॥

चन्दन के समान सुन्दर, कोमल भावनाओं वाले माननीय हृदयनन्दन जी ने संसार में जो बहुगुणा जी के कनिष्ठ भाई का स्थान प्राप्त किया वह निश्चय ही विधाता की कृपा का फल है।

(9)

सन्निर्देशे प्रथमवयसि स्वस्य तातस्य चैव,
चौखम्बायाः परमनिकटे गुप्तकाश्यां नगर्य्याम्।
ऊषस्थानेऽपि च सुविमले येन चारम्भिकी या,
शिक्षा प्राप्ता जनहितकरी लोकपुण्याय सा स्यात्॥

वाल्यावस्था में अपने पूजनीय पिता के ही सुन्दर निर्देशन में चौखम्बा पर्वत के अत्यन्त निकट गुप्तकाशी एवं ऊखीमठ में जिसने आरम्भकालीन लोकोपकारी जो शिक्षा प्राप्त की वह संसार के कल्याणार्थ होती रहे।

(10)

पित्रा सोऽयं सुविमलमतिः देहरादूनपुर्य्यां,
प्राप्तुं शिक्षामथ बहुविधां प्रेषितस्सद्य एव।
गौराङ्गाणां कलुषितहृदां तत्र संवीक्ष्य वृत्तिं,
खिन्नो जातो ननु बहुगुणश्शीघ्रमेवं तदानीम्॥

इसके बाद सुकोमल बुद्धि वाले उस बहुगुणा को पिता ने नाना प्रकार की जीवनोपयोगी शिक्षा को प्राप्त करने के लिए देहरादून नगर में भेजा। परन्तु वहां कलुषित हृदय वाले अंग्रेजों के व्यवहार को देखकर शीघ्र ही वह परम विषाद को प्राप्त हुआ।

(11)

तस्यां नगर्यां निवसन् गुणज्ञः,
गौराङ्गदुःशासननाशनाय ।
अहोऽकरोद्दीक्षितमत्र शीघ्रं,
प्रबुद्धबुद्धिं किल छात्रवृन्दम्॥

उस देहरादून नगर में रहते हुए बहुगुणा जी ने अंग्रेजों के दुष्ट शासन के विनाश के लिए समस्त छात्र समूह में जागरण का मंत्र फूंका।

(12)

तस्मात्स्थानादपि बहुगुणस्सम्प्रयातः प्रयागे,
शिक्षामुच्चामधिगतमना विश्वविद्यालये सः।
किन्त्वत्रापि व्यथितहृदयः क्रान्तियुद्धं विधाय,
गौराङ्गाणां समभवदसौ कारणं तत्र भीतेः॥

तदनन्तर यह उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए देहरादून से इलाहाबाद विश्वविद्यालय में गया। किन्तु यहाँ भी यह अंग्रेजों के आततायी शासन से दुःखी होकर क्रान्ति युद्ध करके अंग्रेजों के लिए भय का कारण बना।

(13)

बद्ध्वैकसूत्रे श्रमिकाञ्च छात्रान्,
शक्तिर्विशेषा जनताहिताय।
या सर्जिता तेन कुशासनं तज्,
जातं भयेन व्यथितं तदैव॥

वहाँ रहकर श्रमिकों और छात्रों को एक सूत्र में बांधकर देश के हित के लिए उसने लोक शक्ति को अर्जित किया उससे अंग्रेजों का कुशासन भयभीत हो उठा।

(14)

निरीक्ष्यैनं देशं सितजनदलाक्रान्तमखिलं,
विधातुं स्वाधीनं जगति विमलं भारतमिदम्।
परित्यक्तं येन स्वपरिजनवात्सल्यमपि तत्,
सदा सोऽयं लोके जयतु जनतायाः प्रियजनः॥

भारत देश को अंग्रेजों के दल से आक्रान्त देखकर उसे स्वाधीन बनाने की कामना से जिन्होंने समस्त परिजनों के वात्सल्यादि स्नेह बन्धनों को त्यागा। इस प्रकार वह जनता के प्रिय जन बहुगुणा जी विजयोत्कर्ष को प्राप्त करें।

(15)

स्वपित्रा संरुद्धो भयनिगडबद्धे हि निखिले,
व्यमुञ्चन्मोहं यो निजसुवपुषोऽप्यत्र भुवने।
सिताङ्गद्रोहार्थं समभवदसौ क्रान्तिपथिकः,
सदा सोऽयं लोके जयतु जनताया हितकरः॥

समस्त भारतभूमि को पराधीनता रूपी भय की बेड़ी से बंधा देखकर पिता जी के द्वारा क्रान्ति युद्ध में जाने से रोकने पर भी जो अपने शरीररादि मोह को छोड़कर अंग्रेजों को उखाड़ने के लिए क्रान्तिपथ का पथिक बन गया वह जनता का हितैषी बहुगुणा लोक में यश को प्राप्त करे।

(16)

विद्यायाः पठनं विहाय निखिलं सौख्यं समस्तं तथा,
क्रान्तेर्वर्त्मनि संस्थितं प्रतिदिनं देशस्य रक्षाविधौ।
स्वातन्त्र्यस्य समीहया निजभुवः कारागृहे गामिनं,
श्रद्धाभावनया नमन्ति मनुजाः स्नेहेन तं श्रीपतिम्॥

अपनी शिक्षा तथा समस्त सुखों को त्याग कर देश की रक्षा-परम्परा में क्रान्ति के पथ पर चलने वाले, स्वदेश भूमि को आजादी दिलाने के लिए कारागृह में जाने वाले श्री कमलापति बहुगुणा को लोग श्रद्धा से प्रणाम करते हैं।

(17)

गौराङ्गस्य कुशासनेऽतिकुटिले पापान्विते दूषिते,
देहस्याखिलसौविधं स विजहौ तस्य प्ररोधं प्रति।
गूढं भूमिगतं कृतञ्च कठिनञ्चान्दोलनं येन हि,
सोऽयं विश्वनिकेतने विजयतां संराजतां भ्राजताम्॥

अंग्रेजों के अति कुटिलता युक्त, दूषित एवं पापपूर्ण कुशासन में उससे ही विरोध करने के लिए प्राणों की परवाह न कर आपने गुप्त रूप से गूढ़ भूमिगत आन्दोलन किया। ऐसे आप संसार में विजयोत्कर्ष को प्राप्त करते रहे।

(18)

गौराङ्गदुष्टेभ्य इहाप्य भूयः,
कुयातनां दारुणदुःखदात्रीम्।
नाभूत्स्वकार्याच्चलितः कदापि,
जयेज्जगत्यां स जयप्रवीरः॥

दुष्ट कुचाली अंग्रेजों से नाना प्रकार की कष्ट पूर्ण यातनाओं को प्राप्त करके भी जो अपने कर्तव्य मार्ग से विचलित नहीं हुआ। ऐसा यशस्वी वीर बहुगुणा सर्वजनवन्दनीय एवं अभिनन्दनीय है।

(19)

गौराङ्गस्य कुशासनं प्रति जनैर्यो भारते निर्मितः,
कांग्रेसाह्वयतां गतो हितकरस्तस्मिन्क्षणे सद्दलः।
ख्यातस्तस्य दुरूहकार्यकरणे लोके सदा यो जनः,
सोऽयं सर्वगुणैर्युतो बहुगुणस्सभ्राजतां भूतले॥

अंग्रेजों के कुशासन से रुष्ट होकर जनता ने कांग्रेस नाम से जनहितकारी जिस सुन्दर दल का गठन किया था उसमें अत्यन्त कठिन कार्यों के सम्पादन में बहुगुणा जी ख्यातनामा थे, ऐसे गुण-गण-विभूषित आप संसार में देदीप्यमान हों।

(20)

स्वाधीनतायै ननु भारतस्य,
दत्तावधाना जननायका ये।
तैरेव साकं हिमपुत्र एष,:
समर्पितोऽभूत्परिहाय सर्वम्॥

भारत को परतन्त्रता से मुक्ति दिलाने के लिए जिन नेताओं ने अपना जीवन समर्पित किया था उनमें अपना सर्वस्व त्याग करने वाले हिमपुत्र श्री हेमवतीनन्दन भी एक हैं।

(21)

यस्याश्चेतसि भावनेयमनिशं संराजते स्म प्रिया,
स्वाधीनं मम भारतं भुवि भवेद्गौराङ्गकैर्दूषितम्।
कृत्वानेन तदा तया कमलया सार्धं विवाहं वरं,
वीरेणाधिगतं शुभं द्विगुणितं क्रान्तेर्महासाहसम्॥

जिस कमला के हृदय में निरन्तर यही प्रिय भावना विराजमान रहती थी कि "संसार में अंग्रेजों के द्वारा दूषित मेरा भारत स्वतन्त्र हो" इस भावनाशालिनी उस कमला के साथ विवाह करके इन्हें क्रान्ति युद्ध के लिए द्विगुणित साहस प्राप्त हुआ।

(22)

गेहे विभाति कमला गृहिणी सदैव,
नीतौ विभाति सचिवेन समा च यास्मै।
दुःखे विभाति भुवने प्रियमित्रतुल्या,
दीर्घायुषं स लभताञ्च तयैव सार्धम्॥

जो कमला बहुगुणा जी के लिए घर में गृहिणी है, नीतिकार्यों में सचिव के समान है और दुःख में मित्र के समान है। ऐसी जीवनसङ्गिनी कमला के साथ आप दीर्घ जीवन व्यतीत करें।

(23)

वसन्ते वासन्ती व्यजनमनुकूलं प्रतपने,
महच्छत्रं वृष्ट्यां शरदि विमलश्चन्द्रकिरणः।
कवोष्णं हेमन्ते प्रभवति नवाशा च शिशिरे,
सदा या लोके सा जयतु कमला ते सुगृहिणी॥

आपकी जो सहधर्मिणी आपके जीवन के वसन्त में वासन्ती सुषमा के समान एवं ग्रीष्म में अनुकूल व्यजन के समान, वर्षा में महान् छत्र के समान, शरद् में निर्मल चन्द्रिका के समान हेमन्त में उष्णता लिए हुए और शिशिर में नई आशा के समान है, वह आपकी सहधर्मिणी सदा लोक में यश को प्राप्त करे।

(24)

प्रभोर्भक्त्यासक्तं जनकजननीसेवनपरं,
स्ववंशोत्थानेऽपि प्रबलनिपुणं धर्मनिरतम्।
गुणानामागारं भुवि निखिलनीत्यां सहचरं,
त्वदीयं दाम्पत्यं भवतु शतवर्षात्मकमिदम्॥

प्रभु की भक्ति में तल्लीन, माता-पिता की सेवा में निरंत, वंशोत्थान में निपुण, धर्मपरायण, नीति सम्बन्धी समस्त क्रिया कलापों में परस्पर सहयोगी, गुणों का भण्डार आपका दाम्पत्य जीवन शतायु हो।

(25)

स्वकीयवंशस्य परम्परायाः,
सञ्चालनार्थं जगतीतलेऽस्मिन्।
असूदसौ चारुतरं विशेषं,
सुतद्वयं स्वात्मगुणानुरूपम्॥

संसार में अपनी वंशपरम्परा के निरन्तर चलने हेतु इस दम्पत्ति ने अपने ही गुणानुरूप सुन्दर दो पुत्रों को जन्म दिया।

(26)

विजयशेखरौ पुत्रपावनौ,
गुणगणैर्युतौ पितृवत्सलौ।
बुधजनप्रियौ देशसेवकौ,
प्रभवतामिमौ दीर्घजीविनौ॥

सर्वगुण सम्पन्न, माता-पिता के लाडले विद्वानों के प्रिय एवं देश सेवक आपके दोनों पुत्र विजय एवं शेखर दीर्घजीवी हों।

(27)

स्वतन्त्रतायां किल भारतस्य,
कांग्रेसयोगोऽस्ति महान् विशेषः।
तस्यास्त्यपूर्वो घटने सुयोगः,
श्रीसंयुतस्य प्रथितो जगत्याम्॥

भारत को स्वतन्त्रता दिलाने में कांग्रेस पार्टी का अभूतपूर्व योगदान रहा और उसके संगठन में इस दम्पति का सहयोग अतिशय प्रशंसनीय रहा।

(28)

संघर्षतामुपगते त्विह धर्मयुद्धे,
प्राप्ता च या सफलता भवतात्र तस्याम्।
किं भारतं विमलतां गुरुताञ्च लोके,
यातस्तया मधुरतां न हि देश एषः॥

स्वातन्त्र्य संग्राम रूपी धर्मयुद्ध में संघर्षता को प्राप्त होने पर उसमें आपने जो सफलता प्राप्त की, क्या उससे यह देश संसार में गौरव को, सुन्दरता को एवं मधुरता को प्राप्त नहीं हुआ।

(29)

जयानन्तरं ह्यूत्तरस्थे प्रदेशे,
दले वा स्थले वा तथा शासनेऽपि।
कृतं यत्र कुत्रापि कार्यन्त्वया यत्,
जयस्तत्र लब्धो न किं ते विशेषः ?॥

अंग्रेजों के साथ स्वतन्त्रता युद्ध में विजय-प्राप्ति के पश्चात् उत्तर प्रदेश में चाहे दल में रहकर या किसी पद पर रहकर या सामान्य रूप में रहकर अर्थात् जहां कहीं भी रहकर आपने जो भी राष्ट्र-हित में कार्य किया उसमें आपको क्या सफलता नहीं मिली।

(30)

पुरा नीतिशास्त्रप्रवीणेन तेन,
विकासाय देशस्य भक्त्येन्दिरायाः।
कृतः सन्ततं यद्विशेषः सुयोगः,
स्मृतिं नैति सा चेतसा तत्कदापि॥

नीतिशास्त्र में प्रवीण श्री बहुगुणा ने देश के विकास के लिए श्रीमती इन्दिरा गांधी को प्रारम्भ से भक्तिपूर्वक निरन्तर जो सहयोग दिया उस याद को हृदय से श्रीमती गान्धी कभी नहीं भूलती।

(31)

यद्दर्शितं मार्गमनुप्रयान्ती,
कांग्रेससत्तां द्रुतमध्यगच्छत्।
तस्यै सदा तस्य समस्तयोगो-,
भवेज्जगत्यां मम कामनेयम्॥

जिस बहुगुणा के मार्गदर्शन में श्रीमती इन्दिरा गान्धी ने अतिशीघ्र कांग्रेस सत्ता प्राप्त की थी, उसका सम्पूर्ण सहयोग श्रीमती गांधी को निरन्तर मिलता रहे यही मेरी शुभकामना है।

(32)

राष्ट्रीयकांग्रेसदलस्य मध्ये,
प्राप्ते महामन्त्रिपदे वरिष्ठे।
ऐतिह्यविख्यातजयं सुलभ्य,
कीर्तिस्त्वयालम्भि जगत्यपूर्वा॥

राष्ट्रीय कांग्रेस के दल में महामन्त्री के पद पर आसीन होकर सन् 1971 में ऐतिहासिक विजय को प्राप्त कर आपने संसार में अपूर्व यश को प्राप्त किया।

(33)

सञ्चारमन्त्रित्वपदाधिरूढे,
मन्त्रालयः किन्न गतो विकासम्।
अजय्यशक्तेर्विपुलं निधानं,
वयं नमामो मनसापि वाचा॥

संचारमन्त्री के पद पर आरूढ होने पर क्या उस मन्त्रालय ने अपरमित उन्नति नहीं की? अर्थात् अवश्य की। अतः ऐसे विलक्षण शक्ति के निधान आपको हम मन एवं वाणी से प्रणाम करते हैं।

(34)

परिवीक्ष्य विचित्रकौशलं,
घटनस्यापि नियन्त्रणस्य ते।
अयि! तुभ्यमयच्छदत्र सा,
पदभारं किल मुख्यमन्त्रिणः॥

तुम्हारे संगठन और नियन्त्रण के विचित्र कौशल को देखकर उस इन्दिरा ने निश्चय ही तुम्हें उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री का पद सौंपा।

(35)

अपरं खलु चाटुकृज्जनै-,
र्निजमेतन्तु निशम्य कण्टकम्।
पदमार्पयदत्र सा त्विमं,
त्वरितन्ते बहुकण्टकान्वितम्॥

दूसरे पक्ष में चापलूसों के द्वारा इन्दिरा जी ने बहुगुणा को अपने कार्यक्षेत्र का कांटा सुनकर इन्हें अपने बहुकण्टकाकीर्ण उत्तर प्रदेशशीय मुख्यमन्त्री के पद को अविलम्ब प्रदान किया।

(36)

निजबुद्धिबलेन धीमता,
विकटे तत्र च दुष्करे क्षणे।
न हि कोऽपि च विस्मरिष्यति,
भवता यो विजयोत्सवोऽर्जितः॥

आपने अपने बुद्धि बल के द्वारा अत्यन्त कठिन एवं भयंकर समय में उत्तर प्रदेशीय चुनावों में जो अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की उसे कोई भी व्यक्ति नहीं भूल सकता।

(37)

उत्थानं किल शिक्षणस्य विहितं ह्युद्घाट्य शिक्षालयान्,
उद्योगा अपि यत्र तत्र विविधा उद्घाटिताः सत्वरम्।
ये ये शासनकर्मधर्मनिरतास्तेषान्त्वया या प्रिया,
भव्या वेतनवृद्धिरत्र विहिता कार्यं कृतं तद्वरम्॥

आपने उत्तर प्रदेशीय अपने शासन काल में शीघ्र ही वहाँ अनेक विश्वविद्यालयों एवं नाना प्रकार के उद्योगों को खोला। साथ ही शासन में जितने भी कर्मचारीगण थे उन सब की वेतन वृद्धि कर एक उत्कृष्ट कार्य किया।

(38)

अस्मिन्प्रदेशे तव शासने सति,
प्रशासनं शासनतां गतं पुनः।
कार्येषु दक्षा मनुजाः प्रसन्ना,
भयाकुलाश्चाटुकलासुदक्षाः ॥

इस प्रदेश में आपके शासन में प्रतिष्ठित होते ही शिथिल प्रशासन पुनः अनुशासित हो गया। आपके शासन में कार्य के प्रति निष्ठावान् कर्मचारी प्रसन्न थे और चाटुकारिता में प्रवीण लोग भयभीत थे।

(39)

अहो समुत्साहसमन्वितेन,
स्वकीयराज्ये मनसापि वाचा।
आतिथ्यरूपे स हि कूटनीत्या,
समर्चितस्तेन जयप्रकाशः॥

उस बहुगुणा ने अपने राज्य उत्तर प्रदेश में अत्यन्त उत्साह युक्त मन और वाणी तथा कूटनीति से अतिथि के रूप में श्री जयप्रकाश का स्वागत किया।

(40)

प्रदेशोऽधुनापि स्मरत्युत्तरस्थः,
त्वदीयं प्रियं मुख्यमन्त्रित्वकालम्।
यदा सर्वलोकस्सुखैः पूर्ण आसी-,
च्चारित्रेण वित्तेन सत्कर्मणापि॥

उत्तर प्रदेश की जनता आज भी आपके मुख्यमन्त्री काल को स्मरण करती हुई नहीं अघाती है। जब वहां प्रत्येक व्यक्ति अपने चरित्र से, धन से एवं सदाचरण से सम्पन्न था।

(41)

शक्तेर्निधानं सुमतेस्सुकोशं,
लोकप्रियन्त्वां किल वीक्ष्य बन्धो;।
भीत्याकुलस्तत्र विरोधपक्षः,
जातस्तदा शीघ्रमतीव तप्तः॥

आपको शक्तिशाली, बुद्धि का खजाना एवं लोकप्रिय व्यक्ति जानकर प्रतिपक्षी लोग शीघ्र ही भय से व्याकुल हो उठे हैं।

(42)

समाजवादीयप्रभावदीप्तं,
भवन्तमालोक्य जनाभिवन्द्यम्।
तत्खण्डनार्थं प्रतिपक्षयत्नान्,
को नात्र जानाति जनो जगत्याम्॥

जन-मानस में वन्दनीय आपके समाजवादीय प्रभाव को देखकर उसको निरस्त करने के लिए विरोधियों ने जो कुछ किया उसे कौन नहीं जानता है।

(43)

इन्दिरामन्दिरान्निर्गतैर्निर्मितं,
दुःखितैर्नेतृभिर्यद्दलं भारते।
तत्र यातेऽप्यहो नात्मना किं त्वयि,
तां प्रति स्नेहभावस्त्वया दर्शितः॥

इन्दिरा दल से निकलकर दुःखी जिन नेताओं ने नये दल का निर्माण किया था वहां रहकर भी आपने दिल से श्रीमती गांधी के प्रति स्नेहभाव ही रखा थां।

(44)

भयेनाकुला वा व्यथापीडिता वा,
भृशं शापिता दुखिता ये तदानीम्।
स्तुवन्त्यद्य ते धन्यधन्याः कृतज्ञाः,
प्रियं लब्धवन्तस्त्वदीयं सुयोगम्॥

भारत में दुःखी डरे हुए पीडा ग्रस्त-जन आपका कल्याणकारी सहयोग प्राप्त कर प्रमुदित होते हुए आपके प्रति निरन्तर कृतज्ञता प्रकट कर अपने को धन्य समझते हैं।

(45)

सहयोगमवाप्य तेऽद्भुतं,
परिभूयात्र तदिन्दिरादलम्।
शुशुभे जनताजयश्रिया,
नवतां तामवगाहतेऽपि सा॥

आपके अद्भुत सहयोग को प्राप्त कर जनता-पार्टी ने इन्दिरा की कांग्रेस पार्टी पर विजय प्राप्त की जिससे उसमें नवस्फूर्ति का संचार हुआ।

(46)

जनताशासने रम्ये,
राजते स्म महातपाः।
रसायनादितत्त्वानां,
मन्त्रित्वेन निरन्तरम्॥

जनता पार्टी के सुन्दर शासन में यह महातपस्वी रसायन, पैट्रोलियम, एवं उर्वरक विषयक मन्त्रिपद पर विराजमान रहा।

(47)

प्राप्ते शुभे मन्त्रिपदे त्वदीये,
तैलादिकानां च रसायनानाम्।
कुत्राप्यहो भारतभूमिभागे,
न न्यूनताभूदिह चौषधीनाम्॥

आपके रसायनादि पदार्थों के मन्त्री पद पर विराजमान होते ही सम्पूर्ण भारतभूभाग में तैलादि रसायनों की कहीं भी कमी नहीं रही।

(48)

त्वदीयां क्रियापद्धतिं तां समीक्ष्य,
विभागे समस्ता जनास्सुप्रसन्नाः।
प्रजापि प्रसन्ना प्रसन्ना धरापि,
समस्तं प्रसन्नं जगद्वीक्ष्यतेस्म॥

आपकी कार्यपद्धति को देखकर समस्त विभागीय जन प्रसन्न रहते थे, प्रजा भी प्रसन्न रहती थी और धरा भी प्रसन्न रहती थी, इतना ही नहीं समस्त जगत् प्रसन्न दिखाई देता था।

(49)

विलयो जगजीवनेन यो,
विहितः स्वस्य दलस्य तत्क्षणम्।
हृदये तव या व्यथाभव-,
न्नहि तां वर्णयितुं कविः क्षमः॥

आपके सहयोगी बाबू जगजीवनराम जी ने जो अपनी पार्टी प्रजातान्त्रिक कांग्रेस का शीघ्र ही जनता पार्टी में विलय किया उससे आपके हृदय में जो पीड़ा हुई उसके वर्णन. करने में कवि भी अक्षम है।

(50)

जनतादलशासनेन या,
विहिता लोकहिताय योजनाः।
अयि! तास्तु समीक्ष्य निष्फला,
अभवत्तस्य मनोऽतिदुःखितम्॥

जनता पार्टी के शासन ने जनता के हित के लिए जो योजनाएं बनाई थीं उनको निष्फल देखकर आपका मन अत्यन्त दुःखित हुआ।

(51)

क्वचिद्धनस्य लुण्ठनं क्वचिज्जनस्य लुण्ठनं,
क्वचिच्चरित्रलुण्ठनं क्वचित् स्त्रियो विलुण्ठनम्।
गृहे वनेऽपि लुण्ठनं समीक्ष्य भारते तदा,
मनोऽस्य शासनादहोऽभवदद्रुतञ्च दुःखितम्॥

जनता पार्टी के शासन काल में देश में कहीं धन की, कहीं जन की, कहीं चरित्र की, कहीं स्त्री की एवं घर और वन में सब जगह लूट-खसोट देखकर इस शासन से आपका मन अत्यन्त दुःखित हो उठा।

(52)

प्रेरितं प्रेरितं भूरि भूरि त्वया,
शासनं लोकरक्षानिमित्तं त्विदम्।
स्मारितं स्मारितं शासनं प्रत्यहं,
याः कृताः घोषणास्तत्र तत्पूर्तये॥

आपने इस शासन को देश रक्षा के लिए बार-बार प्रेरित किया और चुनाव के समय पर जनता के हित के लिए की गई घोषणाओं को पूर्ण करने के लिए भी शासन को निरन्तर याद दिलाया।

(53)

वादबाधापरैः द्रोहयुद्धात्मकैः,
राज्यसत्ताप्रियैः स्वाग्रहैर्दूषितैः।
गर्वभारै भरैः शासकैः तत्क्षणं,
न श्रुतं न श्रुतं तद्वचस्तु प्रियम्॥

घटकवाद की बाधाओं से ग्रसित, पारस्परिक द्रोह से पीड़ित, सत्ता लोभी एवं अपने आग्रह से दूषित अभिमानी नेताओं ने श्री बहुगुणा के कल्याणकारी कथन को नहीं सुना।

(54)

बहुगुणो वदति प्रतिकूलता-,
मिति जनैर्गदितन्तु दलस्थिते।
अयमहो व्यथितो मनसापरं,
न चलितश्चलितस्तु दलात् परम्॥

इतना ही नहीं उनके अनेक दलीय सदस्यों ने यहाँ तक कहा कि बहुगुणा जी प्रतिकूल बातें कर रहे हैं। जिसके कारण यह मन से अत्यन्त खिन्न हुए परन्तु विचलित नहीं हुए और दल से चल पड़े।

(55)

व्याकुलः सोऽत्यजत्तद्दलं तत्क्षणं,
तत्कृपालेशतो भारतीया ततः।
राजनीतिर्गता भूतलेऽस्मिन्तदा,
नूतनत्वं पुन र्नूतनत्वं पुनः॥

दुःखी होकर श्री बहुगुणा जी ने शीघ्र ही जनता दल को त्याग दिया। इसके पश्चात् उनकी कृपा के लेशमात्र से पुनः संसार में एक बार फिर से भारतीय राजनीति में एक नई दिशा आ गई।

(56)

प्रतिदिनं समुपेत्य च ते गृहे,
चरणसिंहनरेण मुहुर्मुहुः।
अनुनयः विनयः विनिवेदितः,
कुरु कृपां मयि नीतिविशारद!॥

तदनन्तर प्रत्येक दिन श्री चरणसिंह ने आपके घर में आकर बार-बार आपसे अनुनय एवं विनय की कि हे नीतिविशारद! मेरे ऊपर कृपा करो।

(57)

चरणसिंहकथाद्रवितो जनः,
परमभावुकतावशतो भवन्।
अविगणय्य निजां नयपद्धतिं,
परहिताय रतो निरतोऽभवत्॥

अत्यन्त भावुकता से वशीभूत होकर श्री चरणसिंह की व्यथा-कथा से द्रवित होकर आपने अपनी राजनीति की परवाह न कर उसकी सहायता की।

(58)

सकलमित्रगणैस्सह संसदि,
त्वयि कृते ननु तस्य समर्थने।
भरतभूमिनये त्वरितन्ततो,
नवदिशातिनवा समुपागता॥

आपके संसद में अपने समस्त मित्रगणों के साथ चरणसिंह जी के समर्थन करने पर भारत की राजनीति में शीघ्र ही अत्यन्त नवीन एक नई दिशा आ गई।

(59)

तव कृपावशतोऽधिगतं ततः,
प्रमुखमन्त्रिपदं किमनेन तत्!।
त्वमपि तत्र धनाधिपतेः पदं,
प्रतिगतो बहिरेव न चेतसा॥

क्या चरणसिंह ने तुम्हारी कृपा से प्रधानमन्त्री का पद प्राप्त नहीं किया? अर्थात् प्राप्त किया। और आप भी उनके मन्त्री मण्डल में बाहरी मन से वित्त मन्त्री के रूप में विराजमान हुए।

(60)

चरणसिंहनयस्य विचित्रतां,
हृदि विचार्य विखिद्य विहाय तत्।
निजदलस्य तदैव सुयोजनं,
बहुविधं न्वकरोतरचनापरम्॥

चरणसिंह जी के नीति परक वैचित्र्य को हृदय में विचार कर खेदपूर्वक उन्होंने वित्त मन्त्री के पद का परित्याग कर आपने प्रजातान्त्रिक कांग्रेस नामक दल का सुन्दर रचनापरक पुनर्गठन किया।

(61)

अयि कृता भवता जनता मता,
निजदलस्य तदा महती सभा।
तव समर्थनमत्र विलोक्य ते,
प्रतिभया भयतामरयो गताः॥

तदनन्तर आपने अपने प्रजातान्त्रिक कांग्रेस दल की एक विशाल जनसमर्थित सभा का आयोजन किया। इस सभा में आपके अभूतपूर्व समर्थन को देखकर तुम्हारी प्रतिभा से शत्रुपक्ष भयभीत हो उठा।

(62)

तस्यां संसदि चैकत्रिंशत्पराण्येतानिसूत्राण्यहो,
लोकानां हितकाम्यया तु नितरां प्रस्तावितानि त्वया।
सर्वैस्तत्र समागतै बुंधवरै लोकप्रियै नेंतृभिः,
हर्षेणैव समर्थितानि सहसा सर्वाणि नीत्या गुणैः॥

उस सभा में आपने देश की समुन्नति की कामना से परम उपयोगी इक्तीस सूत्रीय एक कार्यक्रम प्रस्तावित किया उस सभा में आए हुए लोकप्रिय विद्वान् नेताओं ने सहर्ष एकभाव से उनका अनुमोदन किया।

(63)

शक्त्याः परीक्षणतिथौ विफले प्रयाते,
हा संसदि प्रमुखलोकदले तदीये।
निर्वाचने पुनरहो प्रतिपक्षपक्षैः,
प्रस्तावितं निजमतं तव सन्निधौ तैः॥

संसद में शक्ति परीक्षण के दिन लोकदल के असफल होने पर पुनः निर्वाचन में प्रतिपक्षी दलों ने अपने-अपने समर्थन के लिए आपके सामने अपने विचार प्रस्तुत किए।

(64)

पक्षं मदीयं सबलं कुरु त्वं,
दत्वा स्वकीयन्नु समर्थनं मे।
इत्थं विभिन्ने भणिते दलेऽपि,
ते श्रावितास्तेन दृढात्मभावम्॥

मुझे समर्थन देकर मेरे पक्ष को मजबूत करो इस तरह विभिन्न दलों के निवेदन करने पर भी उसने उनको अपना दृढ़ विचार सुनाया।

(65)

हिताय लोकस्य विनिर्मितानि,
सूत्राणि सर्वाणि मयात्र यानि।
करोति तेषां हि समर्थनं यद्,
दास्यामि तस्मै स्वसमर्थनञ्च॥

देश के हित के लिए मैंने जो इक्तीस सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया है उसका जो दल समर्थन करेगा मैं उसे अपना समर्थन प्रदान करूंगा।

(66)

सूत्राणि संवीक्ष्य निशम्य भावं,
गतेन्दिरा तत्सदनेऽतिशीघ्रम्।
विनम्रभावेन च तत्समक्षं,
वचांसि भद्राण्यथ सा न्यगादीत्॥

श्री बहुगुणा जी के इक्तीस सूत्रीय कार्यक्रम को देखकर और उनके भावों को सुनकर श्रीमती इन्दिरा गांधी शीघ्र उनके घर गईं और उनसे विनम्र भाव इस प्रकार कहा।

(67)

त्वदीयनीतिस्तु मदीयनीतिः,
तुल्ये त्विमे द्वे जनताहिताय।
अतः समागच्छ विधेहि कार्यं,
मया सह त्वं हि जगद्धिताय॥

लोक कल्याण के लिए आपकी एवं मेरी नीति दोनों ही समान हैं। इसलिए आप हमारे दल में सम्मिलित हो जाओ और लोक कल्याण के लिए मेरे साथ सहयोग दो।

(68)

श्रुत्वा सुरम्याणि वचांसि तस्याः,
प्रसन्नचित्तेन च तेन दत्तम्।
तस्यै समस्तं सुसमर्थनं स्वं,
सुकर्मणा शीघ्रतरं तदैव॥

श्रीमती इन्दिरा गांधी के सुन्दर वचनों को सुनकर प्रसन्नचित्त से श्री बहुगुणा जी. ने शीघ्र ही सन् 1971 की तरह सुन्दर कार्यों के द्वारा उन्हें अपना पूर्ण सहयोग दिया।

(69)

सुयोजने येन कृते विशिष्टे,
यया पुरा पूर्णजयः सुलब्धः।
तयाधुनापि स्वदले नियुक्तः,
पदे विशेषे सचिवस्य सोऽयम्॥

पार्टी के सचिव के रूप में सन् 1971 के चुनाव के समय बहुगुणा के सुन्दर संयोजन में जिस इन्दिरा ने अभूतपूर्व विजय प्राप्त की थी उसी ने इस समय भी उसे पार्टी के मुख्य महासचिव के रूप में अपने दल में नियुक्त किया।

(70)

निर्वाचनात्मकमिदं भवता स्वयुद्धं,
किं साम्प्रतं भुवि जितं न विना श्रमेण।
येन त्वदीयगुरुता च परार्थवृत्तिः,
स्वाभाविकीह सुतरां स्वयमेव भाति॥

निर्वाचन परक अपने चुनावी युद्ध में आपने बिना श्रम के जो अभूतपूर्व विजय प्राप्त की उससे आपकी गुरुता एवं सेवा भावना की स्वाभाविकता स्वत एव प्रकट होती है।

(71)

सकलनीति-परायणपावनो,
बहुगुणोऽतितरां स हि राजताम्।
विमलभारतभारत-संसदि,
पुनरहो पुनरेव पुनः पुनः॥

सम्पूर्ण नीति में परायण होते हुए भी पवित्र श्री बहुगुणा जी निर्मल एवं प्रभा भूषित भारत की संसद में अतिशयेन बार-बार विराजमान हों।

(72)

गभीरत्वं स्थैर्यञ्चरितविमलत्वञ्चपटुता,
महौदार्यं धैर्यं कृतिकुशलतां निष्कपटताम्।
विचारोत्कृष्टत्वं प्रकृतिविधिना प्राप्य निखिलं,
विधेये स्वीये वै सततनिरतोऽयं विजयते॥

जो बहुगुणा प्रकृति से मानो गम्भीरता, स्थिरता, निर्मल चरित्र, पटुता उदारता, धैर्य, कार्यनिपुणता, निश्छलता एवं विचारोत्कृष्टता आदि श्रेष्ठगुणों को प्राप्त करके अपने कार्यक्षेत्र में अवतरित हुआ वह निरन्तर विजयोत्कर्ष को प्राप्त करे।

(73)

हिमस्त्वं हेमस्त्वं द्रवसि भुवने त्वं प्रतिदिनं,
परं सूर्यातापे कथमपि नहि त्वं द्रवसि भोः।
समर्थाः कर्तुं त्वां शशधरकराः पश्य तरलं,
चरित्रं चित्रन्ते बहुगुण! विभाति प्रियकरम्॥

प्रत्येक दिन द्रवित होने वाले तुम हिम एवं हेम हो किन्तु सूर्य की गर्मी से किसी तरह भी आप द्रवित नहीं होते। लेकिन चन्द्रमा की शीत किरणें आपको द्रवित करने में समर्थ होती हैं ऐसे विचित्र चरित्र वाले बहुगुणा जी संसार में शोभायमान हो रहे हैं।

(74)

नगानां स्वामी त्वं हिमनिलयवासस्त्वमपि भोः?,
गुणानां सिन्धुस्त्वं परमकठिनोऽप्यौषधिनिधिः।
परैरुग्रं तप्तो व्यथितहृदयस्त्वं न नमसि,
हिमालस्त्वं धन्यो बहुगुण! जगत्यां विजयसे॥

गुणशाली आप पर्वतों के स्वामी, बर्फ के निवास स्थान, गुणों के सिन्धु, अत्यन्त कठोर एवं समस्त वनस्पतियों के निधि और शत्रुओं द्वारा व्यथित हृदय होने पर भी न झुकने वाले हिमालय हो, अतः आप धन्य हो और संसार में विजयोत्कर्ष को प्राप्त करें।

(75)

विभिन्नैः पङ्कैर्वा समधिकमलैर्वापि मलिना,
नदास्संयान्त्येते निजनिखिलसीमाविरहिताः।
पवित्रं चित्रन्ते मलिनमपि कर्तुं बत रताः,
करोषि त्वं पूतान् निजवहुगुणैस्तान्भुवि सदा॥

हे हेमवती! अनेक प्रकार के मलों तथा पङ्कों से युक्त नद-नदियाँ अपनी सारी मर्यादाएं तोड़कर तुम्हारे पवित्र स्वरूप को मलिन करने में लगी रहती हैं किन्तु आप उन्हें अपने सुन्दर गुणों के द्वारा पवित्र कर देते हो।

(76)

भीष्मो भीमो भयवितरणो द्वेषिणां कालरूपः,
धीरो वीरो निजपणपरो नीतिशास्त्रे प्रवीणः।
जह्नोः कन्यासलिलविमलः पावनस्सर्वपूज्यः,
भूयो भूयो जयतु नितरां नन्दनो हेमवत्याः॥

अहितकारी लोगों के लिए भयप्रद, शरणागतों के लिए अभयप्रद, द्वेष करने वालों के लिए कालरूप, धीर, वीर, प्रतिज्ञापालक, नीति-शास्त्र में कुशल एवं जाह्नवी के जल के समान पवित्र तथा सन्मान्य भीष्म रूप हेमवतीनन्दन बहुगुणा जी विजय को प्राप्त हों।

(77)

गाम्भीर्ये यो विलसति सदा तोयधेस्तुल्यरूपः,
स्थैर्ये चायं नगपतिसमो राजते राष्ट्रमान्यः।
कर्तव्ये यः परमकुशलस्तेजसां पुञ्जरूपः,
धन्यो धन्यो बहुगुणगणैः पूज्यते यो गुणज्ञः॥

गम्भीरता में समुद्र के समान, स्थिरता में हिमालय-सदृश, राष्ट्र, मान्य, परोपकारपरायण, तेजस्वी एवं कर्तव्यनिष्ठ, बहुगुणशाली बहुगुणा जी धन्य एवं अभिनन्दनीय हैं।

(78)

नित्यं धैर्यवती सदाशयवती विद्यावती सद्व्रती,
सत्यासत्यविचारचिन्तनवती कर्तव्यनिष्ठावती।
शक्तौ क्षान्तिमती महानयवती कालक्रमज्ञा सती,
धर्मे भाववती तथा गुणवती देदीप्यतान्ते मतिः॥

हे बहुगुणा! धैर्य सम्पन्न, सदाश्रयदात्री, पवित्र भावयुक्त, विद्यानिरत सत्यासत्य विचार में तत्पर, कर्तव्य निष्ठा से परिपूर्ण, शक्ति होने पर भी क्षमा करने वाली नीति तथा कालक्रम को जानने वाली धर्म में सद्भाव वाली आपकी मति अत्यधिक सुशोभित हो।

(79)

नीत्यां लब्धगतिस्तथैव सुमतिर्बोधानुबोधं प्रति,
साध्ये सिद्धगतिर्नचादृतमतिर्लोके विरोधं प्रति।
दाने शीघ्रगतिस्तथाप्यनुमति मित्रानुरोधं प्रति,
मोदे सौम्यगतिस्सदा बहुगुणः सम्भ्राजतां सन्मतिः॥

राजनीति में गूढ़गति वाली, ज्ञान-चिन्तन में तत्पर, कार्यसिद्धि में प्रवीण, परस्पर विरोध में उदासीन, दान देने में शीघ्रगति वाली, मित्रों के अनुरोध का सम्मान करने वाली आपकी सन्मति संसार में शोभायमान होती रहे।

(८०)

त्यागी धर्मधनः सदाश्रययुतो विद्वत्प्रियो नीतिमान्,
शौर्यौदार्यविवेकसत्यनिलयो लोकैनुतः कीर्तिमान्।
श्रद्धाप्रीतगुरुस्ततो बहुगुणस्वाध्यायसम्बर्धने,
श्रीमान् हेमवती सुनन्दनबुधः संराजतां भूतले॥

त्यागी, धर्मपरायण, पवित्र आशय वाले विद्वत्प्रेमी नीतिज्ञ, शूरता, वीरता, विवेक, उदारता एवं सत्य के आवास, लोक प्रशंसित, कीर्तिमान्य और स्वाध्यायादि गुणों के द्वारा गुरु को प्रसन्न करने वाले श्री हेमवतीनन्दन बहुगुणा जी संसार में शोभायमान हों।

(81)

विद्याबुद्धिविवेकशीलचतुरं लोकार्थचिन्तापरं,
देशोत्थानपरायणं परतरं वागर्थतत्वान्वितम्।
नीतेरम्बुधिगाहने पटुतरं ज्ञानाम्बुपाने रतं,
स्नेहेन प्रणमामि सादरमहं मान्यं प्रियं श्रीपतिम्॥

विद्या-बुद्धि-विवेक एवं शील से सम्पन्न, लोकहित में तत्पर देशोन्नति में निरत, नीति सागर के अवगाहन में पटु, शब्दार्थ तत्व के ज्ञाता, ज्ञान-जल-पान-प्रेमी कमलापति श्री हेमवती जी को मैं सादर प्रणाम करता हूँ।

(82)

कार्ये यस्य गति र्ह्यतीवगहना भव्या सदान्वेषिणी,
नीतौ यस्य दिशा नवा च जगतस्सन्मार्गसंदर्शिनी।
देशं प्रत्यनुरागभावगहनं स्वान्तञ्च सेवारतं,
तं भूमेर्हि विभूषणं बहुगुणं वन्दे सदा श्रद्धया॥

कर्त्तव्य-कार्य के विषय में अन्वेषण परक गहरी पैंठ वाले, नीति निर्धारण में संसार को नवीन दिशा देने वाले, देश के प्रति परम अनुराग वाले, देश-सेवा-परायण, वसुधा के अलंकाररूप श्री बहुगुणा की मैं श्रद्धा पूर्वक वन्दना करता हूँ।

(83)

स्वकार्य-कौशलञ्चैव,
व्यक्तित्वं स्वीकरोति यः।
सोऽयं कुर्याद्धितं नित्यं,
लोकस्य भुवने प्रियम्॥

कार्य कुशलता को ही जो व्यक्तित्व विकास का प्रतीक मानता है वह बहुगुणा सम्पूर्ण संसारी जनों का हित साधन करे।

(84)

करोति भ्रूभङ्गैः कुटिलकलिताकाल इव या,
मनोभ्यो दुष्टानामशनिसदृशाघाततपनम्।
अनाथेभ्यः सा वै विकलहृदयेभ्योऽपि नितरां,
दयार्द्रादृष्टिस्ते शिशिरमुपचारं रचयति॥

आपकी कठोरता परक दृष्टि भ्रूभङ्ग मात्र से ही दुष्टों के मनों के लिए वज्र के समान भयंकर आघात एवं ताप को प्रदान करने वाली है। वही तुम्हारी दयार्द्र दृष्टि दुःखी हृदयों के लिए और अनाथों के लिए शिशिर के समान शीतल होती है।

(85)

विभाति श्रीमन्ते वचसि मृदुता कार्यपटुता,
विधौ वैचित्र्यन्ते हृदि सरसता चापि समता।
मुखाकृत्यां सौम्यं सुचरितविधौ तत्परमतिः,
ह्यनाथानां नाथस्त्वमयि विजयस्वाद्भुतगुणः॥

हे श्रीमन्! आपकी वाणी में मधुरता, कार्यों में चतुरता, विधि में विचित्रता, हृदय में सरसता और समता, मुखाकृति में सौम्यता तथा सुन्दर कार्यों में तत्परमति दृष्टिगोचर होती है ऐसे अद्‌भुत गुण वाले आप विजय को प्राप्त करें।

(86)

विविधनीतिविशारदसौख्यदं,
गुणिवरं सरलं जनताजयम्।
भविक-भारतभव्य-विभावनं,
बहुगुणं प्रति मे प्रणताञ्जलिः॥

नाना प्रकार की नीतियों में विशारद, गुणवानों में श्रेष्ठ, सरल हृदय, जनता के हृदयों को जीतने वाले भव्य भारत को अतिशय सुन्दर बनाने वाले श्री बहुगुणा जी को मैं प्रणताञ्जलि अर्पण करता हूँ।

(87)

यतिवरस्य विभुत्वविभावकः,
कविजनस्य कवित्वविकासकः।
गुणिगणाय सदा सुखदायकः,
बहुगुणो जयतात्समतात्मकः॥

योगीजनों के ईश्वरत्व को विकसित करने वाले, कवि जनों के कवित्व को प्रकाशित करने वाले, गुणवानों को सुख देने वाले, बहुगुणशाली श्री बहुगुणा जी विजय को प्राप्त करें।

(88)

धृतिमतिः सुमतिर्भवतां प्रभो!,
विभवसारसुखैकनिधिर्मता ।
रसवतीशवती शुभभावना,
गुणवती भवतीति जयेत्सदा॥

धैर्यशाली एवं सम्पूर्ण ऐश्वर्य के सुख की एकमात्र निधि आपकी सद्बुद्धि एवं रसात्मिका ईश्वरपरा शुभभावना सद्गुणों से परिपूर्ण होती हुई विजय को प्राप्त करें।

(89)

त्वरितबुद्धिमयं हितचिन्तकं,
सुकृतकर्मकरं जनमोहकम्।
कठिनकार्यपरं कमलापतिं,
बहुगुणाभिधहेमवतीं नताः॥

प्रत्युत्पन्नमति, हितचिन्तक, जनसमादृत, दुष्कर कार्य में निरत कमलापति श्री बहुगुणा जी का हम अभिवादन करते हैं।

(90)

स्मितसुहासकरं सुजनप्रियं,
विभुविलासपरं रिपुनाशकम्।
विमलभावयुतं नयकोविदं,
बहुगुणं सततं प्रणमाम्यहम्॥

मन्द एवं मधुर हास्य वाले सज्जनप्रिय, प्रभु के प्रति विलासपरक, अरिनाशक, निर्मलभावों से युक्त, नीति निपुण श्री बहुगुणा जी को मैं प्रणाम करता हूँ।

(91)

प्रखरतामयं सौम्यतायुतं,
जनसदाश्रयं पर्वतप्रियम्।
मधुरभाषिणं ज्ञानगर्वितं,
बहुगुणञ्च तं नौमि सादरम्॥

प्रखरता युक्त, सौम्यभाव परायण, जनता के आश्रय, मधुरभाषी, ज्ञान के आलोक से प्रकाशित, पर्वतों के प्रिय, श्री बहुगुणा जी को मैं सादर प्रणाम करता हूँ।

(92)

निजसुजन्मना येन पर्वताः,
गुरुतरा इमे गौरवीकृताः।
गुणगणान्वितो लोकपूजितो,
जयतु सोऽधुना विश्वमण्डले॥

जिसने अपने जन्म के द्वारा गुरुतर पर्वतों को गौरवान्वित किया है ऐसे गुणों के द्वारा लोकपूजित बहुगुणा जी संसार में विजय को प्रास करें।

(93)

हृदयमण्डले यस्य राजते,
विमलसंस्कृति र्भारतस्य सा।
वचसि राजते सत्यवादिता,
जयतु सर्वदा शर्मदो हि सः॥

जिनके हृदय में भारत की विमल संस्कृति विराजमान है और वाणी में सत्यवादिता का निवास है वे सुखकारी बहुगुणा जी धन्य हैं।

(94)

गुणिगणसमवाये गीयते यस्य गीतं,
सुचरितसमुदारं विद्यते यस्य वृत्तम्।
सरलमनुजमान्यं वर्तते यच्चरित्रं,
जयतु जयतु लोके बहुगुणस्सोऽत्र नित्यम्॥

गुणिजनों के समाज में कीर्तनीय, सच्चरित्र से सुशोभित, सर्वजन मान्य जिनका चरित्र है ऐसे बहुगुणा जी निरन्तर विजय प्राप्त करें।

(95)

यस्य क्रिया निखिलकार्यपरा मनोज्ञा,
दैन्यं हरन्ति सुजनस्य सदैव लोके।
सस्नेहभावभरितोऽतिदयार्द्ररूपः,
संराजतां बहुगुणो गुणरत्नराशिः॥

जिनके सम्पूर्ण क्रियाकलाप संसार में सज्जनों की दीनता को दूर करते हैं ऐसे स्नेहभाव से परिपूर्ण अत्यन्त दयालु गुण रत्न राशि श्री बहुगुणा जी संसार में देदीप्यमान हों।

(96)

वाक्चातुरीं यस्य नितान्तभद्रां,
सुयुक्तियोगेन मनोज्ञरूपाम्।
विरोधिवक्त्राणि निशम्य क्षिप्रं,
मुद्राकिंतानीव भवन्ति नूनम्॥

सुन्दर युक्तिपूर्ण तर्कों के द्वारा सुन्दरता पूर्ण एवं अत्यन्त कल्याण-कारी आपकी वक्तृत्व शक्ति को सुनकर विरोधियों के वचन शीघ्र ही सभाओं में मुद्रांकित के समान हो जाते हैं।

(97)

न जातिभेदो न च वर्ग-भेदो,
न धर्म-भेदो न च वर्ण-भेदः।
प्रदेशभेदोऽपि न यस्य चित्ते,
स सच्चिरित्रो जयताज्जगत्याम्॥

जिसके हृदय में जातिभेद, वर्गभेद एवं प्रादेशिक भेद आदि कोई संकुचित भावना नहीं है। ऐसे भारतीय बहुगुणा जी निरन्तर विजयोत्कर्ष प्राप्त करें।

(98)

स्वधृत्या क्षान्त्या वा कठिनकृतिदक्षैरपि तथा,
सुदाक्ष्योत्साहादिप्रबलगुणगाम्भीर्यनिवहैः।
महोच्चं येनाप्तं पदमभिनवं शासनविधौ,
नताः स्मः श्रेष्ठं तं बहुगुणपरं श्री बहुगुणम्॥

अपने धैर्य एवं क्षमाशीलता से, दक्षता उत्साहादि प्रबल गुणों के प्रभाव से जिन्होंने भारत शासन में अत्यन्त उच्चपद प्राप्त किये ऐसे अपरमित गुणों की राशि श्री बहुगुणा जी के प्रति हम विनत हैं।

(99)

अजस्त्रं वाञ्छेयं सकलमनुजानां हितकरी,
प्रभोःकेदारात्वै भुवननिर्मातुश्च निपुणात्।
समेषां मान्यो यो बहुगुणयुतश्श्रीबहुगुणः,
सदा सोऽयं लोके जयतु च जगत्यां प्रतिदिनम्॥

सभी लोगों की अखिल ब्रह्मण्ड के सृजनहार केदारेश्वर से यह प्रार्थना है कि सकल जन मान्य, अनेक गुणों से विभूषित श्री बहुगुणा जी निरन्तर विजयोत्कर्ष को प्राप्त करते रहें।

(100)

परहिते रतं स्वार्थनिःस्पृहं,
सुकृतिभिस्सदा लोकपूजितम्।
सरलतामयं सर्वहर्षदं,
सुखमयञ्च ते जीवनं भवेत्॥

परहित में तत्पर, स्वार्थशून्य अपने श्रेष्ठकार्यों के द्वारा संसार में शोभायमान, सरल स्वभाव से युक्त एवं सबको आनन्द देने वाला आपका जीवन सुखमय हो।

(101)

इयमेव मदीययाचना,
जगदीशात्सततं मनोहरा।
मधुरं प्रियजीवनं व्रजेत्,
शतवर्षाधिकतां सुखेन ते॥

जगदीश्वर से सदा मेरी यही कामना है कि सौ वर्षों से अधिकता को प्राप्त होता हुआ आपका मधुर जीवन सुखपूर्वक व्यतीत हो।

(102)

सुगन्धपूर्णैः किल वाक्यपुष्पैः,
मनोभिरामा मधुरा सुवर्णा।
सुवृत्तरूपा प्रियकाव्यमाला,
सुगुम्फितैषा कविनाधुना वै॥

कवि ने सुगन्धित वाक्य रूपी पुष्पों के द्वारा मनोभिराम, मधुर, सुवर्ण, सुवृत्तरूप यह काव्यमाला गूंथी है।

(103)

हृद्यैः पद्यैर्विरचितमिदं सूत्ररूपं त्वदीयं,
श्रद्धास्नेहप्रमुदितहृदा सेमवालेन येन।
श्लोकैरेतैर्ग्रथितममलञ्चार्प्यते हाररूपं,
काव्यं तुभ्यं ललित-ललितं सादरं जन्मवारे॥

श्रद्धा एवं स्नेह युक्त मन से जिस सेमवाल नामक कवि ने सुन्दर पद्यों के द्वारा सूत्ररूप तुम्हारे व्यक्तित्व से सम्बन्धित श्लोक परक अत्यन्त निर्मल एवं मनोरम हाररूपी काव्य की रचना की, वही कवि श्रीकृष्ण सेमवाल आपके 62 वें जन्मदिन पर उस काव्य को आपके करकमलों में सादर समर्पित करता है।

परिशिष्टम्

1. बालः
2. बालचर्या
3. मदीया कामना
4. क्षेत्रम्
5. गङ्गा
6. कविः
7. मतिः
8. भानुः
9. धेनुः
10. देवी
11. पिता
12. माता
13. प्रश्नोत्तराणि
14. विद्यालय-चर्या
15. निर्देशाः
16. ख्यातसंख्या

बालः

बालोऽयं स्वमुखे दधाति चरणं
बालं भजे केशवम्,
बालेनैव हता विषस्तनधरा
बालाय तस्मै नमः।
बालाद्भीतिमुपेत्य मातृसहजो
बालस्य घाते रतो
बाले विष्णुविभूतिबोधरहितः
कंसो हतो बाल रे॥

बालचर्या

बालः खादति गच्छति प्रतिदिनं
तौ क्रीडतो धावतः,
ते नृत्यन्ति हसन्ति चापि मुदिता-
स्त्वं कुत्र भो गच्छसि।
किं नित्यं कुरुथो युवां नमथ कं
प्रातः प्रिये मन्दिरे,
गेहं यामि नतिं प्रियं गुरुजनं
कुर्वो नमामो विभुम्॥

मदीया कामना

ज्ञानं यच्छतु शिक्षकश्च पितरौ
मे यच्छतां सन्मतिम्,
सन्मार्गं मुनयो दिशन्तु सततं
त्वं रक्ष मां शङ्कर।
चन्द्रार्कौ दिशतं प्रभां किल युवां
यूयं सुखं यच्छत,
गच्छानि प्रभुपादयोस्तु शरणं
गच्छाव गच्छाम किम्॥

क्षेत्रम्

क्षेत्रं तत्कृषकस्य भाति विपुलं
क्षेत्रं च सः कर्षति,
क्षेत्रेणैव सदा हि जीवति जनः
क्षेत्राय कं यच्छति।
क्षेत्राद् याति गृहं दिनान्तसमये
क्षेत्रस्य कार्ये रतः,
क्षेत्रे सोऽपि यदा कदा निवसति
क्षेत्र त्वमेवाश्रयः॥

गङ्गा

गङ्गा ब्रह्मकमण्डलुं प्रतिगता
विष्णोः पदान्निर्गता,
गङ्गां स्वस्य जटान्तिके प्रभुरयं
स्नेहेन धत्ते शिवः।
भस्मत्वं किल ये गताः सगरजा-
स्ते तारिता गङ्गया,
गङ्गायै च भगीरथो भुवि ददौ
दीपं तदा श्रद्धया॥
गङ्गायास्तु विनिर्गता बहुनदाः
सिञ्चन्ति भूमिं ततः,
गङ्गायाः सलिलं पिवन्ति सततं,
श्रद्धान्विता मानवाः।
गङ्गायां जलजन्तवो बहुविधाः
कुर्वन्ति वासं मुदा,
गङ्गे त्वां प्रणमामि सादरमहं
लोकोपकारे रताम्॥

कविः

लोके भाति कविः सदा कवितया
वन्दे कविं सादरं,
सत्काव्यं कविना विभाति कवये
यच्छन्ति मानं जनाः।
सम्प्राप्नोति जनः कवेः शुभमतिं
काव्यं कवेर्जीवनम्,
विश्वं चारु निलीयते किल कवौ,
भव्या कथा ते कवे॥

मतिः

लोके भाति मतिः प्रिया सुखकरी
धीरो मतिं वन्दते,
मत्या कार्यमतीव सौख्यजनकं
मत्यै तपस्तप्यते।
मत्या एव सुखस्य प्राप्तिरखिला
मत्या बलं शाश्वतम्,
मत्यामेव विराजते गुणखनिः
भूयो नमस्ते मते॥

भानुः

भानुर्भाति नभःस्थले प्रतिदिनं
भानुं नमन्ति प्रजाः,
ध्वान्तं नश्यति भानुना ननु निशा
नो रोचते भानवे।
भानोर्विभ्यति तस्कराः कविजनाः
गायन्ति भानोर्गुणान्,
किं भानौ सति दीपकेन भगवन्
भानो नतिं स्वीकुरु॥

धेनुः

धेनुर्याति वनं सदावति वने
धेनुं च गोपालकः,
धेन्वा भाति गृहं ददाति सततं
घासं जनो धेनवे।
धेनोः क्षीरमवाप्यते शिशुरयं
धेनोर्वृषः कथ्यते,
धेनौ यज्ञ-धनं घृतं सुनिहितं
धन्यासि धेनो भुवि॥

देवी

देवी दुःखविनाशिनी विजयते
देवीं भजामो वयम्,
देव्या रक्षितमस्ति विश्वमखिलं
देव्यै भवान्यै नमः।
देव्याः पापरतो बिभेति मनुजो
देव्याश्चरित्रं प्रियम्,
देव्यां याति लयं समस्तभुवनं
त्वं पाहि हे देवि माम्॥

पिता

पूज्योऽस्ति प्रभुवत् पिता स्वपितरं
पुत्रो गुरुं मन्यते,
पित्रा चापि सुपालितः सुतनयः
पित्रे सुखं यच्छति।
पुत्रः प्राप्य पितुः प्रसादमधिकं
कुर्यात्पितुः पूजनम्,
श्रद्धा स्यात् सुहृदामपि स्वपितरि
प्रातः पितः ते नमः॥

माता

माता मे प्रथमो गुरुः सुमनसा
वन्दे सदा मातरम्,
मात्रा लालितमेव पुत्रहृदयं
मात्रे मुदं यच्छति।
मातुः प्राप्य शुभाशिषं प्रियसुतो
मातुः श्रियं रक्षति,
श्रद्धां मातरि चादधाति तनयो
मातः प्रसन्ना भव॥

प्रश्नोत्तराणि

कोऽगच्छत् किमगच्छतामपि च तौ
हृतेऽप्यगच्छन् गृहम्,
किन्त्वञ्चाप्यचलो युवामचलतं
यूयं कदागच्छत।
अक्रीडं किमु तत्र वै कथमहं
नावामगच्छाव किम्,
चाक्रीडाम वयन्त्विदं सुकथनं
यच्छेच्छिशूनां मुदम्॥

विद्यालय-चर्या

सा क्रीडिष्यति यास्यतश्च वटुकौ
यास्यन्ति ता बालिकाः,
श्लोकानां श्रवणं करिष्यसि वटो
लेखिष्यथो वै युवाम्।
यूयं तत्र गमिष्यथ व्रजवनं
यास्याम्यहं चापि भोः,
यास्यावः प्रथमं गृहं सपदि
यास्यामो गुरोराज्ञया॥

निर्देशाः

यावन्नागपतिर्व्रजेदुपवनं
स्यातां च तौ स्युश्च ते,
त्वं गच्छेः प्रतिवासरं सुरगृहं
स्यातं युवां शोभितौ।
यच्छेत प्रतिपर्व यूयमधिकं
दानं पिबेयं पयस्-
तिष्ठेव स्वगृहे तु सायमधुना
गच्छेम विद्यालयम्॥

ख्यातसंख्या

एकोऽयं प्रणवश्च द्वौ मम करौ
लोकास्त्रयो विश्रुताः,
चत्वारः प्रहराश्च पञ्चविशिखाः
ख्यातास्तथा षड्रसाः।
सप्ताश्वा दिवसेश्वरस्य वसव-
श्चाष्टौ सदा वन्दिताः,
पूज्याः सन्ति नवग्रहाः दशदिशस्
तद् दिग्गजा मन्त्रिता॥

जयतात् प्रिय भारतवर्षधरा

प्रणमन्ति हृदा प्रणमन्ति मुदा, ऋषयः कवयो मनुयश्च सदा।
जयतात् भुवि सा वरदा सुखदा, प्रियभारतभूः धनदा शुभदा॥ 1॥

हिमशैलशिखाः धवलाः सबलाः, शरदभ्रनिभाः विभुभव्यविभाः।
प्रतिभान्ति विभान्ति यदार्यभुवः, जयताद् भुवि सैव धरा मधुरा॥ 2॥

विविधोषधिशुभ्रजलैरमलैः, गिरिगह्वरगेहदलैः निखिलैः।
मणिमण्डलमण्डितभालमयः, परिभाति च यत्र शिवानिलयः॥3॥

अयि यत्र वहन्त्यनिशं सरसाः, धमनीसदृशाः सरितस्सकलाः।
गतिगीतिविधानपरा प्रवरा, जयताद् भुवि सैव धरा मधुरा॥4॥

सकलाः प्रदिशश्च दिशोऽपि समाः, भुजवल्लभतां भरतार्यभुवः।
प्रतिभान्ति विभान्ति च यत्र सदा, जयताद् भुवि सैव धरा मधुरा॥5॥

मनसा वचसापि च कर्मधिया, सलिलाधिपतिः भुवि यस्य सदा।
स्वरगुञ्जितरम्यरवैरधरैः, चरणार्चनतत्परतां भजते॥6॥

निगमागमसंवलितैः विमलैः, शुभसंस्कृतिसंकलितैः प्रबलैः।
भुवि भाति विभाति च यस्य विभा, जयतात् प्रिय भारतवर्षप्रभा॥7॥

गुरुगौरवगर्वितभावभरा, रमणीयतरा रमणीयतरा।
परिवारपरा परिवादहरा, जयतात् प्रिय भारतवर्षधरा॥8॥

सुभाषचन्द्रबोस ते नताः वयं हृदा मुदा

(1)

परैः प्रताडितं मुहुः परैः सदैव वञ्चितम्,
परैः विलुण्ठितं मुहुः परैः विखण्डितं तथा।
विलोक्य भारतञ्च यः परां परैति कष्टताम्,
सुभाषचन्द्रबोस ते नताः वयं हृदा मुदा॥

(2)

कृतोत्कलीयभूरियं स्वजन्मना प्रिया सदा,
कृतार्थतामनेन किं न हर्षवर्षकर्मणा।
नतिं तनोति सादरं विनम्रभावभावितः,
कृतज्ञतां प्रदर्शयन् समस्तमानवोऽधुना॥

(3)

स्वतन्त्रतन्त्रमन्त्रणा विभिन्नकष्टयन्त्रणा-
मवाप्य दुष्टशासकैरनारतञ्च दारुणम्।
न मुञ्चिता न विस्मृता तथापि येन भक्तितः,
तमेव नौमि सादरं सुभाषचन्द्रमद्भुतम्॥

(4)

त्वदीयबुद्धिवैभवं त्वदीयकार्यकौशलं,
त्वदीययुद्धचातुरीं त्वदीयवाक्यवैखरीम्।
विलोक्यशत्रवोऽप्यहो भयाकुलाः पुरा समे,
सुभाषचन्द्रबोस हे तथेदृशाय ते नमः॥

(5)

प्रचण्डदण्डखण्डकः विनम्रनम्रमन्त्रदः,
कुलकलङ्कभञ्जकः विचारचारुचिन्तकः।
प्रभाविभाप्रभावितः स्वदेशसेवकश्च यः
सुभाषचन्द्रबोस हे तथेदृशाय ते नमः॥

(6)

अये स्वदेशवासिनः स्वतन्त्रतासमर्थकाः,
समेऽत्र यूयमद्भुतं प्रदेहि मह्यमुत्तमम्।
पवित्रशोणितं निजं त्वदर्थमत्र दीयते
स्वतन्त्रता मयेत्यहो सुघोषकाय ते नमः॥

स्वतन्त्रताग्निशेखरं नमामि चन्द्रशेखरम्

विदेशिभिर्नियन्त्रितां कुशासनेन पीडिताम्,
महाविपत्तिमञ्जितां विपक्षपक्षभक्षिताम्।
धरामिमां समीक्ष्य यः परां पैरैति कष्टताम्,
तमेव शत्रुनाशकं नमामि चन्द्रशेखरम्॥1॥

सुवर्णभूमिविश्रुतं गुणैकसिन्धुसंयुतम्,
विभिन्नभावभावितं समृद्धिवृद्धिवर्धितम्।
अनारतं परान्वितं निरीक्ष्य भव्यभारतम्,
बभूव कोपसंभृतः तमेव नौमि शेखरम्॥2॥

प्रबुद्धबुद्धवर्धितं महर्षिबोधबोधितम्,
गुणप्रकर्षभूषितं परार्थपुण्यपूजितम्।
पवित्रभारतं त्विमं विलोक्य कष्टकर्षितम्,
बभूव कोपसंभृतस्तमेव नौमि शेखरम्॥3॥

विहाय गेहमद्भुतं विहाय बोधमन्दिरम्,
विहाय लोभजालकं विहाय सौख्यसम्पदम्।
विहाय शान्तिपद्धतिं विहाय मृत्युजं भयम्,
स्वतन्त्रतार्थसंरतं नमामि चन्द्रशेखरम्॥4॥

युवव्रजं विभाचयं विधाय शक्तिञ्चयम्,
विपक्षनाशनिश्चयं विधाय भावदुर्जयम्।
विधाय धान्यसञ्चयं विधाय कोषलुण्ठनम्,
स्वतन्त्रताग्निशेखरं तमेव नौमि शेखरम्॥5॥

स्वदेशभक्तिभावना पवित्रकार्यसाधना,
परोन्मना यशोधना कुशासनेन दुर्मना।
स्वतन्त्रतैकवासना गुणोत्तमा मनःस्विनी
भवेत् त्वदीयभावना सदैवमार्गदर्शिनी॥6॥

कविरत्न श्रीकृष्ण सेमवालेन विरजितं
श्रीकृष्ण काव्यामृतस्य परिशिष्टं सम्पूर्णम्।

सुभाषचन्द्रबोस ते नताः वयं हृदा मुदा

(1)

पैरे प्रताडितं मुहुः परैः सदैव वजिञ्चतम्,
पैरः विलुण्ठितं मुहुः परैः विखण्डितं तथा।
विलोक्य भारतश्च यः परां परैति कष्टताम्,
सुभाषचन्द्रबोस ते नताः वयं हृदा मुदा॥

(2)

कृतोत्कलीयभूरियं स्वजन्मना प्रिया सदा,
कृतार्थतामनेन किं न हर्षवर्षकर्मणा।
नति तनोति सादरं विनम्रभावभावितः,
कृतज्ञतां प्रदर्शयन् समस्तमानवोऽधुना॥

(3)

स्वतन्त्रतन्त्रमन्त्रणा विभिन्नकष्टयन्त्रणा-
मवाप्य दुष्टशासनकैरनारतञ्च दारुणम्।
न मुश्चिता न विस्मृता तथापि येन भक्तितः,
तमेव नौमि सादरं सुभाषचन्द्रमद्भुतम्॥

(4)

त्वदीयबुद्धिवैभवं त्वदीयकार्यकौशलं,
त्वदीयबुद्धचातुरीं त्वदीयवाक्यवैखरीम्।
विलोक्यशत्रवोऽप्यहो भयाकुलाः पुरा समे,
सुभाषचन्द्रबोस हे तथेदृशाय ते नमः॥

(5)

प्रचण्डदण्डखण्डकः विनम्रनम्रमन्त्रदः,
कुल कलङ्कभञ्जकः विचारचारुचिन्तकः।
प्रभाविभाप्रभावितः स्वदेशसेवकश्च यः
सुभाषचन्द्रबोस हे तथेदृशाय ते नमः॥

(6)

अये स्वदेशवासिनः स्वतन्त्रतासमर्थकाः,
समेऽत्र यूयमद्भुतं प्रदेहि मह्यतुत्तमम्।
पवित्रशोणितं निजं त्वदर्थमत्र दीयते
स्वतन्त्रता मयेत्यहो सुघोशकाय ते नमः॥

Bhawan's Sri Sankaracharya Sanskrit Mahavidyalaya * Bharatiya Vidya
495

M.S.P. Sharma
Asraya
B-50 Sector 23
NOIDA (U.P)
201301

कवि परिचय

नाम : कविरत्न डा॰ श्रीकृष्ण सेमवाल

जन्मस्थान : केदारनाथ समीपस्थ ग्राम ह्यूण (यमुनापुर) रूद्रप्रयाग, उत्तरांचल

पितृनाम : श्री नाथोराम सेमवाल, मातृनाम – श्रीमती दीपा सेमवाल

सम्मानित उपाधियाँ : अखिल भारतीय श्री पण्डित परिषद् वाराणसी से **"कविरत्नम्"** की सम्मानित उपाधि, संस्कृत–प्रचार–मण्डल दिल्ली से **"संस्कृत सेनापति"** की सम्मानित उपाधि, दिल्ली शिक्षा निदेशालय के राज्य शिक्षा संस्थान से **"सम्मानित शिक्षक"**, वाङ्मय विमर्श दिल्ली से **"देववाणी प्रचारक सुश्रुषा सम्मान"**, देववाणी परिषद् दिल्ली से **"संस्कृत–लोकसंग्रहसेनापति"**, संस्कृत सेवक संघ, स्वतन्त्र पत्रकार संघ श्रीवाणी कल्याण दातव्यन्यास द्वारा सम्मानित तथा गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार द्वारा **"विद्यावाचस्पति"** की सम्मानोपाधि एवं तिरुपतिस्थ राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ (मानित विश्वविद्यालय) से **"डी॰लिट्॰"** की उपाधि तथा सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय से **"प्रतिष्ठित विद्वान्"** के रूप में सम्मानित। इसके अतिरिक्त वर्तमान में अखिल भारतीय संस्कृत साहित्य सम्मेलन, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान भारत सरकार, उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी आदि अनेक संस्थाओं की प्रबन्ध समिति के सदस्य तथा अनेक विश्वविद्यालयों की विद्यापरिषद् एवं शोध समिति के सदस्य।

संस्कृत मञ्जूषा, संस्कृत रत्नाकरः, संस्कृत प्रचारकम् आदि पत्र पत्रिकाओं का अवैतनिक सम्पादन तथा वर्तमान में **"संस्कृत मञ्जरी"** पत्रिका का सम्पादन।

विभिन्न शैक्षणिक संस्थाओं के लिये प्रयोगात्मक लेखन, भारत के विभिन्न प्रदेशों में आयोजित संस्कृत कवि सम्मेलनों एवं संगोष्ठियों में कवि एवं वक्ता के रूप में प्रस्तुति।

सेवा साधना : विभिन्न विद्यालय एवं महाविद्यालयों में शिक्षक, तदन्तर शिक्षा निदेशालय दिल्ली में संस्कृत–अधिकारी, सम्प्रति संस्कृत अकादमी, दिल्ली सरकार में सचिव के पद पर कार्यरत एवं दिल्ली शिक्षा निदेशालय में संस्कृत परामर्शक।

महादेवी ज्ञानकेन्द्र

नई दिल्ली-110049